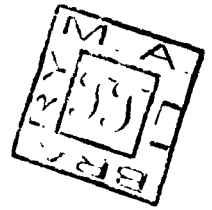




छायावादी और प्रयोगवादी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय की
द्वितीय में पीएच. डी.
उपाधि के लिए प्रस्तुत

शोध-सार



प्रस्तुत करती
श्रीमती सर्वेश कुमारी शर्मा

निर्देशक
प्रो० नजीर मौहम्मद
पीएच. डी. डी. लिट.

द्वितीय विभाग
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय अलीगढ़
1988

शोध ग्रन्थ के प्रथम अध्याय में आधुनिक कविता के उदभव और विकास के सम्बन्ध में विस्तार से विचार किया गया है। किसी भी काव्य धारा का विकास उस देश की युगीन परिस्थितियों की उपज होता है और काल की तदयुगीन राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और धार्मिक परिस्थितियाँ युगीन साहित्य की धारा के निर्धारण में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। युगीन परिस्थितियाँ स्वयं युग के सोच की स्पष्ट झलक यदि कहीं देखनी हैं तो साहित्य उसका पहला विश्व नीम साधन सिद्ध होता है। कदाचित् इसी के लिए साहित्य को समाज के दर्पण के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है। छायावादी और प्रयोगवादी काव्यधाराओं के उदभव और विकास के विभिन्न आयामों के सन्दर्भ में तदयुगीन परिस्थितियों का विश्लेषण अपेक्षित है। अतः छायावादी और प्रयोगवादी काव्यधाराओं को उनके ऐतिहासिक सन्दर्भ में समझने के लिए उक्त परिस्थितियों पर भी प्रकाश डाला गया है। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से इस ग्रन्थ को तीन भागों में विभक्त करके विवेचित किया गया है। पहले भाग में छायावादी और प्रयोगवादी काव्यधाराओं का उदभव दूसरे भाग में तदयुगीन परिस्थितियाँ और तीसरे भाग में दोनों काव्यधाराओं की ऐतिहासिक स्थिति के सन्दर्भ में सर्तक विश्लेषण से प्राप्त परिणामों के आधार पर हम कह सकते हैं कि कविता में आधुनिकता का सम्बन्ध "मध्य युगीन" वैचारिकता से भिन्न नये जीवन मूल्यों के साथ - साथ काल सापेक्ष भी है। किन्तु इसका अर्थ यह भी नहीं कि पुरातन को सर्वथा व्याज्य ही समझा जाये, सही मायने में तो "सर्व ग्रहीण तत्त्व दृष्टि के साथ विगत सांस्कृतिक समृद्धि को आत्मसात करते हुए

= = = = =

मानव की वर्तमान नियति एवं उसके भावी विकास के प्रति अपने दायित्व का विशिष्ट एवं सक्रिय अनुभव करना *¹ ही आधुनिकता का प्रमुख गुण है और * मानववादी जीवन दृष्टि उसका प्रधान और मूलआधार है ।²

इसीलिए तो * अन्याय के खिलाफ आवाज बुलन्द करना आधुनिक भाव बोध के अन्तर्गत है । आधुनिक भाव बोध के अन्तर्गत पर भी मानवता के भविष्य निर्माण के संघर्ष में हम और भी दत्त चित्त हों, तथा हम वर्तमान परिस्थितियों को सुधारे, नैतिक हास को टोक सकें उत्पीड़ित मनुष्य के साथ एकात्म होकर उसकी मुक्ति की उपाय योजना करें ।³ और इस दृष्टि से निस्सन्देह आधुनिकता की शुरुआत भारतेन्दु युग से मानी जा सकती है क्योंकि भारतेन्दु युग में राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, और सांस्कृतिक दृष्टि कोण से एक नयी जागृति, नयी चेतना और नये दृष्टिकोण ने स्थान पा लिया था और यहाँ दृष्टिकोण पूरी तरह मानव सापेक्ष था अंग्रेजों की राजनैतिक चालवाजियों, आर्थिक शोषण और साम्राज्यवादी दृष्टि कोण का न सिर्फ़ ख़ुला चित्रण ~~इस~~ समय की कविता में किया गया है अपितु उससे बचने एवं स्वाधीनता प्राप्त करने के लिए एक योजना बद्ध प्रक्रिया की शुरुआत इस युग में व्यवस्थित हो चली गयी थी । यहाँ यह भी स्पष्ट है कि सामाजिक और राष्ट्रीय दृष्टि से यह युग नयी चेतना का वाहक बना किन्तु व्यक्तिगत सन्दर्भों एवं अभिव्यक्ति के स्तर पर भारतेन्दु युग की चेतना मध्य युगीन रोमान्टिक दृष्टि से ही अधिक प्रभावित रही है । यही व्यक्तिवादी चेतना अपने विस्तृत रूप में छायावाद की धरोहर बनी तथा और अधिक गहरी होकर प्रयोगवादी काव्य में अपने चरम उत्कर्ष पर दिखाई देती है ।

= = = = =

111 डा. जगदीश गुप्ता: नयी कविता स्वस्थ और समस्यारै:

पृष्ठ: 24

121 डा. जगदीश गुप्त: नयी कविता स्वस्थ और समस्यारै

पृष्ठ: 26

131 गजानन माधव मुक्ति बोध: नयी कविता का आरम्भ संघर्ष

एवं अन्य निबन्ध : पृष्ठ: 16

काव्यधाराओं का विकास तन सम्बन्धों और तारीखों के आधार पर तय नहीं किया जा सकता, क्योंकि कोई भी काव्यधारा न किसी दिन विशेष से शुरू होती है और नहीं किसी घन्टा-मिनट विशेष पर समाप्त होती है। इस दृष्टि से छायावाद के उद्भव के विषय में 1918 से 1938 या 1918 से 1936 के समय को लक्ष्मण रेखा की तरह स्वीकार नहीं किया जा सकता कारण इससे पहले 1916 में निराला जी की जूही की कली जैसी रचना दे चुके थे। छायावाद के मूल में जो परिस्थितियाँ थी वह तो 1916 से भी पूर्व बननी शुरू हो गयी थी किन्तु उनकी व्यवस्थित प्रभाव प्रक्रिया 1918 से प्राप्त होती है और 1938 तक चलती है इस प्रकार यही समय छायावाद का माना गया है। ठीक इसी प्रकार प्रयोगवाद के ~~मूल~~ में जो परिस्थितियाँ थी वह तो 1939 से प्रभाव डालने लगी थी किन्तु पूरी गम्भीरता के साथ ये 1943 से क्रम बढ़ हुई थी अतः 1943 से 1953 तक का समय प्रयोगवादी काव्यधारा के उत्कर्ष का समय माना जाना चाहिये।

छायावादी काव्य धारा के लिए प्रयुक्त छायावादी शब्द के अर्थ के औचित्य से उस समय के कवि और आलोचक पूरी तरह परिचित नहीं थे। ऐसा ही कुछ प्रयोगवाद के साथ हुआ कि प्रयोगवाद नाम से पीछा छुड़ाने वालों के साथ यह संज्ञा जुड़ी रही और इसकी सायास घोषणा करने वाले "प्रपद्य वादी" के रूप में स्वीकार किये गये।

वस्तुतः छायावादी युग में जिस वैयक्तिक चेतना का प्रारम्भ हुआ था वह प्रयोगवाद में अपने चरम उत्कर्ष पर पहुँची। छायावाद में

=====

!!!

व्यक्ति अपने अस्तित्व की प्रतिष्ठा के लिए सकारात्मक प्रयास करने में जुटाता है और प्रयोगवाद में अस्तित्व रक्षा के लिए नकारात्मक दृष्टिकोण अपनाता है वस्तुतः दोनों ही तरीके अन्ततः वैयक्तिक चेतना के परिष्कार और प्रतिष्ठा प्राप्त करने में अभिन्न प्रयास है। जो औद्योगिकीकरण, महानगरी बोध, विज्ञान के विकास, द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान अनिश्चित भविष्य और स्वाधीनता संग्राम के कारण अस्तित्व रक्षा की अदम्य कामना के द्योतक है। अतः छायावाद और प्रयोगवाद दोनों ही काव्यधाराओं के वैयक्तिक चेतना के प्रसार और अस्तित्व की रक्षा के संगठित प्रयत्नों को सफलता पूर्वक अभिव्यक्त किया गया है। और अपनी बात को अधिक सार्थकता प्रदान करने के लिए कवियों ने विचार और अभिव्यक्ति के लिए विदेशी चिन्तन और तकनीक से भरपूर सहायता ली है।

दरअसल भारतीय साहित्य में व्यक्ति की जीवन दर्शन अंग्रेजी की व्यक्तिवादी चेतना के प्रभाव स्वल्प आया था जिसका माध्यम बना था बंगला साहित्य, व्यक्तिवादी, सोच, समाज की मूल्य मान्यताओं के स्थान पर व्यक्ति को अधिक महत्व देने का पक्षपाती है। इसलिए वह प्रत्येक क्षेत्र में समाज की रुढ़ियों का विरोध करके व्यक्ति को प्रतिष्ठित करता है। इधर भारत में इस समय की राजनैतिक और सामाजिक परिस्थितियाँ तो व्यक्ति की चेतना का स्पष्ट हनन कर ही रही थी। साहित्य में भी द्विपदी कालीन इतिवृत्त्यात्यक्ता हावी थी। इसलिए तदुत्थान कवियों ने सभी क्षेत्रों में विद्रोह कर के व्यक्ति की प्रतिष्ठा पर वल दिया जिसका साहित्यिक संस्करण है छायावाद। इसी तथ्य का सविस्तार विवेचन किया गया है। दूसरे अध्याय में।

द्वितीय अध्याय में छायावादी काव्यधारा की प्रमुख प्रवृत्तियों का विवेचन किया गया है। इस युग की प्रमुख प्रवृत्तियों में प्रकृति चित्रण प्रेम भावना, दुख वेदना और निराशा, आत्मानुभूति की अभिव्यक्ति भाषा अलंकरण एवं अभिव्यंजना शिल्प तथा रहस्य भावना को मुख्य रूप से युगीन सन्दर्भों में विश्लेषित किया गया है।

छायावादी काव्य में सामाजिक स्वाधीनता और वैयक्तिक विकास की भावना यदि एक ओर प्राचीन साहित्यिक मर्यादाओं के विशेष के रूप में प्रकट हुई है तो दूसरी ओर प्रकृति प्रेम के रूप में इन कवियों के प्रकृति प्रेम को अनेक विद्वानों ने प्रकार स्तर से देश प्रेम के रूप में चित्रित करने का प्रयास किया है लेकिन वस्तु स्थिति यह है कि तत्कालीन युवक प्रकृति की ओर प्रकृति के लिए नहीं आते पुरानी समाज व्यवस्था एवं नीति नियमों से उत्पन्न घुटन से बचने के लिए आकृष्ट हुआ। उसे प्रकृति के सर्वांग में पशु, पक्षियों, नदी, नालो, हवा, पानी, बादल, सभी में उन्मुक्त और स्वच्छन्द निरुत्क्रांता के दर्शन हुए पुरानी समाज व्यवस्था में उसकी जो वैयक्तिकता खो गयी थी उसे उसने प्रकृति में खोज लिया। इस खोज ने छायावादी कवियों को सरल रहे एक नयी जीवन दृष्टि प्रदान की है। छायावादी काव्य में प्रकृति अपने पूर्व रूप की अपेक्षा कृत अधिक व्यापक धरातल पर अभिव्यक्त हुई और उसने व्यक्ति मन की सूक्ष्मतम संवेदनाओं को मूर्त रूप प्रदान करने में अनुपम सहयोग प्रदान किया।

प्रेम मानव मन की सहज स्वाभाविक प्रवृत्ति है और काम

उसकी मूल आवश्यकता यह काम ही है जो मानव का मानव से ही नहीं अपितु सम्पूर्ण चराचर जगत से आत्मक सम्बन्ध जोड़ता है। विषम लिंग के प्रति आकर्षण जितना परमाणु जगत का सत्य है उतना ही स्त्री-पुरुष के बीच का आकर्षण व्यवहारिक जगत का सत्य है और यह सत्य छायावादी काव्य में बड़े सुन्दर ढंग से अभिव्यक्ति हुआ है।

छायावादी कवियों की प्रेम भावना में यदि एक ओर रहस्यवादी कवियों की ऐसी आलौकिकता का आभास है तो दूसरी ओर रीतकालीन कवियों की सी स्थूल रतिक्रियाओं के प्रभाव पूर्ण चित्र भी उपलब्ध हैं, किन्तु यह भी ज्ञातव्य है कि छायावादी का प्रेम दोनों से भिन्न है रहस्यवादी जहाँ प्रकृति में परमात्मका के दर्शन करता है, वहीं छायावादी प्रकृति में अपने प्रेमी या प्रेमिका के दर्शन करता है। और रीतकालीन कवि रति के जितने स्थूल चित्र खींचता है। छायावादी अपने प्रेम व्यापार को उतना ही सूक्ष्म स्तर पर अभिव्यक्त करता है।

मानव मन की मूल प्रवृत्तियों में प्रेम के वाद कल्पा ही एक ऐसी वृत्ति है जो सम्पूर्ण विश्व के मानव को एकात्मका की शिक्षा देती है प्रेम जहाँ मानव में साहचर्य को जन्म देता है वहीं कल्पा सहानुभूति को वस्तुतः साहचर्य के लिए सहानुभूति का होना परम आवश्यक है। किन्तु द्विवेदी युगीन नैतिकता ने जब नैसर्गिक अभिव्यक्तियों पर पाबन्दी लगाई तो मूल भावनाएँ भी स्व बदल कर साहित्य में अभिव्यक्त हुईं छायावादी कवियों की प्रेमिकाएँ भी काल्पनिक हैं। इसमें सन्देह नहीं कि छायावादी कवि एक असफल प्रेमी है जिसके काव्य में वेदना, निराशा और दुःख की भरमार है और इस का कारण

है बौद्ध दर्शन का छायावाद पर प्रभाव ।

बीसवीं शताब्दी में पूजावाद के विकास तथा अन्य कई कारणों से **महत्त्वपूर्ण** की शिक्षित जनता उत्तरोत्तर व्यक्तिवादी होती गयी व्यक्तिवाद के विकास से हिन्दी कविता अन्तर्मुखी हो गयी काव्य जगत का केन्द्र कवि का अहम बन गया और व्यक्तिगत अनुभूतियाँ की अभिव्यञ्जना ने ही कला का स्वस्व धारण कर लिया इस प्रकार छायावाद में आत्म परक कविता का प्रचलन हो गया कविता में सवर्ग कवि के मनोवेगों की तीव्रता उभर कर आने लगी ।

छायावाद में अस्त्यानुभूति की अभिव्यक्ति दो प्रकार से हुई है एक तो वाह्य वस्तु को अपनी भावना और विस्मय के रंग में **रँग** कर और दूसरे अपने ही सुख दुःख, आज्ञा निराशा, संघर्ष और तत्त्व चिन्तन को स्पष्ट रूप से व्यक्त करके ।

संवेदन शीलता और कल्पना जो व्यक्तिवाद के मूल तत्त्व है स्वच्छन्दतावाद में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं । छायावादी कवि के अनुभव की सीमा में जो कुछ आता है वह उस पर व्यक्तिगत कल्पना का रंग चढ़ा कर देखता है इसीलिए वह प्रत्यक्ष रूप विधान से कट कर स्मृतियाँ काल्पनिक रूप विधान में लाता है ।

भाषा में छायावादी कवियों कोमल कान्त पदावली प्रमुख स्थान

दिया भाषा की सरलता प्रवाह और लालित्य छायावाद की अपनी विशेषता है । इसका स्पष्ट कारण यह है कि भाषा के क्षेत्र में छायावादियों का स्पष्ट मुकाबला ब्रजभाषा से था । ब्रजभाषा जैसा पद लालित्य लाने के लिए छायावादी कवियों ने बंगला के पद विन्यास का अनुकरण किया । छायावादियों ने भावों के अनुस्यू भाषा के प्रयोग पर अधिक ध्यान दिया और इसके लिए उन्होंने बहुत सोच समझकर भाषा का प्रयोग किया । भाषा को लालित्यपूर्ण और प्रभाव पूर्ण बनाने के लिए इन कवियों ने पुराने तत्सम शब्द अपनाने नये तत्सम शब्द गढ़ने के अतिरिक्त लोक जीवन से शब्द चयन करने और बिल्कुल नये शब्द गढ़ने के भी सुन्दर प्रयास किये हैं । अंग्रेजी, और बंगला भाषाओं के पदों का सुन्दर छायानुवाद इस युग की प्रमुख विशेषता कही जा सकती है ।

छायावादियों के काल्पनिक सौन्दर्य बोध ने इनकी अलंकरण प्रणाली में क्रान्तिकारी परिवर्तन किये हैं मूर्त के लिए अर्था और अतीन्द्रिय उपमान इन कवियों की प्रमुख विशेषता है । उपमान ही क्या प्रतीको, विम्बों और मिथको के बड़े सुन्दर, सजीव और शिष्ट प्रयोग छायावादियों ने किये हैं । शिल्प की दृष्टि से भी छायावादियों की प्रयोगशीलता सराहनीय है ।

तृतीय अध्याय में छायावाद के प्रमुख कवियों की काव्य गत विशेषताओं का अध्ययन किया गया है । छायावाद का प्रारम्भ आचार्य शुक्ला मुकुट घर पाण्डे से मानते हैं और उसका विकास जयशंकर प्रसाद से उनका मानना है कि हिन्दी कविता में छायावादी तत्व सम्वत 1970

से पूर्व ही दीखने लग गये थे । सरस्वती आदि पत्रिकाओं में तब 1910 से ही बंगला कविताओं के हिन्दी अनुवाद निकलने लगे थे । बंगला ही नहीं ग्रे वर्दस्वरी आदि अंग्रेजी कवियों की कविताओं के भी कुछ अनुवाद इस पुग में निकले कविता में अंग्रेजी के ढंग पर चली हुई बंगला कविताओं से प्रभा-
 पित कुछ साक्षणिक वैचित्र व्यंजक चित्र विन्यास और कल्पना प्रधान चित्र-
 लय वस्तु विन्यास अनूठे चित्रों से चित्रमयी व्यंजक भाषा में रहस्य भावना
 से युक्त अनेक फुटकर गीत मुक्तक हिन्दी में भी दिखाई देने लगे । और ये
 प्रवृत्तियाँ जिनमें कल्पना की प्रधानता रहती थी श्री मुकुट पर पाण्डेय
 की कविता में स्पष्ट परिलक्षित होती ह ।

यही प्रवृत्तियाँ कल्पस्थित और परिष्कृत रूप में जयकर प्रसाद
 के लघु का अंग बनी और उनकी मधुमयी प्रतिभा तथा अलङ्कार भावुकता
 का संस्पर्श पाकर अत्यन्त प्रौढ़ रूप में मुखरित हुई । ध्वन्यात्मकता साक्ष-
 णिकता, सौन्दर्य मय प्रतीक विधान उपचार यज्ञता तथा दुःख और वेदना
 छायावाद की सभी विशेषताएँ प्रसाद जी में अपने चरम उत्कर्ष पर दिखाई
 देती है ।

पन्त अपनी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति के कारण कृत्तिवाद
 विचार या भाषा से बंधकर नहीं रहे उनके अनुसार " कविता प्राणी का
 संगीत है और छन्द हृदय की कम्पन कविता का स्वाभाव ही छन्द में
 लय होना है । " छायावाद के आन्दोलन में पंत पूरी तरह छायावाद
 के रंग में रंगे प्रगतिवादी आन्दोलन के साथ वे प्रगतिवादी कलाने के मोह

=====

॥॥ सुमित्रानन्दन पंतः पत्रिका प्रवेश। पृष्ठः 33

रोजी रोटी मजदूर किसान के चित्रण की ओर उन्मुख होकर जमीन पर लौटे किन्तु वहाँ दाल गलने पर पुनः उनकी कल्पना की चिड़िया यथार्थ की ठोस जमीन को छोड़कर कल्पना के आक्रोश में उड़ गयी । पंत जी प्रसाद की तरह दार्शनिक मत वादों से प्रभावित रहे हैं और उनके दार्शनिक विचारों को अद्वैत वाद के सम्बन्ध में समझा जा सकता है ।

छायावादी काव्यधारा में सभी बन्धनों को अस्वीकार करके चलने वाले कवि निराला हैं । चाहे सामाजिक बन्धन हो या फिर काव्य के बन्धन निराला भी एक ही छेनी से सबको काटते छँटते एक नयी आकृति नया स्थाकार देते चलते हैं आदर्श और यथार्थ का ऐसा सुन्दर सम्बन्ध किसी भी अन्य छायावादी कवि की कविताओं में नहीं देखने को मिलता जूही की कली सरोज स्मृति और वह तौड़ती पत्थर नारी के प्रति तीन आला अलग अलग धरातलों की संवेदना है जो उनकी अपनी विशेषता है , भिक्षु, कुरुर भुक्ता, और राम की शक्ति पूजा जैसी कविताएँ निराला को महा प्राण की गरिमा से गौरवान्वित करती हैं शिल्प और क्लृप्त दोनों ही दृष्टियों से यह कविताएँ उन्हें न सिर्फ छायावाद का एक समर्थ सशक्ति और मूर्धन्य कवि घोषित करती हैं अपितु अगले काव्य आन्दोलनों के प्ररोध के रूप में भी निराला जी के कृतित्व को उभारती हैं ।

निराला जी ने क्लृप्त और शिल्प के क्षेत्र में जहाँ नवीन प्रयोग किये हैं वही दर्शन के क्षेत्र में अद्वैतवाद के बेदान्ती स्वस्व को ग्रहण करने के कारण उनकी रहस्यात्मक रचनाओं ने भारतीय दर्शन के

निस्वयं की झलक- झलक मिलती है ।

छायावाद के चौथे आधार स्तम्भ के रूप में महादेवी वर्मा को जाना जाता है छायावाद के चारों आधार स्तम्भों की अपनी अपनी विशेषताएँ हैं जिनमें महादेवी की प्रमुख विशेषता है उनके कवि का अध्यात्म से अधिक दर्शन के क्षेत्र का ऋणी होना । उनकी इसी धारणा के कारण उनके काव्य में रहस्य भावना का महत्वपूर्ण हो उठी है । यह चित्रण बृहम की अभिव्यक्ति में भी रहस्यमयी ही हो गयी । इस बृहम के साथ आत्मा-नुभूति के माध्यम से व्यक्तिगत सुख दुखों की अभिव्यक्ति उस रहस्य को और गहरा बना देती है । नैहहार, रश्मि, निरिजा, यामा, आदि सभी कृतियों में महादेवी जी का यही स्वर मुखरित हुआ है ।

प्रसाद, पन्त, निराला और महादेवी वर्मा की इस चतुरावदी के बाद छायावादी कविता में एक और महत्वपूर्ण नाम है और वह है डा. रामकुमार वर्मा का । वर्मा जी ने भी कविताओं में चाहे वह अंजलि, अभिशप, निर्णय हो या स्वणार्थ और चित्ररेखा सभी में छायावादी काव्य की प्रमुख विशेषता अपने उत्कर्ष पर दृष्टि गोचर होती है ।

छायावादी और प्रयोगवादी काव्यधाराओं के तुलनात्मक अध्ययन से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि प्रयोगवाद प्रस्तुतः छायावाद का ही विकसित रूप है छायावादी काव्य की प्रवृत्तियाँ प्रयोगवाद में अपने चरम उत्कर्ष पर पहुँच गयी थी अन्तर केवल इतना है कि छायावादी कवि अपने अभिप्रेत विषय को मर्यादा और शील के एक

आवरण में ढक कर प्रस्तुत करता है और प्रयोगवाद में इन प्रवृत्तियों का अतिवादी और विकृत रूप भी देखने में आता है अतः चतुर्थ अध्याय में प्रयोगवाद की मूल प्रवृत्तियों के स्पष्टीकरण का प्रयास किया गया है। व्यक्तिवाद स्व के प्रति ममत्व, रागहीन बौद्धिकता, निरोषीकरण, दमित वातनाएँ, योन वर्जनाएँ, उपमानों की नवीनता, नये प्रतीक, छन्द गत प्रवृत्तियाँ भाषागत प्रवृत्तियाँ आदि प्रयोगवादी काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ हैं।

छायावाद की वैयक्तिकता का क्रमशः विकास हुआ और प्रयोगवाद में आकर यह प्रवृत्ति कविता में "एक्स्ट्रा पर्सनल" होकर अभिव्यक्त हुई और इसके मूल में थी प्रयोगवादी कवि की एक प्रमुख विशेषता उसकी विशेषीकरण की प्रवृत्ति प्रयोगवादी वाद जन जीवन की छोटी से छोटी वस्तु घटना आदि को निषेधस्थानधारण और अत्यन्त महत्वपूर्ण मानकर ग्रहण करता है बात चाहे कवि की अपनी प्रेमिका की हो या अखिल विश्व के किसी कौने में घटी छोटी से छोटी घटना की सभी कुछ प्रयोगवादी कवि के लिए अत्यन्त महत्व का विषय बन जाती है। प्रयोगवादी कवि के लिए कथन का चमत्कार वस्तु के चमत्कार से महान बन जाता है। यही कारण है कि उसकी कविताओं में पदार्थ के प्रति एक रागात्मक आकर्षण के स्थान बौद्धिक लगाव अधिक रहता है। रागात्मकता जहाँ अभिव्यक्त की हुई है तो कवि के मैं के साथ सम्बद्ध होकर ही व्यक्त हो सकी है।

अपने स्व के प्रति संवेतनता और जागरूकता प्रयोगवादी कवि की

प्रमुख विशेषता रही है यहाँ कोई घटना ही नहीं छोटे से छोटा खटका भी उसे अहं के विखरने की आशंका से डेढ़े लित कर देता है । समूची दुनियाँ को वह एक जैल के रूप में देखता है, सारे धर्म नीतियाँ परम्पराएँ, मायाँदाएँ उसे अपने में जकड़ लेने वाली श्रृंखलाएँ नजर आती हैं और इतना सोचने मात्र से ही वह अकुलाने घबड़ाने लगता है । एक अजीब सी विवशता की अनुभूति करता हुआ निराशय के गहन अंधकार में डूब जाता है । और यही से शुरू होता है कुण्ठा, घुटन, संत्रास, निराशा और पीड़ा बोध का एक अटूट क्रम जिसके लिए निस्तन्देश कवि का अकर्मण्य चिन्तन ही उत्तर दली है । अपने अन्तरवृत्त में धिरे हुए इस कवि की रागात्मक संवेदनाएँ सूख गयी है और बौद्धिक रेत ने उनको दवा लिया है वह अपनी चिन्तओं से नितान्त डरा हुआ और अनुभूतों से छला गया है कि जीवन की सभी रागात्मक अनुभूतियाँ उसे विकृत लगती है ।

यही घुटन संत्रास और पीड़ा बोधा के पेम के क्षेत्र में काम कुण्ठाओं और योन वर्त्तनाओं के रूप में अभिव्यक्त हुआ है । वह कभी अपने कुंठ वीर्य की पुकार सुनाता है, कभी किसी की पीठ पर लिंगस्त खड़ा कर देने को उतावला हो उठता है तो कभी किसी कानमेही वीर्य-पात कर देना चाहता है वहरहाल प्रेम उसके लिए कोई भावना नहीं मात्र सहवास है, " मास में जर्ज गढ़ाना है मांस से मांस की छेती बढ़ाना है "। शान्ता सिन्हा भी मेहमानों को स्तनों की बढ़ती नरधियों का वास्ता दिला कर रातभर उँगलियों मुनासिब बेरहमी चाहती है । और भारती जी की प्रेमिका नायक को जकड़ के पकड़ लेती है ।

= = ===== = = = = = = = = = = = = = = = =====

॥॥ विष्णु रश्मि: नारी के अन्ये शहर में : पृष्ठ: 67

कव्य के साथ-साथ शिल्प के क्षेत्र में भी प्रयोगवाद में नये साधनों के अपनारे जाने पर विशेष बल दिखाई देते हैं। उपमानों के क्षेत्र में यह नवीन प्रकृति से चुने गये उपमानों की अपेक्षाकृत अस्थिर उपमान चुनने में अधिक दिखाई देती है हुस्नके लिए कोका कोला, चाँदनी के लिए खया आदि ऐसे ही उपमान हैं। प्रकृति के क्षेत्र से चुने गये उपमानों में कलगी छरहरी बाजरे की ओर हरी विछली घास जैसे उपमान सटीकका पैड़ है यह नवीनता इन कवियों की व्यवहारिक जाल के प्रति सूक्ष्म दृष्टि का ही परिणाम है।

प्रयोगवादी काव्य में ग्रहीत प्रतीक उसकी अपनी अलग मुहावरे दारी को स्पष्ट करते हैं। प्रयोगवादी कवि कव्य के बदलते स्तरों को पुराने प्रतीकों में अभिव्यक्त करने की असमर्थता से परिचित है इसलिए उसने प्रतीक भी नये चुने हैं। यह प्रतीक जहाँ नये पन को उभारने में सहायक हैं वहीं अनेक स्थलों पर दुष्ट भी कि सर्वथा ऐसा नहीं है अधिकतर प्रयोगवादी कविता ने शिल्प के क्षेत्र में नये धरातल विकसित किये हैं।

नवीनता की दौड़ ने प्रयोगवाद में कविता के छन्द विधान को भी प्रभावित किया है और कविता छन्द की पग डाँडियों से इतनी दूर आ गयी है कि वह स्वयं के लिए ही अजबानी बन गयी है। कविता में गद्यात्मकता एक विशेषता के रूप में मानी जाती रही है। किन्तु प्रयोगवाद में कविता संवादात्मकता और गद्यात्मकता के स्थान पर स्वयं गद्य और संवाद बन कर रह गयी है। लेकिन प्रयोगवाद में एक वर्ग ऐसा भी

=====

|||

T 3681

है जिससे कविताओं में एक गति है लय है रिदम है और यति से संबद्ध है ।

भाषा की दृष्टि से भी प्रयोगवाद में नये कथ्य और भावों के अनुस्यू भाषा को परिष्कृति करने का प्रयास बराबर किया जाता रहा है जहाँ एक ओर संस्कृत की भारी भरकम शब्दावली को ग्रहण किया गया है वहीं दूसरी ओर अंग्रेजी, बंगला, अरबी, फारसी आदि भाषाओं से भी शब्द ग्रहण किये गये हैं । आत्मा, ईश्वर, ऋषा, स्त्रोत्र, चिन्मय, पुराण मंत्रोच्चारण, शैव, वैष्णव, प्रकृति और पुष्प जैसे शब्द जहाँ संस्कृत की दार्शनिक शब्दावली से लिये गये हैं वहीं पूर्णिमा, सुपर फास्फैट, पौस्ट मार्टम, चैम्बर, प्रूफ टानिक हैजर, कैप्सूल, आदि शब्द अंग्रेजी से भी ग्रहीत हैं । इनके साथ ही कवियों ने अनेक शब्द स्वयं भी गढ़े हैं और अनेक शब्दों में नये अर्थ भरने का प्रयास भी किया है । वस्तुतः प्रयोगवादी काव्य में काव्य और शिल्प दोनों ही स्तरों पर नवीनता की खोज और प्रयोगशीलता के लिए कवि निरन्तर प्रयत्नशील दिखाई देता है ।

पंचम अध्याय में प्रयोगवादी काव्यकारा के प्रमुख कवियों और उनकी काव्यागत प्रवृत्तियों का निरूपण किया गया है । प्रयोगवादी कवियों में प्रमुख/प्रयोगवाद के व्यक्तित्व जन्मदाता अज्ञेय से लेकर रघुवीर तहाय, प्रयाग नारायण त्रिपाठी, मदनवात्स्यायन, मुक्तिबोध, भारतभूषण, अग्रवाल, गिरिजा कुमार माथुर, नरेश मेहता, धर्मवीर भारती, नेमिचन्द्र जैन, केदार नाथ सिंह और केशरी कुमार मेहता की काव्यागत विशेषताओं और उनके दृष्टिकोण का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया गया है ।

अज्ञेय प्रयोगवादी काव्यधारा के सुरोधा के रूप में जाने जाते हैं उनकी कविताओं में प्रयोगवादी कविता का समस्त विशेषकर सघीर्षता हुई है यहाँ वैयक्तिक कविता की कुंठा, घुटन निराशा और पीड़ा हो या फिर नवीनता के लिए मोह सभी को अज्ञेय के काव्य में बाजी मिली है। उनके काव्य में प्रेम के नाम पर कोरी योन वर्जनाएँ भी हैं और प्रेम का स्वस्थ रूप भी।

रघुवीर सहाय और प्रयागनारायण त्रिपाठी की कविताओं में सामाजिक यथार्थ को बाजी मिली है। तो मदन वात्स्यायन की कविताओं में वैज्ञानिक बोध और उसके अच्छे-बुरे परिणामों की मिश्रित किन्तु सुन्दर परिणति हुई है। व्यक्ति बोध में भीतर और बाहर के संघर्ष की नीच देजिडी की अभिव्यक्ति है तो भारत भूषण अग्रवाल सामाजिक यथार्थ के चित्रण में विशेष सफल हुए हैं, गिरजा कुमार माथुर, नरेश मेहता और भारती ने एक और जहाँ प्रेम की मामूर्कस्थितियों के अत्यन्त सन्तुलित और स्वस्थ चित्र अंकित वहीं दूसरी ओर सामाजिक यथार्थ की भी स्वस्थ सन्तुलित अभिव्यक्ति मिलती है नेमिचन्द्र जैन और केतरी कुमार में व्यक्तिगत और सामाजिक भावनाओं के मिश्रित स्वर प्रस्फुटित हुए हैं और केदार नाथ सिंह ने अनेक काव्यशास्त्रीय मान्यताओं की पुनः प्रतिष्ठा का सराहनीय प्रयास किया है हासकर विम्ब धर्मी मानसिकता और सपाट वयानी के लिए केदार नाथ सिंह प्रयोगवादी कवियों में अपना अलग और विशिष्ट स्थान रखते हैं।

छठे अध्याय में छायावादी और प्रयोगवादी काव्यधाराओं के

वैषम्य मूलक तत्त्वों को विश्लेषित किया गया है। छायावादी और प्रयोगवादी दोनों काव्यधाराओं के विस्तृत विवेचन से यह तो स्पष्ट है कि छायावादी और प्रयोगवादी काव्यधाराएँ कालक्रम के दो अलग-अलग खंडों में विकसित हुईं। दोनों ही काव्य खंडों की अपनी अपनी अलग परिस्थितियाँ थीं। जिनके प्रभाव के परिणामस्वरूप यह काव्यधाराएँ प्रत्येक विशेषताओं से समृद्ध हैं। छायावादी कविता ने जिस व्यक्तिवादी परिवेश में जन्म लिया था प्रयोगवादी कविता उसके ठीक विपरीत त्यागवादी और साम्राज्यवाद के संघर्ष के युग में पैदा हुई। वह प्रगतिवादी कविता साम्यवाद की भी देन नहीं है इसके पीछे पूँजीवादी ~~और~~ साम्यवाद के संघर्ष से उदभूत अस्तित्ववादी दर्शन है। छायावादी कविता तक अपने युग की परिस्थितियाँ और देशी चिन्तन कवि के सहयोगी थे किन्तु प्रयोगवादी कविता ने विश्व चिन्तन और विश्व की परिस्थितियाँ ने भी कवियों को प्रभावित किया है। यद्यपि छायावादी कविता भी व्यापक मानवतावाद में विश्वास करती है तथा प्रयोगवादी कविता का मानवतावाद उससे सखी भिन्न है। छायावादी मानवता में कवि विश्व मानव को व्यक्ति की दृष्टि से देखता है जब कि प्रयोगवादी मानवता इसके ठीक विपरीत है उसमें एक व्यापक सार्वभौमिक दृष्टि से व्यक्ति को देखा जाता है। वस्तुतः छायावाद राष्ट्रीयता के निकट बढ़ता है तो प्रयोगवाद राष्ट्रीय बनने से पहले ही अन्तर्राष्ट्रीयता के खोल में ढककर प्रस्तुत किया जाता है। यही कारण है कि प्रयोगवाद में कविता पश्चिमी सभ्यता की नकल करते हुए अंधी गलियों में भटकने लगी।

छायावादी और प्रयोगवादी काव्यधाराओं में वैषम्य का दूसरा आधार भूत तत्त्व है राजनीति । छायावादी कवि जहाँ राजनीति और समाज से भाग कर प्रकृति में शांति खोजता है वहीं प्रयोगवादी कवि कहीं समाज और राजनीति से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ा दिखाई देता है ।

छायावादी कविता जिस सांस्कृतिक धरातल पर खड़ी थी प्रयोगवादी कविता उससे भिन्न मशीनी सांस्कृति पर खड़ी है अज्ञेय ने इसी तथ्य को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि " साहित्य की कला जो गरीबी से दूर कभी नहीं रही कभी गदीली और झुक्त थी लेकिन आज हम देखते हैं कि वह बंदिनी है और व्यभिचार के लिए मजबूर है । जबकि विज्ञापन बाजों की चुनी हुई एक नटिनी मिस लिटरेचर उसका स्वाँग कर रही है। "। और इस सबका कारण है बढ़ता हुआ मशीनी युग ।

छायावाद में व्यक्ति स्वातन्त्र्य पर बल देने का अर्थ वाह्य आरोपित । विदेशी । बन्धनों से मुक्ति के निटक था, जबकि प्रयोगवाद में यही व्यक्ति की आन्तरिक स्वतन्त्रता का हावी दिखाई देता है । इसी लिए छायावादी और प्रयोगवादी काव्य धाराओं की विषय बहुतों में भी अन्तर आ गया है । छायावादी कवि जहाँ प्रेम, वेदना, प्रकृति, रहस्यभावना को अपने काव्य का विषय बनाता है वहीं प्रयोगवादी कवि जीवन और जात के यथार्थ, विरोधाभास, वैज्ञानिक मान्यताओं और खोजों को अपना विषय बनाता है और अपने कव्य को विना किसी रोमान्टिक आवरण के सीधे- सीधे अभिव्यक्त कर देता है ।

= = = = =

॥॥ अज्ञेय: त्रिशूकः संस्कृति और परिस्थितियाँ: पृष्ठ:22

कव्य के साथ साथ शिल्प के भी अनेक स्तरों पर दोनों काव्य-धाराओं में पर्याप्त वैषम्य दिखाई देता है । छायावादी कविताएँ जहाँ प्रमुख रूप से गीतों पर आश्रित हैं वहीं प्रयोगवादी कविता गद्य के अति निकट है । फलतः छायावादी कविता में अभिव्यक्ति यदि भावमय है तो प्रयोगवादी कविता में तकनीक पर अधिक ध्यान दिया गया है एवं भाषा के क्षेत्र में छायावादी काव्य की बजाय प्रयोगवाद में अधिक विविधता और नवीनता है । प्रयोगवादी महसूस करते हैं कि " काव्यभाषा में अर्थ वहन की क्षमता की कमी कवि को प्रयोगशीलता की ओर प्रेरित करती है और प्रयोगों का सम्पादन भाषा के जटिल रूप को प्रस्तुत करता है । "। इसी कारण प्रयोगवाद के भाषा की जटिलता काफी हद तक है मगर गिरिजा कुमार माझु, धर्मवीर भारती, एवं भारत भूषण अग्रवाल जैसे अनेक कवियों की कविताओं भाषा, सहज, सरल और अर्थ गाम्भीर्य की बाहिका के रूप में ही अपनाई गयी है ।

छायावादी और प्रयोगवादी कविताओं में जहाँ वैषम्य के तत्त्व दिखाई देते हैं वहीं उनमें आपसी साध्य के अनेक आधार भूत तत्त्व हैं जो उन्हें एक दूसरे से सम्बद्ध करते हैं । प्रयोगवादी कविता में छायावाद की प्रमुख प्रवृत्तियों का निस्पण कुछ इस प्रकार दिखाई देता है कि वह छायावाद का विकसित स्वरूप ही दिखाई देता है । दोनों काव्यधाराओं के साध्य मूलक तत्त्वों का विवेचन किया गया है । सप्तम अध्याय में ।

=====

!!! अन्तः : दूसरा सप्तक : पृष्ठ: 12

छायावादी और प्रयोगवादी काव्य धाराओं के व्यापक विवेचन से यह स्वतः स्पष्ट है कि ये दोनों ही काव्यधाराएँ मूलतः व्यक्तिवादी चेतना को अपने अन्तर में समेटे हुए विकसित हुई हैं। फलतः दोनों ही काव्यधाराएँ नवीनता की ओर झुकी हुई हैं, काम भावना प्रधान निराशावादी और कुण्ठा ग्रस्त हैं।

व्यक्ति जब महत्वपूर्ण हो जाता है तो सामाजिक मान्यताएँ एवं मर्यादाएँ टूट शिथिल हो जाती हैं छायावाद में यह यदि शिथिल हुई है तो प्रयोगवाद में आकर बिल्कुल टूट गयी है। व्यक्तिगत चाहत में सर्वाधिक महत्व काम वासनाओं का है यही कारण है कि सम्पूर्ण छायावादी काव्या प्रेम का काव्य आधार बन कर रह गया है। छायावाद में कवि की सारी शक्ति द्वि-वेदी युगीन वर्जनाओं के विरुद्ध विद्रोह में लगी है किन्तु विद्रोह का यह स्वर बड़ी शालीनता से व्यक्त हुआ है, जब कि प्रयोगवादी अज्ञेय को धरती आकाश पृथ्वी बादल के नीचे पड़ी रात्रि श्रोता की भीगी योनि जैसी दिखाई देती है।

इन कवियों की प्रेमभावना में जैसी समानता है वैसी ही समानता इनकी निराशा में है और दोनों ही अपनी चाहत के अधूरेपन में कुण्ठा ग्रस्त हो जाते हैं। किन्तु छायावादी कवि की कुण्ठा यदि उसे पलायनवादी बनाती है तो प्रयोगवादी कुण्ठा ग्रस्त होकर और अधिक यथार्थवादी बन जाता है। एक सिसकता है तो दूसरा चीखता है वहरहाल दोनों ही एक जैसी वेदना में जी रहे हैं।

अभिव्यक्ति के क्षेत्र में दोनों ही आन्दोलनों के कवि नये साधन तलाशते हैं और शिल्प के क्षेत्र में विद्रोह करते हैं ।

प्रयोगवादी कवियों में गीतो की कोमलता भी छायावादी कवियों की गीतात्मक कोमलता के निकट पड़ती है । शिल्प के अन्य उप-दानों उपमान, प्रतीक, विम्ब, आदि में भी दोनों ही काव्यधाराओं के कवि नवीनता के पक्षपाती रहे हैं । तथा भाषा के स्तर पर भी शब्द यमन, वाक्य विन्यास एवं पदावली आदि परिस्परिक काव्यधाराओं से पृथक और भावानु-स्य हैं वहीं नये शब्द गढ़ने और नये क्षेत्रों से शब्द ग्रहण करने में दोनों की प्रवृत्तियाँ समान हैं दोनों ही काव्यधाराओं पर भाषा एवं शैली के क्षेत्र में विदेशी काव्यधाराओं का प्रभाव भी स्पष्ट परिलक्षित होता है ।

अष्टम अध्याय में छायावादी और प्रयोगवादी काव्यधाराओं में वैषम्य के प्रमुख कारणों का विवेचन प्रस्तुत किया गया है । छायावादी और प्रयोगवादी काव्यधाराओं के अध्ययन से दोनों में वैषम्य के अनेक आधार भूत तत्त्व दिखाई देते हैं जो वस्तुतः दोनों काव्यधाराओं की पृष्ठ भूमि में निहित तदयुगीन सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और धार्मिक पृष्ठ भूमियों में हुए परिवर्तन के कारण हैं । छायावादी काव्य प्रथम विश्व युद्ध के बाद भी कविता है :- प्रथम विश्व युद्ध ने युग की चेतना को बहुत गहरे तक झकझोरा है किन्तु विश्वयुद्ध की अपेक्षा कृत तदयुगीन भारतीय स्वाधीनता संग्राम और साहित्यिक क्षेत्र में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी की नीतियों का छायावाद पर व्यापक प्रभाव

पड़ा है जबकि प्रयोगवाद की पृष्ठ भूमि में दूसरे विश्व युद्ध के बाद उत्पन्न परिस्थितियों का योग है। इन परिस्थितियों ने व्यक्ति के अस्तित्व को जो खतरा पैदा किया था उसकी प्रतिक्रिया स्वस्थ प्रयोगवाद में अस्तित्व रक्षा के लिए विद्रोह का स्वर मुखरित हुआ।

परिस्थितियों के बदलने के कारण छायावाद और प्रयोगवाद की जीवन दृष्टि में भी पर्याप्त अन्तर है। जहाँ छायावाद व्यक्तिवादी जीवन दृष्टि से आप्लाखित है वहीं प्रयोगवाद में अस्तित्ववादी जीवन दर्शन की धारा प्रवाहित होती दिखाई देती है। परिमाणतः एक अस्तित्व की प्रतिष्ठा के उद्यत है तो दूसरा अस्तित्व सुरक्षा के लिए चिन्तित दिखाई देता है। यही कारण है कि छायावाद में अस्तित्व की प्रतिष्ठा बड़े सहज सरल और शील युक्त ढंग से रहकर की जाने का प्रयास दिखाई देता है तो प्रयोगवाद में अस्तित्व की रक्षा को भाषना काव्यों के विद्रोह को आक्रामक की सीमा तक ले जाती है और सारे शील को ताक पर रखकर कवि मात्र अपने दृष्टिगत विषय को व्यक्त करने में विश्वास करता है चाहे वह कितना भी निकृष्ट और धिनौना क्यों न हो।

विज्ञान का प्रभाव एक अन्य कारण है जो प्रयोगवादी काव्य-धाराओं छायावाद से भिन्न धरातल पर प्रतिष्ठित करता है। छायावादी काव्य में मशीन युग की टेजिडी न के बराबर व्यक्त हुई है जब कि प्रयोगवाद में आकर इस मशीनी सम्पत्ता ने जीवन के छोटे से छोटे हिस्से को भी प्रभावित किया है। महा नगरीय बोध, और औद्योगिकीकरण ने जीवन में

एक स्पष्टता और व्यस्तता पैदा की है जो घुटन और ऊब के रूप में कविता में व्यक्त हुई। विज्ञान ने एक प्रमुख प्रवृत्ति को जन्म दिया है वह वैज्ञानिक बोध अर्थात् सतर्क शि्लेष्ण की पद्धति और इस पद्धति ने पूर्व प्रचलित परम्पराओं की सराहनीयता को उजागर किया जो इस युग में कवि की घबहाहट अनिश्चय और कुंठा का महत्वपूर्ण कारण बनी है।

इस सबके बावजूद दोनों ही काव्यधाराओं में साभ्य अनेक आधार दिखाई देते हैं और उनका कारण है दोनों ही काव्यधाराओं की मूलभूत परिस्थितियों के कारणों की समानता इसी तथ्य का अध्ययन शोध ग्रन्थ के नवम् अध्याय में किया गया है।

छायावादी और प्रयोगवादी दोनों ही काव्यधाराओं के मूल में विश्व युद्धों की पृष्ठ भूमि रही है अतः विश्व युद्ध के बाद उत्पन्न होने वाली परिस्थितियाँ भी दोनों में काफी हद तक समान हैं।

दोनों ही काव्यधाराएँ अपने पूर्ववर्ती काव्यान्दोलनों से प्रतिक्रिया स्वस्व उत्पन्न हुए छायावाद द्विषेदी युगीन इतिवृत्तात्मकता और नैतिकदबाव की प्रतिक्रिया से उत्पन्न हुआ और प्रयोगवाद प्रगतिवाद की अतिवादिता का नतीजा था अतः दोनों की प्रतिक्रिया अनेक धरातलों पर समान दिखाई देती है।

छायावाद और प्रयोगवाद दोनों ही काव्यधाराओं का अन्त श्री एक ही प्रकार अर्थात् कुंठा, अति यथार्थ और अतिवादी प्रवृत्तियों के परिणाम स्वस्व हुआ।

दोनों ही काव्यधाराओं में निराशा, एवं प्रेम की प्रवृत्तियों ने प्रमुखता से स्थान पाया है। तथा दोनों ही काव्यधाराओं में यौन वर्जनार्थ श्रेष्ठ बदल कर अभिव्यक्त हुई हैं।

प्रयोगवादी और छायावादी दोनों ही काव्यधाराओं में अभिव्यक्ति के साधनों को भी पारस्परिक रूप से भिन्न स्तर पर ग्रहीत किया गया है। दोनों में नवीनता के प्रति मोह स्पष्ट दिखायी देता है।

एक और महत्वपूर्ण कारण यह है कि दोनों ही काव्यान्दोलनों विदेशी प्रभाव से व्यापक स्तर पर प्रभावित हैं छायावादी काव्यधाराएँ में जहाँ यह प्रभाव बंगला के माध्यम से होकर पड़ा है वहीं प्रयोगवादी कवियों ने स्वयं अंग्रेजी कवि और समीक्षकों के ग्रन्थों का अध्ययन कर काव्य और शिल्प दोनों के स्तर पर स्वयं सीधे प्रभाव ग्रहण किया है।

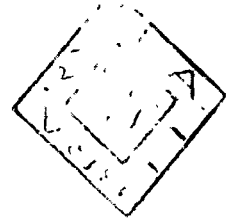
इस प्रकार उपरोक्त विवेचन के आधार पर यह स्पष्ट है कि छायावादी और प्रयोगवादी काव्य धाराओं की प्रवृत्तियों में बहुत गहराई तक समानता है यहाँ तक कि प्रयोगवादी काव्यधाराओं छायावादी कविता का चरम उत्कर्ष दिखाई देती हैं। प्रयोगवादी और छायावादी काव्यधाराओं में जो वैषम्य दिखाई देता है वे मूलतः विकास के स्तरों का ही अन्तर है। जो दोनों काव्यधाराओं की परिस्थितियों के क्रमिक विकास का ही सख्त परिणाम है।



छायावादी और प्रयोगवादी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय की
हिन्दी में पीएच. डी.
उपाधि के लिए प्रस्तुत

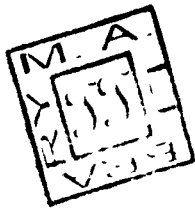
शोध-प्रबन्ध



प्रस्तुत करती
श्रीमती सर्वेश कुमारी शर्मा

निर्देशक
प्रो० नजीर मौहम्मद
पीएच. डी. डी. लिट.

हिन्दी विभाग
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय अलीगढ़
1988



THESIS SECTION



T3681

=====

भूमिका

=====

प्रस्तावना

विषय-प्रवेश

विषय की सीमा

उपलब्ध सामग्री

शोध का दृष्टिकोण

शोध का स्वल्प और उपलब्धियाँ ।

भूमिका

=====

छायावाद और प्रयोगवाद के सम्बन्ध में अक्सर मैं सोचती रही हूँ कि आखिर वे कौन से तन्तु हैं जो इन दोनों को आपस में जोड़ते हैं। मैं जब एम. ए. उत्तरार्ध की छात्रा थी तो सुना करती थी कि प्रत्येक नवीन काव्य धारा के बीच पिछली पुरानी काव्य धारा में होते हैं। पुरातन पर ही नवीन का भ्रम उड़ा होता है। डॉ. अगीक शर्मा जो हमें नई कविता पढ़ाते थे, का यह कथन मुझे सिद्धान्ततः मान्य लगता था। किन्तु छायावाद और नई कविता के बीच साध्य का वह आधार तत्त्व मुझे नहीं मिलता था जिससे इस बात की सार्थकता सिद्ध हो सकती। इस समय इतना अवकाश भी नहीं था कि और प्रश्न पत्रों की तैयारी छोड़कर मैं इसी बात में अपना पूरा समय लगा देती। एम. ए. करने के उपरान्त जब मैं बी. एड. कर चुकी तो पी. एच. डी. करने का विचार बना। मैं अपनी इस इच्छा को लेकर अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डॉ. नजीर मुहम्मद के पास गई तो उनसे मुझे अपनी रुचि का कोई विषय तोय कर लाने को कहा। जब शोध विषय की बात आयी और वह भी अपनी रुचि तो मेरे मस्तिष्क में पुनः वही प्रश्न काँध गया जो प्रायः मेरे लिये अनुत्तरित रह जाता था। मैंने अपनी जिज्ञासा जब श्रेय डॉ. नजीर मुहम्मद साहब को बताई तो उनसे मेरी जिज्ञासा को बढ़ावा देते हुए मुझे छायावादी और प्रयोगवादी काव्य धाराओं का तुलनात्मक अध्ययन करने की प्रेरणा दी। और इस प्रकार यही मेरे शोध का विषय भी बन गया।

छायावाद और प्रयोगवादी काव्य में केवल रूप और शिल्प

की दृष्टि से अन्तर नहीं है अपितु दोनों की भाव और विचार धारा में भी पर्याप्त अन्तर है। छायावादी काव्य की भाषा अगर कोमल कान्त बटावली वाली है तो प्रयोगवाद की भाषा दार्शनिक, विचार पूर्ण और भारी भ्रूकम है। हम की दृष्टि से भी छायावादी काव्य जहाँ गीत प्रधान है वहीं प्रयोगवादी काव्य गद्यात्मक है। एक भाव प्रधान काव्य धारा है तो दूसरा विचार प्रधान काव्यान्दोलन। कहना न होगा कि दोनों ही भारत की प्रमुख भाषा हिन्दी के काव्यान्दोलन हैं। दोनों काव्यधाराओं के अन्तर इतने स्पष्ट हैं कि यहाँ उनके विस्तार में जाना समीचीन नहीं लगता। फिर भी योंदे तौर पर छायावाद और प्रयोगवाद के दार्शनिक आधारों में पर्याप्त अन्तर है।

पहले के मूल में यदि व्यक्तिवादी विचारधारा थी तो दूसरे के मूल में अस्ति-त्ववादी जीवन-दर्शन। एक स्पष्ट अन्तर इन दोनों में और भी है कि छायावादी कवि जहाँ अपनी अनुभूति को अभिव्यक्त करने के लिए अपने भावुक हृदय के आगे विवश है, वहाँ प्रयोगवादी कवि इतना विवश नहीं लगता। छायावादी कवि का उद्देश्य जहाँ अपने मन को अभिव्यक्ति देना लगता है, वहीं प्रयोगवादी कवि का उद्देश्य अपने को स्थापित करना तथा पाठकों को चमत्कृत करना लगता है। उसकी अभिव्यक्ति में वह सान्द्रता नहीं जो छायावादी कवि की अभिव्यक्ति में है। जो भी हो, उद्देश्य और आधार दोनों ही दृष्टियों से ये काव्यधाराएँ परस्पर विरोधी सी लगती हैं। ऐसी स्थिति में इनमें साम्य की खोज मुझे दुष्कर और अतर्क्य सही ही लगने लगी। किन्तु इन दोनों में आपसी सम्बन्ध कुछ अवश्य होना चाहिये यह मेरी सिद्धान्ततः धारणा थी।

दो परस्पर विरोधी वस्तुओं की तुलना में कहने के लिये कुछ नहीं होता उनका भेद स्वतः स्पष्ट होता है । अतः कभी-कभी मुझे यह अपना कार्य च्यर्थ लगने लगता था । किन्तु श्रेष्ठ डा. नजीर हुसैन साहब की प्रेरणा से मैं अपने कार्य में लगी रही । प्रायः डा. अगैक शर्मा से भी इस पर चर्चा होती रहती थी । पक्षतः क्षणिक निराशा के बाद मैं पुनः उत्साह पूर्वक अपने कार्य में जुट जाती थी । फिर जैसे-जैसे मेरा इस विषय पर अध्ययन बढ़ता गया, मुझे इन दोनों काव्य धाराओं में कुछ साभ्य भी दीखने लगा । मैंने अनुभव किया कि छायावादी और प्रयोगवादी दोनों ही कवियों का उद्देश्य काव्य के मूल प्रयोजनों से भिन्न नहीं है । दोनों ही काव्य के माध्यम से मानव की पुनर्प्रतिष्ठा का गुस्तर कार्य कर रहे थे । दोनों में अन्तर था तो केवल स्तर का । एक इस कार्य को भावना के स्तर पर कर रहा था तो दूसरा इसी कार्य को वैचारिक स्तर पर रहा था । मानव मूल्यों की उपेक्षा से दोनों के ही अहं चोट खाये हुए थे । यह दूसरी बात है कि मानव मूल्यों के प्रति दोनों की दृष्टियाँ प्रच्छ-प्रच्छ थीं ।

इस यही से मुझे वह मार्ग दीखने लगा जिस पर चल कर मैं अपना शोध कार्य पूर्ण कर सकी । प्रस्तुत शोध में यही मेरी उपलब्धि है इसमें जो मेरे विचार का मूल बिन्दु रहा है, वह है - इन दोनों काव्य धाराओं में साभ्य का । जिन परिस्थितियों में ये काव्य धाराएँ जन्मी, जो रूप और आकार इनने धारण किये उनमें समानता की खोज इस शोध प्रबन्ध का मुख्य उद्देश्य रहा है । वह साभ्य भाव और विचार के दोनों स्तर पर विचारणीय है ।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में मेरे सामने सबसे बड़ी एक समस्या इसके प्रारम्भ में ही उपस्थित हुई। और वह थी प्रयोगवाद की सीमा निर्धारण की। अनेक कवि और समीक्षकों ने प्रयोगवाद से नई कविता को पृथक् नहीं माना है। वे नई कविता को प्रयोगवाद का ही परिवर्ती और विकसित रूप मानते हैं। इतना ही नहीं अनेक ऐसे कवि हैं जिनके नाम प्रयोगवाद और नई कविता दोनों से समान रूप से जुड़े रहे। **इन्दिरा, केदार नाथ सिंह, शम्भू, रघुवीर तहाय, गिरिजा कुमार माथुर** आदि इसके प्रमाण हैं। कविता की "फॉर्म" और उसकी "टेक्नीक" के साथ-साथ वैचारिक और संवेदना के स्तर पर भी नई कविता और प्रयोगवादी काव्य धाराओं में पर्याप्त अन्तर है। कदाचित्त इसके लिये कवि और समीक्षकों का एक बहुत बड़ा वर्ग ऐसा भी है जो प्रयोगवाद को नई कविता से पूर्णतः पृथक् मानता है। प्रयोगवादी कविता में जो छुटन, पीड़ा और संक्रांत था वह नई कविता में नहीं। नई कविता एक कुण्ठा मुक्त कविता है। इसी लिये प्रस्तुत शोध में मैंने भी नई कविता में प्रयोगवाद को पृथक् मानते हुए सन् 1942 से 1953 के बीच की ही कविताओं को अपने विवेचन का मुख्य आधार बनाया है। यद्यपि 1942 से 1953 तक का समय प्रयोगवाद की कोई लक्ष्मरेखा नहीं है। इसके बाद भी प्रयोगवादी कवितारें लिखी जाती रही हैं। अपनी बात को स्पष्ट करने के लिये इन कविताओं को भी मैंने अपने शोध का उपजीव्य बनाया है।

यहाँ कहना न होगा कि छायावादी काव्य में इस प्रकार का कोई मतभेद नहीं रहा है। छायावादी काव्य के लिये प्रसाद, यन्त,

निराला, और महादेवी की छुट्टायी छायावादी काव्य विवेचन के लिये निर्विवाद आधार है। किन्तु हाँ, छायावादी काव्य में भी वन्त और निराला की उत्तरवर्ती रचनायें छायावाद के धरे से बाहर हो जाती हैं। इस शोध-प्रबन्ध में उनका प्रसंगवश उल्लेख तो हुआ है किन्तु उन्हें छायावादी काव्य विवेचन का आधार नहीं बनाया गया है।

जहाँ तक इस शोध - विषय के लिये साग्रणी का प्रश्न है मुझे विश्वविद्यालय के पुस्तकालय, संग्रहालय के अतिरिक्त धर्म समाज कालेज के पुस्तकालय एवं डॉ. अशोक शर्मा के निजी संग्रह से पर्याप्त सहायता मिली रही है।

इस शोध प्रबन्ध को लिखने और इससे संबंधित अध्ययन मनन करने में मेरी दृष्टि निरन्तर इस बात पर रही है कि छायावाद और उसके उद्भव के कारण तथा छायावादी काल की सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनैतिक घुलठ भूमि के साथ - साथ उसके परिवेश एवं उसकी मूल प्रवृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन प्रयोगवाद की इन्हीं सभी चीजों के साथ किया जाये तथा साथ ही मैंने यह भी ध्यान रखा है छायावाद एवं प्रयोगवाद में आपसी साम्य एवं वैषम्य के सभी आधारभूत तत्त्व स्पष्ट हो जायें। इतना ही नहीं साम्य और वैषम्य के कारणों पर प्रकाश डालना भी मैंने इस शोध प्रबन्ध में अपना कर्तव्य समझा है।

अपने इस दृष्टि कोण के तहत मैंने प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में कुल दस

अध्याय रखे हैं। यद्यपि अध्यायों की यह संख्या देखी में अधिक लगती है। किन्तु इससे मुझे एक लाभ यह हुआ है कि मैं छायावाद और प्रयोगवाद की प्रत्येक तुलनीय वस्तु का पूरक और स्पष्ट विवेचन कर सकी हूँ।

इसी बात की ध्यान में रखकर इस शोध प्रबन्ध के प्रथम अध्याय में आधुनिक कविता पर विचार किया गया है। आधुनिक कविता के विकास क्रम में छायावाद एवं प्रयोगवाद का स्थान, दोनों का उद्भव और विकास दोनों की ऐतिहासिक स्थिति, उनका परिवेश तथा दोनों ही आन्दोलनों के समय में राजनैतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्य मानों में होने वाले परिवर्तन आदि का विस्तार से विवेचन किया गया है।

इस शोध प्रबन्ध के दूसरे अध्याय में छायावादी काव्य की मूल प्रवृत्तियाँ जहाँ जो उसे प्रयोगवादी काव्य से अलगती हैं, इस अध्याय के अन्तर्गत समेट ली गई हैं।

इसके तीसरे अध्याय में छायावादी कवियों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। संक्षिप्त होते हुये भी इसमें इस बात का ध्यान रखा गया है कि सभी छायावादी कवियों की छायावादी विशेषताओं के अतिरिक्त उनकी अपनी निजी विशेषताएँ भी स्पष्ट हो जायें। उनके काव्य परिचय के साथ-साथ उनके काव्य संबंधी विचारों का भी यहाँ उल्लेख किया गया है।।

इस शोध ग्रन्थ के चौथा अध्याय प्रयोगवाद की मूल प्रवृत्तियों से संबंधित है। स्व के प्रति ममत्व, व्यक्तिवादिता, रागहीन बीदिकता, विशेषीकरण, आदि की प्रवृत्तियों के साथ प्रयोगवादी कवियों के काव्य में यौन-वर्जनाओं दमिता वासनाओं का विवेचनात्मक परिचय देने के साथ-साथ प्रयोगवादी काव्य की शिल्पगत प्रवृत्तियों-उपमान, प्रतीक, भाषा और छन्द का भी विस्तार से विवेचना किया गया है।

इस शोध ग्रन्थ का पाँचवा अध्याय इसके चतुर्थ अध्याय के ही विकास क्रम में प्रयोगवादी कवियों का परिचय प्रस्तुत करता है। इसके पंचम अध्याय का शीर्षक है -- "प्रयोगवादी कवियों का सामान्य परिचय" इस अध्याय में प्रयोगवाद के लगभग सभी महत्वपूर्ण कवियों का उल्लेख परिचय सहित किया गया है। इस अध्याय में जहाँ इन कवियों के काव्य का परिचय दिया गया है, वहीं इनके काव्य संबंधी वक्तव्यों पर भी विवेचनात्मक दृष्टि डाली गयी है।

इस शोध का छठ एवं अष्टम अध्याय विवेचन की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण है। इसके छठ अध्याय में प्रयोगवाद एवं छायावाद के उन मूल भूत आधार तत्वों का विवेचन किया गया है। जिनके कारण इन दोनों काव्य धाराओं में साम्य दृष्टि गोचर होता है। आधारभूत तत्वों की यह समानता दोनों ही काव्य धाराओं के कथ्य तथा काव्यत्वों में देखी परखी गयी है।

इसी के साथ साध्य के कारणों पर भी सम्पूर्ण अध्याय में विचार किया गया है ।

इस शोध का आठवाँ अध्याय " छायावादी और प्रयोगवादी काव्य में वैष्म्य के आधार भूत तत्त्व शीर्षक से लिखा गया है । इसमें कव्य, शिल्प एवं विभिन्न काव्य स्वरों के स्तर पर छायावाद और प्रयोगवाद की विष्मताओं को प्रगट करने वाले तत्त्वों का आंकलन किया है । साथ ही नवम अध्याय में इस वैष्म्य के कारणों पर भी विचार किया गया है । अतः नवम अध्याय का शीर्षक रखा गया है --- " छायावादी एवं प्रयोगवादी काव्य में वैष्म्य के कारण " ।

इस शोध का अन्तिम और दसम अध्याय है - " उपसंहार " इसमें सम्पूर्ण शोध के निष्कर्षों को एक ही स्थान पर प्रस्तुत किया गया है ।

शोध में काम आने वाले ग्रन्थार्क की सूची परिशिष्ट - 1 तथा परिशिष्ट- 2 के अन्तर्गत रखी गई है । परिशिष्ट एक में शोध के लिये उपजीव्य ग्रन्थों की सूची रखी गई है एवं परिशिष्ट - 2 में शोध के उपस्कारक ग्रन्थों की सूची दी गई है ।

इस शोध के पूर्ण करने में मुझे जिन विद्वानों की प्रत्यक्ष और परोक्ष सहायता मिली है, उनके लिये मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ । जिन उपस्कारक ग्रन्थों की सहायता से मैं शोध संबंधी विचारों को कल मिलता रहा हूँ, मैं

उनकी विशेष आभारी हूँ । डॉ. नजीर मुहम्मद साहब जिनके कृपा पूर्ण निर्देशन में यह शोध कार्य पूरा हुआ है और जिनके द्वारा निरन्तर मेरा उत्साह वर्धन किया जाता रहा है ----- उनके प्रति आभार प्रकट करके मैं उनकी कृपा पर अपने अधिकार को कम नहीं करूँगी । इसके अतिरिक्त मेरे पूर्व गुरु डा. आनंद शर्मा । हिन्दी विभाग, धर्म समाज महाविद्यालय अलीगढ़ की भी हृदय से आभारी हूँ, जिनने अनेक अवसरों पर मुझे प्रोत्साहित ही नहीं किया अपितु अपना अमूल्य समय देकर मेरी सहायता भी की ।

मैं सर्वाधिक आभारी हूँ, अपनी दोनों बेटियों- कु. नूपुर शर्मा एवं वाष्पी तथा पुत्र चि. पप्पू की, जिनने मुझे शोध कार्य सम्बन्धी अध्ययन एवं लेखन का समय दिया साथ ही परिवार की अनेक जिम्मेदारियाँ भी अपने ऊपर ले लीं । उनके इस सहयोग के बिना यह शोध कार्य कदाचित् पूरा नहीं हो सकता था ।

पुस्तकें उपलब्ध कराने में जो सहयोग मुझे श्री बी. के. शर्मा । पुस्तकालय, धर्म-समाज महाविद्यालय से मिला उसे भी भुलाया नहीं जा सकता । साथ ही मैं श्री-रमेश-जैन की आभारी हूँ जिनने इस शोध कार्य को शीघ्र और अशुद्धियों से बचते हुए संकलित किया है ।

विषय सूची =====

भूमिका:-

=====

प्रस्तावना, विषय-प्रवेश, विषय की सीमा, उपलब्ध सामग्री,
शोध का दृष्टिकोण, शोध का स्वरूप और उपलब्धियाँ ।

प्रथम अध्याय:-

=====

आधुनिक कविता =====

- 1: आधुनिक कविता : उद्भव और विकास
- 2: छायावाद और प्रयोगवाद की ऐतिहासिक स्थिति
 - ।अ। छायावादी कविता : नामकरण और सीमांकन
 - ।ब। छायावादी कविता का परिपेश
 - ।स। प्रयोगवादी कविता : नामकरण और सीमांकन
 - ।द। प्रयोगवादी कविता का परिपेश
- 3: राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक परिप्रेक्ष्य में बदलते मूल्यमान

द्वितीय अध्याय:-

=====

छायावादी काव्य की मूल प्रवृत्तियाँ =====

- 1: प्रकृति चित्रण
- 2: प्रेम भावना
- 3: दुःख, वेदना और निराशा

- 4: आत्मानुभूति की अभिव्यक्ति
- 5: भाषा, अलंकरण एवं अभिव्यञ्जना शिल्प
- 6: रहस्य-भाषना

तृतीय अध्याय:- =====

छायावाद के प्रमुख कवियों का परिचय =====

- 1: मुकुट घर वाङ्मय
- 2: जयशंकर प्रसाद
- 3: सुमित्रानन्दन पंत
- 4: सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'
- 5: महादेवी वर्मा
- 6: डॉ. राम कुमार वर्मा

चतुर्थ अध्याय:- =====

प्रयोगवादी काव्य की मूल प्रवृत्तियाँ =====

- 1: व्यक्तिवादी प्रवृत्ति
- 2: 'स्व' के प्रति ममत्त्व
- 3: रागहीन बौद्धिकता
- 4: विशेषीकरण की प्रवृत्ति
- 5: दमित वासनारै
- 6: यौन-वर्जनारै
- 7: उपमानों की नवीनता
- 8: नये प्रतीक

9: छन्दगत प्रवृत्तियाँ

10: भाषागत प्रवृत्तियाँ

पुंचम अध्याय :-

=====

प्रयोगवाद के प्रमुख कवियों का परिचय

=====

- 1: अज्ञेय
- 2: रघुवीर तटाय
- 3: प्रयाग नारायण त्रिपाठी
- 4: मदन वात्स्यायन
- 5: गजानन माधव "मुक्तिबोध"
- 6: भारत भूषण अग्रवाल
- 7: गिरिजा कुमार माथुर
- 8: नरेश मेहता
- 9: धर्मवीर भारती
- 10: नैमिचन्द्र जैन
- 11: केदार नाथ सिंह
- 12: केतरी कुमार
- 13: नरेश कुमार
- 14: नलिनी क्लोचन शर्मा

षष्ठ अध्याय :-

=====

छायावादी और प्रयोगवादी काव्य में साम्य के आधार भूततत्त्व

=====

- 1: विषय वस्तु की दृष्टि से
- 2: काव्य रूप की दृष्टि से
 - ॥क॥ कविता
 - ॥ख॥ अन्य काव्य रूप

3: अभिव्यंजना शिल्प की दृष्टि से

॥क॥ भाषा

॥ख॥ अलंकरण

॥ग॥ छन्द एवं लय

सप्तमः अध्याय :-

=====

छायावादी और प्रयोगवादी काव्य में साम्य के कारण-

=====

1: हताशा

2: युगीन परिस्थितियों में साम्य

3: मानवतावाद

4: विदेशी साहित्य का प्रभाव

अष्टमः अध्याय :-

=====

छायावादी और प्रयोगवादी काव्य में साम्य के आधार भूतत्व

=====

1: विषय वस्तु की दृष्टि से

2: काव्य रूप की दृष्टि से

॥क॥ कविता में

॥ख॥ अन्य काव्य रूप

3: अभिव्यंजना शिल्प की दृष्टि से

॥क॥ भाषा

॥ख॥ छन्द और लय

॥ग॥ उपमान एवं प्रतीक

नवम अध्याय :-
=====

छायावादी और प्रयोगवादी काव्य में वैषम्य के कारण :
=====

- 1: युगीन परिस्थितियों में विषमताएँ
- 2: जीवन - दृष्टि में अन्तर
- 3: विज्ञान का प्रभाव
- 4:

दशम अध्याय :-
=====

उपसंहार
=====

परिशिष्ट -	सहायक ग्रन्थ सूची
=====	=====
परिशिष्ट - 1	उपजीव्य ग्रन्थ
परिशिष्ट - 2	उपस्कारक ग्रन्थ

प्रथम अध्याय
=====

आधुनिक कविता
=====

1. आधुनिक कविता : उद्भव और विकास
2. छायावाद और प्रयोगवाद की ऐतिहासिक स्थिति
 - ।क। छायावादी कविता: नामकरण और सीमांकन
 - ।ख। छायावादी कविता का परिवेश
 - ।ग। प्रयोगवादी कविता: नामकरण और सीमांकन
 - ।घ। प्रयोगवादी कविता का परिवेश
3. राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक परिप्रेक्ष्य में बदलते मूल्य मान

प्रथम अध्याय

=====

आधुनिक कविता :

=====

कविता में आधुनिकता का तात्पर्य उसकी नवीन दृष्टि से है इसी अर्थ में आधुनिक कविता पिछली कविता से प्रथक होती है। कविता के सन्दर्भ में आधुनिक शब्द काल-सापेक्ष भी हो सकता है। आधुनिकता का प्रथम अर्थ-नवीन-दृष्टि का तात्पर्य दृष्टि विशेष भी लगाया जा सकता है किन्तु उसका ऐसा अर्थ करना उचित नहीं है, क्योंकि कोई विशेष दृष्टि भी स्थायी और अपरिवर्तनीय नहीं होती। निश्चय ही यह उसका संकुचित और औपेयन से भरा अर्थ होगा। डा० हरि चरण शर्मा ने आधुनिकता के तीन अर्थ किये हैं।

- प्रथम - काल-सापेक्ष
दूसरा - विशिष्ट दृष्टिकोण
तीसरा - "वर्तमान के बोध से संयुक्त और अतीत से एकदम विच्छिन्न।" निश्चय ही जैसा कि वे मानते हैं तीसरा अर्थ संकुचित है।¹¹¹ दूसरे अर्थ में कहे गये "विशिष्ट दृष्टिकोण" को वे "मध्य-युगीन वैचारिकता से भिन्न नये जीवन मूल्यों का वाचक" कहकर बात साफ कर देते हैं अन्यथा विशिष्ट दृष्टिकोण कुछ और ही अर्थ द्योतित करता है।

जो भी हो हिन्दी कविता में आधुनिकता का सम्बन्ध "मध्य-युगीन" वैचारिकता से भिन्न नये "जीवन मूल्यों" के साथ-साथ काल सापेक्ष

111 डा० हरिचरण शर्मा : आधुनिक कविता : प्रकृति और परिवेश

भी है ।

आचार्य राम चन्द्र शुक्ल ने रीति कालीन कविता की इति श्री सन् 1843 में मानी थी और इसके 20 वर्ष बाद ही भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के लेखन के साथ ही काव्य में नवीन जीवन मूल्यों के दर्शन होते हैं । स्पष्ट है कि आधुनिक हिन्दी कविता में आधुनिकता काल-सापेक्ष और नवीन जीवन दृष्टि दोनों से सम्बद्ध है । भारतेन्दु का लेखन 1868 में प्रारम्भ हुआ यद्यपि बीच के 25 वर्षों में पुरातनता समाप्त तो हो रही थी किन्तु नवीनता के दर्शन भी इस काल में होते हैं, इस बीच के समय को आधुनिक कविता की पूर्व पीठिका ¹² माना जा सकता है ।

गजानन माधव मुक्तिबोध की आधुनिकता सम्बन्धी परिभाषा के परिपेक्ष में भी आधुनिक हिन्दी कविता का प्रारम्भ भारतेन्दु के साथ ही माना जाना चाहिए उनका कहना है कि "अन्याय के खिलाफ आवाज बुलन्द करना आधुनिक भाव-बोध के अन्तर्गत है । आधुनिक भाव-बोध के अन्तर्गत यह भी है कि मानवता के भविष्य निर्माण के संघर्ष में हम और भी दत्त-चित्त हों तथा हम वर्तमान परिस्थिति को सुधारें नैतिक ह्रास को रोक सकें उत्पीड़ित मनुष्य के साथ एकात्म होकर उसकी मुक्ति की उपाय योजना करें ।" ¹²

भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र की कविता इस संदर्भ में पूर्णतः आधुनिक है रीतिकालीन कविता में भिन्न उनके काव्य में राष्ट्रीय और सामाजिक चेतना की दृष्टि स्पष्ट परिलक्षित होती है । जब वे कहते हैं ---

11। डा० हरिचरण शर्मा : वही : पृष्ठ-17

12। गजानन माधव मुक्ति बोध - नयी कविता का आत्म संघर्ष तथा अन्य निबंध : पृष्ठ - 16

भीतर- भीतर सब रस घूँसे, हँसि- हँसि के तन-मन-घन मूँसे
 बाहिर वातन मैं अति तेज- क्यों सखि साजन नहीं अंगरेज
 तो उनकी राष्ट्रदीय दृष्टि दिखाई देती है रीतिकालीन कवि के लिये
 इस तरह की उक्ति कर पाना असम्भव था । यद्यपि उनकी यह नयी
 अनुभूति रीतिकालीन भाव- बोध से सर्वथा प्रथक् है, तथापि उसकी
 अभिव्यक्ति अभी भी बहुत कुछ अपने पूर्ववर्ती काव्य से मिलती है ।
 युक्तियाँ हिन्दी काव्य के लिये कोई नयी चीज नहीं थी इसी प्रकार
 देवी- देवताओं की स्तुति भी पुरानी ही अभिव्यक्ति शैली है । किन्तु
 यह निर्विवाद है कि भारतेन्दु का भावबोध - सर्वथा नवीन और आधु-
 निक था-

मन हवै गयौ विलाई कछु अव रहेयो न बाकी ।

उदय हेतु हम बेचि चुके माँ चुल्हे बाकी ॥ 4

उनकी सामाजिक चेतना" अंगरेज राज सुख साज सजे सब भारी पै
 धन विदेश चलि जात ये है अति रक्खारी" मैं स्पष्ट परिलक्षित होती है ।
 इतना ही नहीं भारतीय समाज में वर्ग भेद पर भी उनकी दृष्टि गयी -

तबहिं लख्यौ जहँ रह्यौ एक दिन कंयन परसत ।

तहँ चौथाई जन- रूखी रोटिहु को तरसत ॥

जहँ आमन की गुठली अरु विरछन की छालै ।

ज्वार घून यह मेलि लोग परिवारहि पालै ॥

आधुनिकता के सन्दर्भ में यहाँ एक बात अच्छी तरह समझ लेनी
 होगी और वह है - आधुनिक भाव- बोध के आधार । भारतेन्दु
 युगीन काव्य में जहाँ एक ओर इन कवियों की राष्ट्रदीय और सामाजिक
 दृष्टि परिलक्षित होती है । जो इसके पूर्ववर्ती काव्य में अनुपलब्ध है।,
 वहीं- दूसरी ओर इनकी व्यक्ति चेतना मध्य- युगीन रोमान्टिक दृष्टि

।: भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्रः, देवी स्तुति पृष्ठः 22

से भी अभिभूत दिखाई देती है। इन कवियों का भक्ति और शृंगार परक सम्पूर्ण काव्य इसका उदाहरण है। वास्तविकता यह है कि भारतेन्दु युग में जहाँ एक ओर समाज और राष्ट्र के प्रति जागरूक चेतना का जन्म हुआ वहीं व्यक्ति चेतना का और अधिक विकास हुआ, और यही दो चेतना इस युग की आधुनिकता की आधार बनीं।

परवर्ती काव्य में द्विवेदी युगीन कविता और प्रगतिवादी कविता यदि इसकी सामाजिक और राष्ट्रीय चेतना के विकास का परिणाम है तो छायावादी और प्रयोगवादी कविता इसकी व्यक्तिवादी चेतना के विकास का प्रतिफल है। वस्तुतः आधुनिक कविता प्रारम्भ से ही दो धाराओं में विकसित होती है यद्यपि दोनों धाराओं का उत्सन्न होकर संगम स्थल है। जिस नवीन व्यक्ति चेतना का विकास इन कवियों में हुआ है वह इनकी कविता में मध्य-युगीन कविता से ही छनकर आयी है तथा दूसरी राष्ट्रीय और सामाजिक चेतना दृष्टि का विकास यूरोपीय साहित्य और जीवन से परिचय का परिणाम है। और यह दोनों ही धाराएँ इन कवियों में समगामित होकर प्रयाग में संगम के जल की भाँति एक होते हुये भी पृथक्-पृथक् दिखाई देती है। मजेदार बात यह है कि आगे भारतेन्दु युग के बाद ये दोनों धाराएँ एक दूसरे से एक मेक होकर चलने के बजाय एक दूसरे के समानान्तर चलती हुई दिखाई देती है। बहुत आगे नई कविता में आकर यह दोनों धाराएँ पुनः एक होती दिखाई देती है ऐसा लगता है जैसे कोई एक ही नदी कुछ समय के लिये दो धाराओं में विभक्त होकर बीच में एक द्वीप को जन्म देती है।

यह बात और भी स्पष्ट तब हो जाती है जब हम देखते हैं कि व्यक्ति चेतना से विकसित छायावादी कविता जहाँ अभिव्यक्ति की नई-नई शैलियाँ प्रस्तुत करती है और मानव कल्पना को गहन से गहनतर

आन्तरिकता में उतार ले जाती है वहीं सामाजिक राष्ट्रिय चेतना से विकसित द्विवेदी युगीन और प्रयोगवादी कविता जीवन और जगत् की वास्तविकताओं को एक दम सीधे और सपाट लहजे में उन्मत्त से उन्मत्तर माध्य पर प्रतिष्ठित करती है ।

अपने हिन्दी साहित्य के इतिहास में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने कदाचित इस बात को पहले ही लक्षित कर लिया था । इसलिये उनमें आधुनिक हिन्दी कविता को नई धारा और पुरानी धारा की कविता के पृथक्-पृथक् स्थानों में देखा । पंडितों की बंधी बंधाई प्रणाली पर चलने वाली कविता और भाषा को काव्यांतर में निस्तेज और लोक संस्कृत धारा के रूप में अवतरित होने की प्रक्रिया को एक अनिवार्य आवश्यकता के रूप में उन्होंने इसीलिये स्वीकार किया ।

* पंडितों की पाँची' प्रणाली पर चलने वाली काव्य धारा के साथ-साथ सामान्य अनपढ़ जनता के बीच एक स्वच्छंद और प्राकृतिक भाषा धारा भी जीतों के रूप में चलती रहती है - ठीक उसी प्रकार जैसे बहुत काल से स्थिर चली आती हुई पंडितों की साहित्य भाषा के साथ-साथ लोक भाषा की स्वाभाविक धारा भी बराबर चलती रहती है । जब पंडितों की काव्य - भाषा स्थिर होकर उत्तरोत्तर आगे बढ़ती हुई लोक भाषा से दूर पड़ जाती है और जनता के हृदय पर प्रभाव डालने की उसकी शक्ति क्षीण होने लगती है तब शिक्षित समुदाय लोक भाषा का सहारा लेकर अपनी काव्य परम्परा में नया जीवन डालता है । प्राकृत के पुराने स्थानों से लदी न अजब लछड़ होने लगी तब शिक्षित काव्य प्रचलित देशी भाषाओं से शक्ति प्राप्त करके ही आगे बढ़ सकता । यही प्राकृतिक नियम काव्य के स्वस्थ के सम्बन्ध में भी अटल समझना चाहिए। जब-जब शिक्षितों का काव्य पंडितों द्वारा बंध कर निश्चेष्ट और

संकुचित होगा तब तब उसे सजीव और चेतन प्रसार देश की सामान्य जनता के बीच स्वच्छंद बहती हुई प्राकृतिक भाव धारा से जीवन तत्त्व ग्रहण करने से ही प्राप्त होगा ।¹ छायावादी और प्रयोगवादी कविता जहाँ अपने चारों ओर एक घेरा बनाती चली जाती है वहीं द्विवेदी युगीन और प्रकृतिवादी कविता हर घेरे को तोड़ती चली जाती है ।

यहाँ ज्ञातव्य है कि छायावादी और प्रयोगवादी कविता की तुलना एक ही काव्य की कालसमेध तुलना है ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार कोई हरिद्वार के गंगा जल से बनारस के गंगाजल की तुलना करे । निश्चय ही बनारस का गंगाजल हरिद्वार की अपेक्षा पर्यावरण के कारण अधिक दूषित मिलेगा । लगभग ऐसी ही स्थिति छायावादी और प्रयोगवादी कविताओं की भी है । यहाँ छायावाद और प्रयोगवादी ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि को उसके राजनैतिक सामाजिक सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में समझ लेना अनपयुक्त न होगा ।

राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक परिप्रेक्ष्य में बदलते मूल्यमान:-
 = = = = =

वस्तुतः हिन्दी साहित्य के इतिहास में आधुनिक काल के प्रारम्भ से ही मान्य जीवन के विभिन्न मूल्यमान बदलने लगे थे । और यह क्रम छाया-वाद युग के बाद प्रयोगवादी युग में चलता रहा । द्विवेदी युग के सांस्कृतिक पुनरुत्थान से कवियों की दृष्टि हट जाने के पीछे इन बदलते मूल्यमानों को स्पष्ट देखा जा सकता है । कविता राष्ट्र की समस्याओं और राष्ट्रीय सुख-दुख से अलग हट कर, व्यक्ति के निजी सुख-दुख पर आकर केन्द्रित हो गयी । वस्तुतः कवि के अब तक जिस सामाजिक, राजनैतिक, और सांस्कृतिक दायित्व का बोध था, उसके स्थान पर कवि निज वीथ में बंध गया । अब तक महत्त्व के राष्ट्रीय, सामाजिक, राजनैतिक

1: आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ 60।

एवं सांस्कृतिक धार्मिक परिप्रेक्ष्य में देखता था । किन्तु अब वह समग्र जीवन को और जगत को अपने निजी सुख-दुख के परिप्रेक्ष्य में देखने लगा । उसे लगने लगा था कि राजनीति, नैतिकता, समाज, संस्कृति एवं धर्म आदि के नीचे मानव की मानवता कहीं दब गयी है । मानवता से उसका तात्पर्य मानव के बीच का परस्पर सहयोग, भ्रातृत्व एवं मानव की निजी संवेदनाओं से था । संपूर्ण प्रकृति को उसने इसी रूप में देखा । निजता की इस प्रधानता ने उसे "मैं" शैली" अपनाने के लिये प्रेरित किया । उसे अपना दुख बहुत बड़ा दीखने लगा । अगर कभी उसकी दृष्टि सम्पूर्ण समाज के दुख तक गई भी तो केवल इस लिये कि वह समाज का दुख उसके निजी दुख का सहधर्म था ।

छायावादी युग में, उस काल छन्द में भारतीय राजनीति की अनेक महत्वपूर्ण घटनाएँ घटित हुईं । किन्तु उनका उसकी कविता में कोई उल्लेख नहीं मिलता । भारतीय जनता जिस दुख से दुखी थी और उसके निराकरण के लिये हमारे राजनेता जो प्रयत्न कर रहे थे वह उनके लिये गौण इसलिये हो गया कि वह दुख उनके निजी दुख का सहधर्म नहीं था । वस्तुतः छायावाद के पीछे व्यक्तिवादी जीवन दर्शन क्रियाशील था, वह परम्पराओं, मान्यताओं, नियमों और ब्राह्मण संहिताओं से मानव की मुक्ति चाहता था । केवल अंग्रेजी राज्य से ही नहीं । यही कारण है राजनीतिक परिस्थितियों का उस काव्य में उल्लेख नहीं है ।

समाज के प्रति भी छायावादी का दृष्टि बदली हुई थी । वह सामाजिक मान्यताओं, उसके पुरोधा आचार्यों से पीड़ित था । वह सामाजिक मान्यताओं के लिये अपनी भावनाओं, आकांक्षों, आदि की बलि देने के लिये तैयार नहीं था । अपितु सामाजिक मर्यादाओं की बलि अपनी निजी भावनाओं के लिये उसने अपना मन बना लिया था । और रेशा न कर पाने की स्थिति में उसकी कविता में वेदना का स्वर पैदा हो गया

जहाँ तक सांस्कृतिक मूल्यमानों का प्रश्न है छायावादी कवि इन्हें नहीं बदल सका था । वह प्रेम की चरम परणति अब भी विवाद में ही मानता था । अपनी अभिव्यक्ति में भी वह संस्कृति से निरपेक्ष नहीं रह सका । उसने बहुत कुछ अपनी सांस्कृतिक विरासत से ही लेकर अपने काव्य का सौन्दर्य विधान किया है ।

जिस प्रकार छायावाद के मूल में व्यक्तिवादी जीवन- दर्शन रहा है उसी प्रकार प्रयोगवादी कविता का मूल स्त्रोत अस्तित्ववादी जीवन दर्शन रहा है । फलतः जीवन के प्रति दृष्टि कोण के परिवर्तन के साथ ही साथ इन कवियों के मूल्यमानों में भी परिवर्तन हुआ ।

बढ़ते हुए औद्योगिक प्रभाव मशीनीकरण, और पहले से चली आती हुई झंझर की अवधारणा के रहते वर्तमान कवि को मानव मात्र के अस्तित्व का खतरा महसूस होने लगा था । उसका मानवतावाद मानव के अस्तित्व को बनाए रखने और उसे प्रतिष्ठित करने में है । जहाँ प्रश्न अस्तित्व का हो वहाँ लड़ाई भयंकर होती ही है । छायावादियों से इस मामले में प्रयोगवादियों का संघर्ष गहरा है । स्वाभाविक है कि उसमें मूल्य टूटेंगे ।

प्रयोगवादियों ने अपने युग की राजनीति से छायावादियों की तरह पलायन नहीं किया । वह उस पर दृष्टि रखे हैं- ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार किसी खतरे पर रखी जाती है । युद्ध और शान्ति औद्योगिक विकास, यन्त्रीकरण आदि पर उसकी दृष्टि है । किन्तु वह उनका विरोधी है ।

नैतिकता, और सांस्कृतिक मूल्यों में भी वह मानव अस्तित्व का खतरा देखता है इसलिये वह उन्हें भी तोड़ने में जुटा है । उसकी दृष्टि सुन्दर से पृथक् कुस्य पर टिकी है । जीवन में जो वर्जित है उन सभी वर्जनाओं को लाँघ कर जाने की ललक उसमें है क्योंकि छर्जनाओं के रहते उसे

मानव अस्तित्व की समाप्ति का खतरा दिखाई देता है ।

छायावाद और प्रयोगवाद की ऐतिहासिक स्थिति:-

= = = = =

काल क्रम की दृष्टि से यद्यपि छायावादी काव्य के तुरंत बाद प्रयोगवादी काव्य नहीं आता तथापि उनमें एक सम्बद्धता है । आधुनिकता में यहाँ काल सापेक्षता का भाव गौण हो गया है और दृष्टि की नवीनता प्रधान हो गई है । डा० हरिश्चरण शर्मा ने " आधुनिक कविता के विकास को मूल्यांकित और समीक्षित करने के लिये उसका अन्तर्विभाजन इस प्रकार " किया है :-

- 1: पुर्नजागरण की कविता । भारतेन्दु युगीन कविता ।
- 2: जागृति के नवोन्मेष और परिष्कार की कविता । द्विवेदी युगीन कविता ।
- 3: कल्पना की विकृति और वैयक्तिक मनोभाषन की कविता

। छायावादी कविता ।

- 4: यथार्थ के स्वीकार और अभिव्यंजन की कविता । प्रगतिशील कविता ।
- 5: प्रयोगशील तत्त्वों की संवाहिका कविता । प्रयोगवादी कविता ।
- 6: प्रगति और प्रयोग की संतुलित कविता । नयी कविता ।
- 7: मोहर्म्म व युवा आक्रोश की कविता । सठोत्तरी कविता ।

इस प्रकार द्विवेदी युग के प्रारम्भ से लेकर प्रयोगवादी कविता के अंत तक " जागृति के नवोन्मेष और परिष्कार के साथ साथ यथार्थ के स्वीकार और अभिव्यंजन की कविता " भी बीच में अभिगृहीत है । यही कारण है कि छायावादी कविता और प्रयोगवादी कविता का अन्तर्सूत्र एक होते हुये भी दोनों में पर्याप्त भिन्नताएँ हैं ।

जहाँ तक छायावादी और प्रयोगवादी कविता की काल क्रमानुसार

वैतिहासिकता की बात है - ज्ञाना कहना ही पर्याप्त है अब मुख्य बात है जो विस्तार से की जानी चाहिये दोनों के मासकरण और तीर्थावन के साथ परिवेष्ट और प्रभाव की ।

छायापाटी इधिता: मायारन और तीयाकन:-

● ●

यापि तब 1918 में निराला की जुही की कमी और पीत के पन्नाच की कुछ कविताएँ प्रकरण में आ चुकी थी तथापि 1918 से काव्य में एक नयी प्रवृत्ति निर्धार दिखलाई देती है "छायावाद का प्रारम्भ और तीर्माकन वर्षों के विस्तार से तब 1918 से 1938 तक किया जा सकता है । यों 20 वर्ष का यह समय कोई महत्त्व रेखा नहीं है । कि इसी दो चार वर्ष पहले और बाद में न भाषा का तब "डा० नाथवर सिंह ने छायावाद का प्रारम्भ और तीर्माकन तब 1918 से 1936 तक किया है ये कहते हैं । "छायावाद शब्द का अर्थ चाहे जो हो, परन्तु व्यापहारिक दृष्टि से यह प्रताप, निराला, पीत, महादेवी, की उन समस्त कविताओं का पीतक है जो 1918 से 36 ई. के बीच लिखी गई हैं । सामान्यतः ये छायावाद का प्रारम्भ " मुकुट कर पाठिय के 1920 की कुसाई, तिसम्बर, नम्यनम्य और दितः-वर की " श्री शरदा " । जयपुर में " हिन्दी में छायावादी " शीर्षक से छपी चार सित्तियों की एक लेख माला " ³ से मानते हैं । जो भी हो छाया-वाद 1918 - 20 से 1936- 38 तक लिखी गई हिन्दी कविता के लिये ही गई संज्ञा है ।

छायापाद के नामकरण की कहानी भी मीठार है छायापाद के नामकरण छात्रों को स्वयं ही इसका अर्थ नहीं मायूम था फिर भी इस काल की छात्राओं के लिये यह नाम का पढ़ा और साहित्य जगत में इसे बर्थास्त

.....

।: डा.० हरि चरण शर्मा, एम.ए., ए.बी.ए. : १९

२: डा. नाम्मर सिंह, छायावाद : पृष्ठ : १९

3: मही पूर - 13

स्वीकृति मिली। हुक जी ने छायावाद की पिटोनी से आर्ड हर्ड एक काव्य
 शैली के रूप में देखा इसे बंगला के माध्यम से अंग्रेजी कविता का हिन्दी कविता
 में आया हुआ प्रभाव सिद्ध करने के लिये एक बहुत छद्म बात कह दी थी
 ईसाई कैन्टमैटल* और हिन्दी छायावाद के बीच बंगला कविताओं की एक
 कड़ी थी कल्पना करते हुये उसे भी छायावाद का नाम से अभिलिखित किया
 जिसका बहुत समय बाद आचार्य हजारी प्रताप द्विवेदी द्वारा निराकरण
 किया गया था। हुक जी के अतिरिक्त छायावाद के सम्बन्ध में आचार्य
 महावीर प्रताप द्विवेदी भी इसका अर्थ नहीं समझ सके थे * छायावाद से
 लोगों का क्या मतलब है कुछ समझ में नहीं आता। शायद उनका मतलब है
 कि किसी कविता के भावों की छाया यदि कहीं अन्यत्र जाकर पहुँचें तो उसे
 छायावादी कविता कहनी चाहिये¹। छायावादी कविता के सम्बन्ध में ऐसी
 चपखानी धारणा होती हुये भी द्विवेदी जी झुठल कर पांडेय और पंत की कवि-
 ताओं को छायावादी मानते थे। स्पष्ट है कि छायावाद नामकरण का सम्-
 बन्ध इन कविताओं की किसी विशेष प्रवृत्ति से नहीं था अपितु यों ही
 रख दिया गया एक नाम था जो नामकरण कलाओं में अपनी समझ से बहुत
 तीव्र- समझ कर रखा था।

जो भी हो छायावाद एक अभिहित बात- सीमा में किसी नई
 कविताओं की तैयारी है। इसकी प्रवृत्तियों का अध्ययन करने से तो किया
 जा सकता है किन्तु इसके नाम से उनको नहीं समझा जा सकता।

छायावादी कविता का परिचय:-

* जब छायावादी कविता ने सबसे ज़ोरी तब राजनीतिक स्थिति
 पर प्रथम महायुद्ध पैदा हुआ वह युद्ध भी स्वातंत्रता का आन्दोलन नहीं
 करघट से रहा था।² राजनीतिक दृष्टि से वह वह समय है जब एक ओर

1: आचार्य महावीर प्रताप द्विवेदी : रसज्ञ रेजने, पृष्ठ २०

2: डा० हरिवरन शर्मा, आधुनिक कविता: प्रवृत्ति और परिचय

महात्मा गांधी द्वारा बनाया गया राष्ट्रीय चिन्ता का आन्दोलन था। यह का स्व भार्य कर रहा का और दूसरी और अंगरेज शासकी की दूसरी नीतियाँ नई- नई बना चिन्ता रही थी । बनिर्वा पासा कीद, अन्त सिंह की कीती, तात्काल कमीशन काबलिङ्कार तथा मकर कायुन का लौहना कीती ऐतिहासिक घटनायें इसी काल के में हुई थी । यह दूसरी बात है कि छाया-पाटी कवियों ने इस पर सब भी धीका नहीं लिखी और इसके अनेक कारण हो सकते हैं ।

आर्थिक सामाजिक दृष्टि से सामन्त शासी का और अंगरेजों की कृपा से भारत में सब नयी नयी पाटी व्यवस्था का भी नये इसी काल में हुआ का नयीपाटी व्यवस्था का तबट प्रभाव छायापाटी कविता में देखने को मिलता है । इसी काल में " नवीन शिक्षा पद्धति ने भी छाया-पाट को प्रेरित एवं प्रेरित किया"। नवी शिक्षा ने जिस पर यूरोपीय वि-ज्ञान का ज्ञान छापी का भारतीय नव युवकों को प्राचीन कर्मराजों लड़कों और मान्यताओं के विरुद्ध कर दिया का ।

जिस मान्यता पाट की भारना से भी छायापाट प्रभावित रहा है तुम्हारे और मान्यता पाट के बीचों में भी ही व्यवस्थागत सारवर प्र-यत्न में छायापाटी कवि प्रभावित न दिखाई देते हैं किन्तु उनके मान्य में इसका गहरा प्रभाव रहा है । महादेवी वर्मा के अनुसार " छायापाट का कवि धर्म के आध्यात्म से अधिक ज्ञान के प्रथम का रही है जो सूर्य और अर्जुन के बीच की मित्रता पुनर्जाता जाता है बुद्धि के प्रथम घातल पर कवि ने जीवन की अकेला का मान्य किया, हृदय की भाव- भूमि पर ज्ञाने प्रकृति में वि-जयी तीक्ष्ण तत्ता की रहस्यमयी अनुकृतियों की और दोनों के साथ स्वा-मुक्त तुल्य दुर्गों की मित्रता सब ऐसी काव्य दृष्टि उपस्थिति का दी जो प्रकृति पाट, हृदयपाट, आध्यात्म पाट, रहस्यपाट और छायापाट आदि अनेक नामों का भार तीब्रता रखी ।"।

।: महादेवी वर्मा, महादेवी का विवेचनात्मक का। पृष्ठ 6

इन सब को मिलाकर भारतीय नवयुवकों की जो मानसिकता बनी कि वह शुद्ध व्यक्तिवादी चेतना का प्रसार थी, अपने परिवेश से विन्न इस युवक का नव युवक केवल अपनी ही नहीं विश्व मानव की मुक्ति का मार्ग खोजने लगा जिसमें रहस्यवाद और प्रकृतिवाद ने इसकी सहायता की यही कारण है कि छायावादी कविता में मानव प्रेम के साथ- साथ एक निराशा का स्वर सुनाई पड़ता है। कल्पना के नये- नये द्वितीय खोलने के साथ- साथ इस कविता में अपने आस पास के वास्तविक ब्यार्थ की अनदेखी मिलती है। प्रयोगवादी कविता: नामकरण और सीमांकन:-

= = = = =

किसी भी क्षेत्र में जब हम किसी "वाद" की चर्चा करते हैं तो उससे एक निश्चित प्रकार की विचार धारा का बोध होता है। उसी क्षेत्र की दूसरी विचार धाराओं से पार्यव्य प्रदर्शित करने के लिये उसमें अपनी कुछ विशेषताएँ होती हैं, अर्थात् उसके पोषक विचारकों की मान्यताएँ और प्रणालियाँ अपनी निश्चित सीमाओं के भीतर, दूसरी विचार धाराओं के पोषकों से भिन्न होती हैं। भिन्नत्व का अर्थ तदैव विरोध ही नहीं समझना चाहिये।¹

प्रयोगवाद भी इसी प्रकार एक "वाद" है। "वाद" शब्द अब तक दर्शन और विज्ञान के क्षेत्र में ही प्रयुक्त होता था। पहली बार यह छायावाद के रूप में प्रयुक्त हुआ। प्रयोगवाद भी छायावाद की तरह ऐसा नाम है जिसके नाम मात्र से उसकी समस्त प्रवृत्तियों का बोध नहीं होता फिर भी यह "नाम": - - - चाहे जिसका "अपूर्व" अव्याप्त और पूर्ण ग्रह युक्त² जान पड़े वह प्रचलन में इतना मान्य होगया है कि विरोध करने वालों को भी अंततः उससे प्रकट होने वाली प्रवृत्तियों

- - - - -

1: विष्णु स्वस्व: प्रयोगवाद का स्वस्व: कल्पना अगस्त तन 1954,

2: अज्ञेय, रेडियो परितर्वाद= प्रतीक पुन 1952

को लिये वही नाम काम में लेना पड़ रहा है ।¹

बहुत समय तक प्रयोगवाद का बहुत संकुचित अर्थ दिया जाता रहा है । उसका सामान्य तथा कला पर-शैलीगत और व्यक्तीगत प्रयोग का समतुल्य अर्थ लगाया गया । इतना ही नहीं इस स्वीकृति अर्थ के भी एक सीमित अंग युक्त छंद को प्रयोगवाद समझा जाता रहा । अभी तक प्रयोग शैली रचनाओं को बहुत संकुचित दृष्टि से देखा गया है । अधिकतर उसका अर्थ युक्त छंद या स्वच्छंद छंद ही ले लिया गया है जो अधिक सत्य है और केवल शैली के समतुल्य की ओर संकेत करता है ।²

जबकि वास्तविकता यह है प्रयोगवाद शैली ही नहीं विषय वस्तु का नयापन है । " मैं मानता हूँ कि साहित्य में नव-जागरण के साथ नवीन भाषाओं और नवीन काव्य कथानकों का ज्वार भी आया, जिसको व्यक्त करने के लिये नवीन परिधान की आवश्यकता थी । परन्तु नवीन परिधान के साथ-साथ भाषाओं की नवीनता स्वयं में कम मूल्यवान नहीं थी । अतः एक प्रयोग शैली काव्य के अन्तर्गत विषयगत और वस्तुगत सत्य का भी पूर्व समावेश मानना चाहिये ।"³

छायावाद के पश्चात् हिन्दी काव्य में स्पष्टतः दो धाराएँ चल निकलीं । जिन्हें प्रयोगवाद और प्रगतिवाद के नाम से अभिहित किया गया है । इनमें पहली धारा " इमिनि" और "क्राइड" के सिद्धान्तों और मान्यताओं को स्वीकार करके चलती है और दूसरी मार्क्सवादी दर्शन को स्वीकार कर 2 इनमें पहली का " विषय पर आग्रह है- तत्त्व विषय पर । विषय पर आग्रह के साथ, वह सौंदर्य को प्रतिमानों को और स्व विधान को स्वीकार करती हुई चलती है दूसरी का आग्रह विषय पर नहीं, विषय की स्थिति पर है, और वह सौंदर्य शास्त्र की परवाह

1: अक्षय ध्वनिकर्ता, नये पत्ते जनवरी, फरवरी 1953

2: सुमन, रेडियो परिसंवाद: प्रतीक जून 1951

3: अक्षय रेडियो परिसंवाद : प्रतीक जून 1951

नहीं करती*।¹

छायावाद की ही भाँति प्रयोगवादी काव्य का भी आग्रह व्यक्ति पर है फलतः उसमें एकाग्रता का समावेश है। स्वस्थ सामाजिक दृष्टि के आभाव में एक ओर तो सामूहिक जीवन के संघर्ष से विमुखता और दूसरी ओर अर्ध चेतन और उप चेतन की भूल- भूलैया में खो जाने की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है।² ऐसे साहित्य में जीवन के संस्कार की - - - - - अवरोध के विष को पीकर मानव को शिवत्व अथवा अमरत्व प्रदान करने की न तो प्रवृत्ति ही है, न शक्ति है। घोर आत्मरधि के कारण लेखक अपनी ही संकुचित परिधि में चक्कर काटता रहता है। संक्रान्ति कालीन अधिकांश साहित्य में एक बात बार-बार विभिन्न स्वरों में प्रकट होती है - वह है लेखक की सतुमुखी घोषणा कि वह किसी बाहरी दबाव में नहीं लिखता। किन्तु यह घोषणा वास्तव में एक भारी दबाव की सूचक है। जिससे लेखक ही नहीं सारा संसार संतुष्ट है। पर मोह में देखना और स्वीकार करना नहीं चाहता।²

जो भी हो निश्चित ही उनकी इस पिडम्बना में युग और सामाजिक जागरूकता और दूसरी ओर व्यक्तिगत जीवन के आर्थिक अवरोध, रुढ़िग्रस्त समाज में स्वस्थ सैक्त भावना और प्रेम सम्बन्ध के आभाव आदि की कुंठाओं में पड़कर आज के कलाकार की मानसिक अवस्था में असंतुलन उत्पन्न हो जाना स्वाभाविक है इस असंतुलन का ही परिणाम है कि प्रयोगवादी काव्य में अनेक अजीब-ओ-गरीब प्रयोग हुये जिनको लेकर आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी ने प्रयोगवाद के सम्बन्ध में अपनी प्रतिज्ञा और विवादास्पद राय कायम की उनके अनुसार--" उलझी हुई संवेदनाओं की अभिव्यक्ति के लिये अथवा अमेदय क्षेत्र में जाने की स्वाभाविक प्रेरणा

1: अज्ञेय: ध्वनि वाता, नये पत्ते, करवरी 1953

2: नैमी चंद जैन, प्रतीक : जून 1952

यश सीधी तिरछी लकीरों, तीधे या उल्टे अक्षरों आदि का उपयोग करते हुये किसी विषय पर सहमत न होने वाले अन्वेषियों की रचना प्रयोग वाद थी ।¹

असल में प्रयोग वाद के सम्बन्ध में ऐसी भ्रान्तियों को जन्मने और पनपने देने के लिये बहुत कुछ अज्ञेय तथा नकेन वादियों की छींचा-तानी भी जिम्मेदार है । एक और अज्ञेय कहते हैं कि प्रयोग का कोई वाद नहीं है । तो दूसरी ओर नकेन वादी उसे वाद सिद्ध करने में अपनी पूरी शक्ति लगा देते हैं । भले ही यह छींचा तानी प्रयोग वाद की स्थापना का श्रेष्ठ तूटने के लिये हुई थी । नकेन अर्थात् नलिन विलोचन शर्मा, कैतरी कुमार और नरेश ने संयुक्त रूप से अपने हस्ताक्षरों सहित " प्रयोगवाद का दश सूत्री " शीर्षक से प्रयोग वाद के घोषणा पत्र का प्रारूप प्रकाशित किया जो निम्न ही उक्त एक वाद सिद्ध करने का प्रयास है । नकेन का घोषणा पत्र " फकिर का " सहित इस प्रकार है:-

प्रयोग दश सूत्रीय:-

=====

१ प्रयोग वाद के घोषणा पत्र का प्रारूप ।

=====

- 1: प्रयोग वाद भाव और व्यंजना का स्थापत्य है ।
- 2: प्रयोग वाद सर्व तंत्र स्वतंत्र है । उसके लिये शास्त्र या दल निर्धारित नियम अनुपयुक्त है ।
- 3: वह महान पूर्व वक्तियों की को निष्प्राण मानता है ।
- 4: वह दूसरों से भी अधिक अपना अनुकरण वर्जित समझता है ।
- 5: उसे मुक्त काव्य नहीं, स्वच्छ काव्य की स्थिति अभीष्ट है ।
- 6: प्रयोग शील प्रयोग को साधन मानता है प्रयोगवाद को साध्य ।
- 7: प्रयोग वाद की इकवचन्य पटीय प्रणाली है ।

- 1: आचार्य: नन्द दुलारे वाजपेयी, आधुनिक साहित्य: पृष्ठ 21

- 8: उसके लिये जीवन और कोश कच्चे माल की खन है ।
 9: प्रयोग वादी प्रयुक्त प्रत्येक शब्द और छंद का स्वयं निर्माता है ।
 10: प्रयोग वाद दृष्टि कोण का अनुसंधान है ।

हस्ताक्षर

मलिन विलोचन शर्मा

कैतरी कुमार

श्री नरेश

कविक का:-

=====

111

भाष्य के लिये देखिये " दृष्टिकोण" मासिक के द्वितीय अंक का प्रथम निबंध ।

121 तुलना कीजिए चरित्र शील और चरित्र वाद प्रगति शील और प्रगति वाद के साथ ।

131

141 जैसे चित्रकार वर्ण योजना का मूर्तिकार प्रस्तर छंद का उ ।

जो भी हो प्रयोगवाद की असन्तुलित और कुंठा जन्म संवेदन शीलता तथा उसकी दुरुह शिल्प और व्यंजना के साथ साथ उसके सरमाये दोरों के वक्तव्य ही प्रयोगवाद को ले बैठे । यद्यपि इसमें आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी जैसे आलोचकों की भ्रान्त धारणाओं का भी प्रेक्ष है ।

प्रयोगवादी कविता का परिचय:-

=====

प्रयोगवाद प्रगति वाद की ही भांति तत्कालीन सामाजिक पृष्ठ भूमि के अनुकूल ही अर्पित हुआ । आधुनिकता के प्रति उसकी सजगता और विज्ञान के बढ़ते चरणों का प्रभाव- दोनों चीजों ने मिलकर भारतीय कवि

मनीषा को यह सोचने पर विवश कर दिया कि कहीं हम एक विजाडित और ठहरी हुई स्थिति में तो नहीं जी रहे । आधुनिक बोध ने सम्पूर्ण प्राचीन मान्यताओं पर एक प्रश्न चिन्ह लगा दिया । क्या भाषा, क्या दर्शन, क्या राजनीति, जीवन के हर क्षेत्र में एक नये चिंतन और नयी सोच का उदय हुआ और इस चिंतन के परिणाम त्वत्स्य भारतीय कवि मनीषा जिस निष्कर्ष पर पहुँचती है वह एक दम चौका देने वाला है । उसे लगता है कि हर क्षेत्र में मान्य का विघटन हो रहा है । और प्रयोगवादी इस विघटन की आधुनिक युग का सबसे बड़ा तत्त्व मानते हैं ।

अस्तु: - - - - - प्रयोगवादी कविता में परिवेश में विघटन से उत्पन्न संकट का बोध एक महत्वपूर्ण तत्त्व बन गया । प्रयोगवादी कविता के परिवेश को समझने के लिये वर्तमान युग के इस विघटन और संकट युग को समझ लेने की आवश्यकता है ।

!!!विघटन:-
=====

प्रयोगवादी कवि और समीक्षक विघटन को आधुनिक युग की सबसे बड़ी वास्तविकता मानते हैं । और वे इसे आधुनिक से पृथक् करके नहीं देखते विज्ञान की प्रगति ने एक अजीब सी विषम परिस्थिति बना दी - - - - - । हम सारे अभियंत्रण के केन्द्र बिन्दु थे । अर्थात् मनुष्य एक विचित्र सी शून्यता में परिवर्तित हो गया । जैसे जैसे विज्ञान प्रगति करता गया मानव जीवन ही नहीं उसका चिंतन और सम्पूर्ण सम्बंध भी तर्कहीन होते चले गये । आस्था, विश्वास और भावनाओं का स्थान प्रयोग विश्लेषण और तर्क ने ले लिया । यही वह स्थल है , जहाँ से मनुष्य का विघटन प्रारम्भ होता है । जैसे कि मनुष्य कोई चेतन प्राणी नहीं,

अधितु एक " रोटोट " हो या एक " कम्प्यूटर " हो ।

वस्तुतः इस विघटन के लिये जहाँ विज्ञान जिम्मेदार है । वहीं प्रथम और द्वितीय विश्व युद्ध की विभीषिकाएँ भी जिम्मेदार है । यह दूसरी बात है कि इन विभीषिकाओं के पीछे भी विज्ञान का हाथ रहा है । " विज्ञान के प्रभाव के साथ मनुष्य के आपसी सम्बन्धों का निश्चय ही विघटन हुआ है । और युद्ध उसके परिणाम के रूप में हमारे सामने आया है । " ¹ यद्यपिलोगों का मत है कि प्रथम महायुद्धके आस पास मानव मूल्यों का विघटन हुआ । किन्तु मेरी धारणा है कि " प्राचीन मान्यताएँ प्रथम महायुद्ध से भी 20-30 वर्ष पूर्व उद्भूत होना प्रारम्भ हो गयी थी । प्रथम महायुद्ध ने सम्भवतः उन पर अन्तिम प्रहार किया था । " ² किन्तु भारत के सन्दर्भ में धर्मवीर भारती द्वितीय महायुद्ध में इस विधान की सम्भाषना खोजते हैं । वे कहते हैं " हम सारे मूल्यों का अवमूल्यन करते हैं----- एक विराट अराजकता एक घातक अन्धकार भय शून्य ।

मूल्यों के इस विघटन ने कैसर की तरह मानवीयता को अन्दर से खोखला बनाना शुरू कर दिया है । प्रकृति पर ज्यों- ज्यों विजय प्राप्त हुई मनुष्य त्यों- त्यों अपने को हारता गया । इसके पहले कि विज्ञान और दर्शन इस संकट का दर्शन करते साहित्य ने इस संकट का सहसास कर लिखा था । ³ डा० नरेन्द्र देव वर्मा विज्ञान और युद्ध के अतिरिक्त एक तीसरा व्याकरण और मानते हैं उनकी मान्यता है कि " लोक तंत्र की भावना भी विचारों का विघटन करने के लिये उत्तरदायी है इस भावना के उदय से सामाजिक और राजनैतिक परिस्थितियों की दासता से मुक्त होकर मनुष्य व्यक्ति निष्ठ, आत्म केन्द्रित तथा सामाजिक और राजनैतिक

1: एस. वी. राय, अंग्रेजी साहित्य और उसकी विचार धारा

पृष्ठ 120

2: धर्मवीर भारती, आधुनिकता का बोध: फरवरी:61 पृष्ठ 40-41

3: नरेन्द्र देव वर्मा: प्रयोगवाद पृष्ठ 72

शक्ति के नियामक के रूप में पराजित हो गया। सामाजिक एवं राजनैतिक शक्ति की व्यवस्था वितरण और प्रयोग में कौटिल्य - कौटिल्य अहंनिष्ठ व्यवस्था केन्द्र की हस्तक्षेपना की विभिन्न सामंजस्य के सुत्रों की अभिवृद्धि करना और इनकी अत्यधिक रूप से वृद्धि हस्तक्षेपों में तारतम्य स्थापित करना आज लोकतंत्र की सबसे बड़ी समस्या रही जा सकती है।*

12 संकट पीछे:-

द्वितीय महायुद्ध के बाद भारतीय जीवन में जिस संकट की संयोजना हुई, वह मानवीय चिन्तन प्रणाली तथा जीवन क्रम से एक विशिष्ट उल्लिखित रूप से उदभूत हुआ है वस्तुतः द्वितीय महायुद्ध के बाद जैसे- जैसे भारत में आधुनिकता के प्रति जागरूकता और लगाव बढ़ा या जैसे आधुनिक चेतना बढ़ी जैसे- जैसे मानवीय चिन्तन प्रणाली तथा जीवन क्रम में विशिष्टता आती चली गयी * यदि आज के युग की अपने आधुनिकत्व के प्रति सबसे अधिक तज्ज्वल पाते हैं तो तब अनुमान किया जा सकता है कि आज का संकट शायद इतना व्यापक है। धर्म - दर्शनज्ञान, विज्ञान, कला, भाषा, इत्यादि सभी क्षेत्रों में इतना गहरा है। जितना किसी युग के अनुभव में कभी नहीं रहा। यह संकट का जोष हमें वर्तमान युग के प्रति जागरूक तो बनाता ही है, साथ ही प्रस्ता और आकर्षित होते हुये भी मनुष्य की चिन्तना संकट के मूल स्रोत की खोज करती है। इसकी परम्परा का अनुमान लगाती है। जानना चाहती है कि क्या वह काल प्रवाह बिना किसी नियम के निर्दिष्ट दिशा से बह रहा है - - - - - या इस प्रवाह के पीछे भी कोई नियम है कोई सक्षम है। * 2

1: नरेन्द्र देव द्वारा प्रयोग वाद पृष्ठ 72

2: धर्मवीर भारती: मानव मूल्य और साहित्य पृष्ठ 19

प्रयोग वादी कविता के परिवेश में एक चीज और है जिसे भुलाया नहीं जा सकता वह है यूरोप के अस्तित्व वादी दर्शन का उदय । "ज्या" पाल सात्र" मानते हैं कि मध्य युग में और उससे पहले मनुष्य अपने जीवन में धर्म से संचालित होता था । औरधर्म यह बताता था कि पृथ्वी का सर्वश्रेष्ठ प्राणी मनुष्य भी किसी अन्य की संरचना है । वह तैतार से पृथक एक अतीन्द्रिय शक्ति स्थापना करता है । जिसे मनुष्य ने पूरी तरह स्वीकृति दे दी थी । किन्तु आधुनिक युग में विज्ञान के प्रचार और प्रसार के साथ उस दैवीय सत्ता के स्थान पर मानवीय सत्ता का उदय हुआ । माना जाने लगा कि मनुष्य अपने में स्वतः सार्वक और मूल्यवान है और इस प्रकार मानवोपरिसत्ता के स्थान पर मानवीय सत्ता की प्रतिष्ठा हुयी ।

कहना न होगा कि अस्तित्व वाद का जन्म इस मानवीय संकट चौथे साथ ही हुआ है । जिसमें किसी अंगोचर मानवो परिसत्ता के सम-कक्ष मनुष्य का कोई अस्तित्व और सार्वकता नहीं है । यह विचार एक प्रकार से मनुष्य को उसके ज्ञान और विज्ञान और कर्मठता से परिचित करके उसे मात्र उस मानवो परिसत्ता के समक्ष खड़े में पड़ जाता है । प्रयोग-वादी कविता के प्रेरणा स्रोतो में यह अस्तित्व वादी संकट चौथे एक महत्वपूर्ण दार्शनिकपूछठ भूमि का काम करता है ।

प्रयोग वादी कविता के संदर्भ में एक बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि प्रयोग वादी समीक्षकों ने आधुनिकता की ओर उसकी समस्या को जिस प्रकार प्रस्तुत किया है वह सत्य होते हुये भी भारतीय परिवेश की अपेक्षा यूरोपीय परिवेश की ही निम्नक अधिक है ।

द्वितीय अध्याय
=====

छायावादी काव्य की मूल प्रवृत्तियाँ
=====

1. प्रकृति चित्रण
2. प्रेम भावना
3. दुःख, वेदना और निराशा
4. आत्मानुभूति की अभिव्यक्ति
5. भाषा, अलंकरण एवं अभिव्यञ्जना शिल्प
6. रहस्य भावना

यूरोप में विकसित होती व्यक्तिवादी विचारधारा अंग्रेजी और फिर बंगला साहित्य के माध्यम से भारतीय नवयुवकों को भी प्रभावित करने लगी थी। व्यक्तिवादी विचार धारा जहाँ राज्य और समाज के बन्धनों को तोड़कर उसे पुन निर्मित करने का प्रयत्न करती है। वहीं व्यक्ति के निजी सुख-दुखों, संवेदनाओं और अनुभूतियों को "हाई लाइट" करती है। भारत में व्यक्तिवादी विचार धारा के आगमन से एक ओर तो भारतीय जनता में स्वतन्त्र चेतना उत्पन्न हुई, समाज सुधार की प्रवृत्ति बढ़ी। दूसरी ओर व्यक्ति के सुख-दुख संवेदना और अनुभूतियों का विस्तार हुआ। भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन और समाज सुधार आदि इसी के सामाजिक एवं राजनैतिक परिणाम थे। जबकि छायावाद उसका साहित्यिक परिणाम।

छायावाद द्विवेदी युगीन इतिवृत्तात्मकता के विरुद्ध उठ खड़ी होने वाली यह काव्य धारा थी जिसका मूलधार व्यक्तिवादी जीवन दर्शन में था। केवल राजनैतिक स्वतन्त्रता ही नहीं, अपितु व्यक्ति की स्वतन्त्रता छायावादी कवियों की कांक्ष थी। और व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के लिये राज्य के बन्धन ही नहीं, समाज के पुरानी मान्यताओं, परम्पराओं, रुढ़ियों और विचारधाराओं, परिघाटियों के भी बन्धन तोड़ने का कतरा उठाना पड़ता है। छायावादी कवियों ने यह कतरा उठाया। छायावादी कवि समाज के स्थान पर व्यक्ति को प्रमुखता देता है अतः उसने व्यक्ति की निजी संवेदनाओं को अपने काव्य का आधार बनाया और उनका विस्तार किया। उसने काव्य परम्परा को भी तोड़ा और एक नई काव्य परम्परा की स्थापना की। प्रयोगवाद से तुलना के लिये

छायावाद की मूल प्रवृत्तियों निम्न लिखित हैं:-

II प्रकृति चित्रण:-
= = = = =

सामाजिक स्वाधीनता और वैदित्तिक विकास की भावना यदि एक ओर प्राचीन साहित्यिक मर्यादाओं के विरोध के रूप में प्रकट हुई तो दूसरी ओर प्रकृति-प्रेम के रूप में। प्रकृति-प्रेम से सामाजिक स्वाधीनता और वैदित्तिक विकास का क्या सम्बन्ध है ? यह सहता समझ में नहीं आता। लेकिन जब हम स्वच्छन्दता वादी कवियों के कुछ से यह सुनते हैं कि कविता करने की प्रेरणा उन्हें प्रकृति से मिली तो सोचना चाहिए कि प्रकृति में आखिर वह कौन सी शक्ति थी। जिसने मुक्ति कायी स्वच्छन्दता वादी कवि को सबसे अधिक आकृष्ट किया। देश-प्रेम का आरम्भ प्रकृति-प्रेम से किस प्रकार होता है। इसे समझाते हुये आचार्य शुक्ल कहते हैं।-----

“यदि किसी को अपने देश से प्रेम है तो उसे अपने देश के मनुष्य, पशु, पक्षी, लता, गुल, पेड़, पत्ते, कण, पर्वत, नदी, निर्द्वार सबसे प्रेम होगा।”¹ इसी लिये पण्डित राम नरेश त्रिपाठी का “पथिक” अपनी “प्रिया” से कहता है।-----

“यह इच्छा है नदी और नालों का पेश कर्लंगा
गाता हुआ गीत मत्सी से पर्वत से उतरलंगा
यह इच्छा है बन सुगन्ध फूलों के बीच वसूंगा
यह इच्छा है कुंज- कुंज में वायु बना बिचलंगा।”²

=====

III आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : चिन्तामणि: पृष्ठ: 76

121 पण्डित रामनरेश त्रिपाठी: पथिक: पृष्ठ: 32

वास्तविकता यह है कि तत्कालीन युवक प्रकृति की ओर प्रकृति के लिये नहीं अपितु पुरानी समाज व्यवस्था से उत्पन्न घुटन से बचने के लिये आकृष्ट हुआ। उसे प्रकृति के स्वर्ग में पशु, पक्षियों, नदी, नानो, हवा, पानी, घाटन, सभी में उन्मुक्त और निरंकुश स्वच्छन्दता के दर्शन हुये। पुरानी समाज व्यवस्था में उसकी जो वैदिकता खो गयी थी। उसे उसने प्रकृति में खोज लिया।

पिरोथा भात प्रतीक होते हुये भी यह सत्य है कि विज्ञान के द्वारा प्रकृति से संबंध करते हुये। आधुनिक मानव ने उससे प्रेम किया। जिससे संबंध उसी से प्रेम यह नई बात नहीं है। मनुष्य भयंकर वन्य प्रकृति से संबंध करता व उसे अपने अनुकूल बना कर उसके सौंदर्य का उद-घाटन करता चला आ रहा है।

इस प्रकार सामाजिक स्वाधीनता और प्राकृतिक मुक्ति से छायावादी कवि को प्रकृति का जो परिचय प्राप्त हुआ है उसे वह एक दम नूतन जीवन दृष्टि के समान लगा -----

“छुले बलक पैली सुवर्ण छवि
जगी सुरभि डोलै मधु पाल
स्यंदन, कपन और नयजीवन
सीखा जग ने अपना ना-”²

निराला के तुलसीदास के भी सम्मुख जब चित्रकूट में तारु विरह्य आये तो उनके भी मन में नय भाव पैदा हुये। प्रकृति ने उनसे ऐसी अभूत पूर्व भाषा में बातें की कि वे उसे अनुभव करते हुये भी ठीक-

=====

॥॥ सुमित्रानन्दन पंतः उच्छ्वातः पृष्ठः ११५

ठीक समझ न सके ।

प्रकृति दर्शन से छायावादी कवि को जो नयी जीवन दृष्टि मिली उसके सम्पूर्ण दृष्टिकोण को ही बदल दिया विशेष रूप से प्रकृति सम्बन्धी सौंदर्य दृष्टि को । उसे पहली बार प्रकृति की स्वतंत्र सत्ता का बोध हुआ ।

पहले अधिक से अधिक प्रकृति का चित्रण या तो कथा प्रसंग में किया जाता था । अथवा किसी मानवीय क्रिया की पृष्ठ भूमि में अतः पिछले काव्य में प्रकृति का चित्रण या तो अप्रस्तुत विधान के रूप में हुआ अथवा उद्दीपन के रूप में । किन्तु छायावादी कवि ने प्रकृति को कथा प्रसंग और मानव क्रिया की पृष्ठ भूमि से पृथक् एक मानवी के रूप में देखा । उसने प्रकृति का चित्रण परम्परा से हटकर आलम्बन रूप किया । उसने प्रकृति को उतना महत्व दिया कि किसी अपरिचित और नन्हें से फूल को भी स्वतंत्र रूप से अपनी कविता का विषय बनाया । "साध्या" "औस की बूँद" "जूही की कली" आदि इसी प्रकार की कविताएँ हैं । इस प्रकार उपेक्षित प्रकृति को छायावादी कवि ने संघार दिया । और उसे मध्य-युगीन बन्धनों से मुक्त किया । यदि प्रकृति ने मध्ययुगीन बन्धनों से मानव को मुक्त किया तो मानव ने भी बदले में प्रकृति को मुक्त किया ।

संन्या और निम्ना प्रकृति के पूर्व परिचित हाथ हैं ।

कविजन न जाने कब से उनका वर्णन करते आ रहे हैं । लेकिन छायावादी कवियों ने इनमें नवीन सौंदर्य देखा । द्वितीय युगन कवि की

दृष्टि इनके प्रति पूर्णतः रागात्मक थी । द्वितीय युगीन कवि "हरि -
औध" और निराला की सन्ध्या विषयक पंक्तियों की तुलना से यह
बात स्पष्ट हो जाती है --

*दिवस का अवसान समीप था
गगन का कुछ लोहित हो चला
तब शिखा पर थी अब राजती
कमलनी कुल चलन की प्रभा*¹

x

x

x

*अलसता की लता
तबी नीरवता के कन्धे पर डाले जाहें
छोह ली अम्बर धध से चली*²

प्रस्तुत पंक्तियों में " गगन का लोहित होने में" और "तब"
शिखाओं पर " कमलनी" कुल चलन"की प्रभा सुगोभित होने में कवि की
एक वस्तु परक निरपेक्ष दृष्टि स्पष्ट झलकी है । जबकि निराला की
कविता में सन्ध्या का आलम्बन स्व में चित्रण ही नहीं किया गया ।
अपितु उसका मानवीकरण भी कर दिया गया है । कवि की दृष्टि
इसके प्रति पूर्णतः सापेक्ष और रागात्मक है ।

12। प्रेम भावना:-

=====

मनुष्य की सहजात वृत्तियों में सबसे प्रधान स्थान रति का
है । यह रति ही मनुष्य का मनुष्य से ही नहीं अपितु सम्पूर्ण पराधर

=====

11। हरिऔध : प्रिय प्रवातः प्रथम सर्गः पृष्ठ 1

12। निराला: अपरा: पृष्ठ. 22

प्रकृति से प्रेम सम्बन्ध जोड़ती है। विषम लिंग के प्रति आकर्षण का सिद्धान्त सर्व भौम है। "इलेक्ट्रॉन" का "प्रोटॉन" से आकर्षण जितना परमाणु जगत का सत्य है। उतना ही स्त्री के प्रति पुरुष का आकर्षण व्यवहार जगत का सत्य है। छायावादी कवि भी इसका अपवाद नहीं है। इस सत्य को वह सर्वत्र देखता है--

"अन्निं ता लोठ लोठ में
हर्ष में और शोक में
कहाँ नहीं है प्रेम
साँस ता सबके उर में।"

छायावादी काव्य की यह प्रेमाभिव्यक्ति अपने पिछले सम्पूर्ण काव्य की प्रेमाभिव्यक्ति को अपने में अन्तर्हित किये हुए है।

उसमें एक ओर यदि रहस्यवादी कृतियों जैसी आलौकिकता है। तो दूसरी ओर रीति कालीन कवियों जैसी लौकिकता भी है। यह दूसरी बात है कि उनका प्रेम किसी न किसी अर्थ में दोनों से ही भिन्न है। रहस्यवादी कवि जहाँ प्रकृति में ईश्वर के दर्शन कर उस पर मुग्ध होता था। वहाँ छायावादी कवि प्रकृति पर मुग्ध नहीं है। किन्तु वह उसमें ईश्वर के नहीं अपनी प्रेमिका के दर्शन करता है। रीति कालीन कवियों की तरह लौकिकता छायावादी कविता की विशेषता है उसका प्रेम अतीन्द्रिय ईश्वर के प्रति नहीं। अपितु जीती जागती लौकिक प्रेमिका के प्रति है। किन्तु रीति कालीन कवियों जैसी स्थूलता

=====

॥॥ सुमित्रानन्दन पंत: उच्छ्वास: पृष्ठ: 180

उसमें नहीं है वह सूक्ष्म है । इनके प्रेम की समानता बहुत कुछ रीतिकाल के रीति मुक्त कवियों के प्रेम से दिखाई जा सकती है ।

द्वितीय युगीन वर्णनाओं के कारण इन के प्रेम की अभिव्यक्ति सीधे- सीधे रीति कालीन कवियों की भीति अभिधा की मूलक नहीं रही अपितु द्वितीय युगीन वर्णनाओं के रहते हुये भी अपनी प्रेमाभिव्यक्ति को नये- नये माध्यमों से इन्होंने व्यंजित किया । स्त्री पुस्त्य के प्रेम के सभी क्रिया व्यापार इन्होंने प्रकृति के माध्यम से व्यंजित किये ।—

“सैवालिन जाओ मिलो तुम सिन्धु से
अनिल आलिंगन करो तुम गगन का
चन्द्रिका घूमो तरंगों के अधर
उड़गलों गाओ पवन पीना वजा”¹

इसमें मिलन आलिंगन घुम्बन सभी क्रिया व्यापार स्थूल है । किन्तु इन सब के रहते कवि प्रकृति के माध्यम से अपनी प्रेमिका को वाय-वीय ही रहने देता है ।

“मूँट पलकों में प्रिया के ध्यान को
काम से अब हृदय इस आच्छान को
त्रिभुवन की प्री भी तो भर सकती नहीं
प्रेयसि के शून्य पावन स्थान को ।”²

131

दुःखः वेदना और निराशाः—

=====

मानव मन की मूल प्रवृत्तियों में प्रेम के बाद कल्ला ही एक

=====

111 सुमित्रानन्दन पंत : ग्रन्थि: पृष्ठ: 125

121 वही : पृष्ठ 108

ऐसी वृत्ति है जो सम्पूर्ण विश्व के मानव को एकात्मकता को शिक्षा देती है । प्रेम जहाँ मानव में साहचर्य की प्रवृत्ति को जन्म देता है । वही कल्पा सहानुभूति को । प्रस्तुतः साहचर्य के लिये सहानुभूति का होना परमावश्यक है । मूलतः कल्पा प्रेम का ही परिणाम है । आतः जहाँ प्रेम होगा कल्पा वहीं जन्म लेगी । आदि कवि की वाणी में उद्बन्ध कल्पा "कौन्य मैयुन" के प्रति उनके प्रेम का ही दुःखात्मक प्रतिफलन था । यहीं प्रेम के संयोग और वियोग दो पक्ष हो जाते हैं । यदि व्यावहारिक जगत का जन्म दो विपरीत लिंगों के संयोग का परिणाम है, तो काव्य जगत उनके वियोग का परिणाम है। इसी लिये ध्वनि वादी आनन्द वर्धनाचार्य ने श्लोक की उत्पत्ति शोक से मानी है।¹ इसी सत्य को छायावादी कवि पंत इस प्रकार उद्घटित करते हैं-----

• वियोगी होगा पहला कवि
आह ते उपजा होगा गान
उमड़कर आँखों से पुष्पाप
वहीं होगी कविता अनजान ।²

अपनी प्रेमानुभूति को सीधे अभिव्यक्ति न कर पाने का कारण द्विवेदी युगीन कर्जनाएँ थी । वह अपने प्रेम में व्यावहारिकता की अपेक्षा काव्य-निक अधिक है । उसकी कल्पना जैसी प्रेयसि है व्यावहारिक जगत में उसकी प्रेयसि का तब उससे सर्वथा भिन्न है वह प्रेयसी के सम्मुख अपनी प्रेमाभिव्यक्ति जिस सहज ढंग से प्रस्तुत करना चाहता है । व्यावहारिक जगत में वैसा सम्भव नहीं । फलतः व्यावहारिक स्तर पर छाया-वादी कवि एक असफल प्रेमी है । कल्पा निराशा-वेदना इसी के

=====

111 आनन्द वर्धनाचार्य: ध्वन्यालोक: पृष्ठ: 1/5

121 सुमित्रा नन्दन पंत: पल्लव: पृष्ठ: 65

परिणाम है। उसे संयोग के बाद वियोग एक धोखा प्रतीत होता है।—

*मादक थी मोदमयी थी
मन पहचाने की झीड़ा
अब हृदय हिला देती है ।
वह मधुर प्रेम की पीड़ा।*

उसकी कल्पना में उसका प्रेम शाश्वत है । जबकि जगत में क्षण भंगुरता
उसकी वेदना का मूल है । वीर दर्शन के अनुसार " संसार में धारों
और दुःख ही दुःख है । जन्म भी दुःख है मरण भी दुःख है , अश्रिय
लोगों का संयोग भी दुःख है प्रिय लोगों का वियोग भी दुःख है ,
इच्छा करने पर किसी चीज का न मिलना भी दुःख है, सारे भौतिक
अभौतिक पदार्थ दुःख ही हैं । दुःख राग या लुब्धा से पैदा होता है।"
छायावादी कवि ने इस वीर सत्य को भली भाँति अनुभव किया है ।
उसे अपनी रागात्मकता पर निरंतर आघात झेलने पड़े, वह अपनी
वेदना में डूबा हुआ अपने को एकाकी अनुभव करता है ।-----

*संघर्ष से टूटा हुआ
दुर्भाग्य से झूटा हुआ
परिवार से छूटा हुआ
कितना अकेला आज मैं-2

प्रकृति में सबको उन्मुक्त रति क्रिया में रत देख कर कवि को अपना
हृदय सब भाँति कंगाल दुष्टित गौघर होता है । उसके प्रेम के भीतर
उसकी वेदना भी अतीव है, अपरिभ्रित है , अघाह है । यही कारण

111 चयनकर प्रसाद: अंशु : प्रसाद ग्रन्थावली: पृष्ठ 305

121 चयन: रवीन्द्र संगीत पृष्ठ: 34

है कि उसका प्रेम इतना सुधम हो गया है कि अतीन्द्रिय लगता है । और उसकी प्रेमिका इतनी वायवीय हो गई है कि अलौकिक लगती है ।

141 आत्मानुभूति की अभिव्यक्ति:- =====

संवेदन शीलता और कल्पना जो व्यक्ति वाद के मूल तत्त्व है, स्वच्छंदता वाद में महत्व पूर्ण स्थान रखते हैं । स्वच्छंदता वादी कवि का अहमं सदैव सचेत रहता है । अतः उसके अनुभव की सीमाओं में जो कुछ भी आता है उसे वह अपने कल्पना प्रधान और संवेदन शील अहमं के रंग में रंग कर देखता है उसकी चेतना वर्तमान से उठकर अतीत, भविष्य प्रकृति के एकांत स्थल कल्पना लोक अथवा अलौकिक या आध्यात्मिक जगत में रमना पसंद करती है । अतः वह प्रत्यक्ष स्व विधान में उतना तत्पर नहीं होता जितना कि स्मृति और कल्पित स्व विधानों में । उसके चित्र इसी लिये सजीव होते हैं ।

बीसवीं शताब्दी में पूँजीवाद के विकास तथा कई अन्य कारणों से मध्यम वर्ग की शिक्षित जनता उत्तरा उत्तर व्यक्तित्वादी होती गई । व्यक्ति वाद के विकास से हिन्दी कविता अन्तर्मुखी हो गई, काव्य जगत काकेन्द्र कवि का अहमं बन गया । और व्यक्तित्वागत अनुभूतियों की अभिव्यक्ति ने ही कला का स्वत्व धारण कर लिया । इस प्रकार छायावाद में आत्म परक कविता का प्रखरन हो गया । कविता में सर्वत्र कवि के मनोवैगों की तीव्रता उभर कर आने लगी ।

“घंक्ता स्नान कर आवे, घंटिका पर्व में जैसे

उस पावन तन की शोभा, आलोक मधुर थी रैसे”¹

प्रस्तुत पंक्तियों में सौंदर्य की जो अनुभूति तीव्र आवेग के साथ अभि-
व्यंजित हुई है। वह नितांत आत्मारक, कल्पना प्रधान और मनोवेग
से भरी हुई है।

वस्तुतः पिछली कविता में परम्परा का पालन करते रहने
से कवियों को व्यक्तिगत भावों और आवेशों को व्यक्त करने का अवसर
नहीं रहता था। परम्परा का बंधन टूट जाने से कवि को अपने मनो-
वेगों को प्रकट करने का अवसर मिला।

आत्मानुभूति की अभिव्यक्ति छायावादी कविता में दो
प्रकार से हुई है— ४क। बाह्य वस्तु को अपनी भावना और कल्पना के
‘रंग’ में रंग कर। ४ख। अपने ही सुख-दुख, आशा- निराशा तर्क और
तत्त्व चिन्तन को स्पष्ट रूप से व्यक्त करके। छायावाद की प्रारम्भिक
रचनाओं में आत्माभिव्यक्ति की पहली वाली प्रणाली अधिक दिखाई
देती है। जबकि बाद वाली कविताओं में दूसरी वाली प्रणाली का
आधिक्य है। पहली प्रकार की अभिव्यक्ति के रूप में पंक्त की अनेक
कविताएँ उद्धृत की जा सकती हैं —

“तुम्हारे छूने में था प्राण

तंग मैं पावन गंगा स्नान”²

=====

111 बयलकर प्रसाद: अतुल : प्रसाद ग्रन्थावली: पृष्ठ: 310

121 तुमित्रानन्दन पंत: बलविनी: 187

"प्राण तुम लघु गात
नील नभ के निकल मैं लीन
नित्य वीरख निरंग नवीन
निखिल छवि तुम छवि हीन
अप्सरस सी अज्ञात"।

व्यक्तिगत सुख-दुखों, आशा- निराशा, आदि का सीधा वर्णन करने में छायावादी कवि आरम्भ में तो संकोच करते थे। और किसी लज से या आचरण में अपनी भावनाओं की व्यक्त करते थे। कामायनी में ब्रह्मा का सौंदर्य वर्णन तथा ब्रह्मा और मनु का संवाद इसी प्रकार का है। किन्तु सन 1931 के बाद इन कवियों ने सभी आचरण उतार कर रख दिये और कुलकर अपने निजी मनोभावों की अभिव्यक्ति करने लगे—

"रो रो कर सितक तिलक कर
कहता मैं कल्प कहानी
तुम तुमन नौचते तुम्हारे
करते जानी अनजानी ।"²

x x x

"मे जल मुखे भुलावा देकर
मेरे नाविक धीरे-धीरे
चित निजम कानन में लहरी
अम्बर के कानों में लहरी
निखिल प्रेम कथा कहती
तब कोला हल की अपनी रे ।"³

=====

111 सुमित्रानन्दन पंत: गुन्जन: पृष्ठ 265

121 जयशंकर प्रसाद: आँसू: पृष्ठ: 306: प्रसाद ग्रन्थावली

131 जयशंकर प्रसाद: लहर: प्रसाद ग्रन्थावली पृष्ठ: 340

इतना ही नहीं इन कवियों का आत्मानुभूति का आवेग इतना बढ़ा कि इनकी कविताओं में सर्वत्र " मैं " के दर्शन होने लगे । निराला ने स्पष्ट कहा -----

• मैं ने मैं जैसी अपनायी
देखा एक दुखी : निज भाई
दुख : की छाया पड़ी हृदय में
झट उमड़ वेदना आयी •।

15। वैयक्तिकता :- =====

डॉ० नामवर सिंह के अनुसार छायावादी कवि निव्यक्तिकता का सारा आवरण उतार कर एक आत्मीय की भाँति अत्यंत निजी ढंग से बातें करता है । इसकी कविता में " हृदय के भाव किसी कल्पित कहानी अथवा पौराणिक पुरुषों के माध्यम की अपेक्षा नहीं रखते । अपने मन की बातें कवि सीधे- सीधे अपने ही मुख से उत्तम पुरुष में कह रहा है । और पाठक को इस तरह उन भावों के साथ तादात्म्य अनुभव करने में बड़ी सुगमता होती है ।" ² इस निजता और आत्मीयता के पीछे आधुनिक युवक का पूरा वैयक्तिकत्व है जो अपने को सीधे- सीधे अभिव्यक्त करने की सामाजिक स्वाधीनता चाहता है । उसने महसूस किया कि वह अपनी बात निजी ढंग से ही अच्छी तरह कह सकता है ही-ति कालीन कवियों की भाँति उसे किसी राधिका कन्हैया के कहाने की आवश्यकता नहीं थी । परंतु ने उच्छ्वास और अस्तु की बालिका मैं सीधे- सीधे शब्दों में अपना प्रणय प्रकट किया उच्छ्वास की सरल बालिका कोई रहस्यात्मक

=====

11। निराला : तुलसी दास : पृष्ठ : 14

12। नामवर सिंह : छायावाद : पृष्ठ : 20

शक्ति नहीं थी। पंत ने स्पष्ट कहा है ---- "बालिका मेरी मनोरम मित्र थी।"

इस व्यक्तिवादी आत्माभिव्यक्ति से छायावादी कवियों को एक लाभ भी हुआ। इनकी कविताओं में आत्मीयता, रागात्मकता लयात्मकता, तथा तन्मयता की वृद्धि हो गयी। जो भक्ति युगीन आत्म निवेदनो के अनुस्य तथा द्वितीय युगीन इतिवृत्त्याकता के विपरीत थी। जो भी हो छायावादी कवियों ने प्राचीन रुढ़ियों और मान्यताओं के मत्वे- तले रहे हुये व्यक्ति को बाहर निकाला है और उसकी पुन प्रतिकृता की है।

16। भाषा अलंकरण एवं अभिव्यञ्जना:-

=====

छायावाद जहाँ काव्य या विषय वस्तु के स्तर पर नवीनता से भरा था वहीं अलंकार, भाषा और अभिव्यञ्जना शिल्प की दृष्टि से भी उसमें पर्याप्त नाविन्य था। यहाँ हम देखेंगे कि उनकी भाषा, अलंकरण एवं अभिव्यञ्जना से सम्बन्धित प्रवृत्तियों का विश्लेषण करेंगे।

1क। भाषा:-

=====

भाषा के क्षेत्र में छायावादी कवियों का मुकाबला ब्रजभाषा के पद लालित्य से रहा। छायावादी कविताओं का प्रारम्भ भी ब्रज भाषा से हुआ। पंत, प्रताप, निराला, आदि की प्रारम्भिक कविताएँ ब्रजभाषा में ही हैं। ब्रज भाषा जैसा पद लालित्य लाने के लिये छायावादी कवियों ने बंगला के पद चिन्हास का अनुकरण किया है।

संस्कृत शब्दों को बंगला ने जो रेगिमा प्रदान की थी वही छायावादी कवियों ने भी की है। भाष के अनुस्यू ही इनकी पद रचना होती थी। उनके लिये वह पदों का चयन बहुत सौचसम्पन्न कर करते थे। राष्ट्र की कालिमा समाप्त होने के लिये प्रसाद द्वारा प्रयुक्त "कालिमा धुने लगी" अधिक भाव व्यंजक है। निराला भी-----

“है अमानिगा उगलता गगन धन अंधकार”।

गगन द्वारा अंधकार का उगला जाना कहकर बहुत गहरी व्यंजना करते हैं। अन्यथा हो गया मैं वह बात नहीं आ सकती थी। झलना ही नहीं इन कवियों की कविताओं में संस्कृत निष्ठ पदावली के साथ-साथ लोक भाषा के शब्दों का भी प्रयोग दर्शनीय है। “मुराने तदभ्य शब्द अपनाने तथा नये तदभ्य शब्द गढ़ने के अतिरिक्त छायावादी कवियों ने अपने आस पास प्रचलित बोली के शब्द हाँसे- हाँसे को अपना कर “मधुर पिछ हाँसे- हाँसे बोली” लिखना फर्खीबाद की म्हादेवी के लिये स्वाभाविक ही था। इसी तरह यदि पंत ने “समीप” के लिये “नवल कलियों के बोरेँ ह्रूम” लिखा तो बड़ी बोली प्रदेश के “बोरे” रहने का ही परिचय दिया। दूसरी ओर प्रसाद की भाषा में कहीं-कहीं बनारसी बोली का पुट दिखायी पड़ेगा तो निराला की बोली में घैले छाड़ी का छँक।²

भाषों की समुचित अधिव्यंजना के लिये भाषा की समर्थ बनाने के प्रयत्न में छायावादी कवियों को कभी-कभी नये शब्द भी गढ़ने पड़े। इस गढ़ने में कहीं कहीं व्याकरण की सीमाओं का

=====

111 निराला: राम की शक्ति पूजा: अपरा: पृष्ठ 47

121 डा० नामवर सिंह: छायावाद: पृष्ठ: 115

का ध्यान भी नहीं रखा गया। शब्द निर्माण में छायावादी कवियों ने कभी-कभी अंग्रेजी के सुन्दर पदों का छायानुवाद भी किया। जैसे 'फ्रेड्रिक हार्ट' के लिये भजन हृदय: "हैप्पेन्ली लाइट" के लिये स्वर्गीय प्रकाश, "गोल्डेन ड्रीम" के लिये सुनहला स्वप्न आदि।

छायावादी कवियों की भाषा के सम्बन्ध में एक बात और ध्यान देने योग्य है कि इन कवियों ने भाषा को कोमल बनाने का विशेष प्रयत्न किया है। शब्द चयन में जहाँ कोमल ध्वनियाँ चाले, कोमल अर्थ की अभिव्यक्ति करने वाले शब्द इनने चुने हैं, वहीं इनकी भाषा में स्त्री लिंग शब्दों का प्रयोग भी बहुत ताकत में हुआ है। इस कोमलता की सिद्धि के लिये भाषा में परतगों एवं सहायक क्रियाओं का प्रयोग भी इनने बहुत कम किया है। समास युक्त पदावली इनकी विशेषता है। क्रियाओं के प्रयोग में भी संस्कृत के "शप्" प्रत्यय का प्रयोग है और संस्कृत की ही भाँति विशेषणों से वाक्य का काम चला लिया है।

१४। अलंकरणः

छायावादी कवियों के सौंदर्य बोध में जो विकास हुआ सौंदर्य के प्रति रुचि में जो परिवर्तन हुआ, उसने इनके काव्य में अलंकरण की पद्धति को ही बदलकर रख दिया। इनके काव्य में औपम्य विधान के क्षेत्र में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ। नवीन औपम्य विधान में उपमा साहस्य के स्थान पर प्रभाव साध्य के आधार पर दी जाने लगी। साथ ही उपमारै विराट रहने लगी। उनमें चित्रा-

त्वग्गता, विशेषकर सूक्ष्म केन्द्रिय चित्र उड़ि होने लगे ।

पिछली कविता में हाँ उपमेय और उपमान में तात्पर्य की अधिक महत्त्व दिया जाता था वहाँ छायावादी कविता में प्रभाषोत्पाद-
कता पर अधिक ध्यान दिया गया उपमेय की प्रभाषोत्पादकता के अनुस्य
ही उपमान भी प्रभाषोत्पादकता होने लगी । छायावादी कवियों की
इस विशेषता पर सबसे पहले आचार्य रामधन्य शुक्ल का ध्यान गया ।
पत दारा " धीरे- धीरे उठ तंशक्य"। कहने में बादलों के आकार का
नहीं अपितु उनके धीरे- धीरे उठने का अधिक महत्त्व है और "तंशक्य" में
भी यह गुण धर्म है । अतः तंशक्य को बादलों का उपमान इस धर्म के कारण
ही बनाया गया है ।

इन उपमानों में दूसरी बात ध्यान देने योग्य यह है कि ये
उपमान आकार ताभ्य से घृयक हो जाने के कारण उपमेय की अपेक्षा सूक्ष्म
है कहीं- कहीं आतीन्द्रिय भी- पिछरी अलकें ज्यों तर्क जाल । "पिछरी अलकें"
की अपेक्षा तर्क जाल के धर्म एक ही है । डा० नगेन्द्र का छायावाद के प्रति
यह कथन कि वह " त्यूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह है"। इस दृष्टि से एक
दम ठरा ठतरता है । भले ही डा० नाममार सिंह को उसमें अव्यक्ति दोष
दिखाई दे ।

उपमानों के क्षेत्र में छायावादी विराट कल्पना का भी बहुत
बड़ा हाथ रहा है । इसकी सहायता से इन कवियों ने विराट को भी
विश्व में बाँधने का साहस किया है -----

=====

॥॥ जयदेव प्रतापः कामायनीः इहा सर्गः पृष्ठः 176

विहंगम ता बैठा गिरि पर

सुहाता है विशाल अम्बर

इन पंक्तियों में पहाड़ के ऊपर आकाश को गिरि पर बैठे पक्षी के रूप
विम्ब में बांध दिया गया है। निश्चय ही यह पक्षी आकाश जैसा ही
पिराट होगा। इसी प्रकार-----

*तापत बाला गंगा निर्मल

सेटी है प्रान्त क्लान्त निष्कल*

अभिव्यञ्जना:-

=====

आपनी भाषों की और अनुश्रुतियों की नवीनता के लिये इन्होंने
नवीन अभिव्यञ्जना शिल्प का भी निर्माण करना पड़ा भाषों का आवेग
अपने लिये नवीन मार्ग खोज ही लेता है। इसीलिये वाणी के अनेक मार्ग
निश्चय ही नवीन है। उसमें नवीन प्रतीक तथा विशेषण विषय, नये
मुहावरों का प्रयोग स्पष्ट दिखाई देता है। इनके माध्यम से छाया-
वादी कवियों को जहाँ अभिव्यक्ति को स्पष्ट और भावमय बनाने में
सहायता मिली है। वहीं समतत्कार सृष्टि में भी सहायता मिली है।

छायावादी प्रतीक विधान चित्रात्मकता का पक्षधर है।

सभी प्रतीक मिलकर एक विम्ब खड़ा कर देते हैं। और काव्य को सहज
घोच्य बना देते हैं। इन प्रतीकों के चयन में छायावादी कवियों ने भले
ही बहुत नवीनता उत्पन्न न की हो, किन्तु पुराने ही प्रतीकों में नवीनता

=====

॥॥ सुमित्रा नन्दन पंत: पन्त ग्रंथावली: गुंजन: पृष्ठ २७५

भर दी है । उनके प्रतीक अधिकतर मनोवैज्ञानिक है । काम, लज्जा, क्रोधा, जाग्रति, संज्ञा आदि ऐसे ही प्रतीक है । साथ ही उनके प्रतीक अधिकतर रहस्यात्मक हैं । आध्यात्मिक है ।-----

“यह मन्दिर का दीप हूँ नीरव जगह दो
चरणों से चिन्हित आभिनन्द की भूमि तुनहली
प्रणत निरों के अंक लिये यमुन की दहली
हरे सुमन बिखरे अक्षत सित
पल के मन के पैर पुजारी चिन्मयी तो गया ।”

यहाँ मन्दिर का दीप ऐसा ही प्रतीक है ।

छायावादी कवियों जैसा विम्ब विधान दुर्लभ है । अनेक भाषों के ऐसे स्पष्ट चित्र प्रस्तुत किए गये हैं कि आश्चर्य होता है ---

“उड़ गया अचानक लो, मूँधर
फड़का अपार पारद के पर ।
रव शेष रह गए हैं निहारे ।
है टूट पड़ा भू पर अम्बर ।
पंख गये घरा में समय शास ।
उठ रहा धुँधल जल गया ताल ।”

इसी प्रकार गन्ध का चित्र प्रस्तुत करना बड़ा कठिन है किन्तु पंख ने उसे भी बाँधा है-- “ उड़ती भीखी तैलाक्ष गन्ध” ।

=====

॥ १ ॥ महादेवी वर्मा: कवित्री: पृष्ठ: 301

॥ 2 ॥ सुमित्रा नन्दन पंत: पञ्चमिनी: पन्त ग्रंथावली: पृष्ठ 180

इन कवियों ने अपने भाषा-अभिव्यक्ति के लिये नयी मुहावरें
दारी भी प्रस्तुत की है। जथा उपमानों का प्रतीकों की तरह प्रयोग
किया है।-----

“ज्वा का वा उर में आवात
मुकुल का मुख में सुदल विकास
पाँदनी का स्वभाव में वात
विचारों में बय्यों के सात ।”

यहाँ ज्वा मुकुल, पाँदनी रूप उपमान है। किन्तु जिस
सांकेतिक अर्थों में ये प्रयुक्त हैं, जो संकेत ये करते हैं, वह सर्वथा नवीन
है। यह दूसरी बात है कि कवयित्री यह मंगिमा नवीन होने के कारण
हिन्दी कविता में बहुत दिनों तक दुर्लभ और अज्ञेय रही। किन्तु अब
यह मुहावरें दारी चल निकली है और सहज हो गयी है।

इसी प्रकार विशेषण विपर्यय के द्वारा भी इन कवियों ने
अपनी अभिव्यक्ति शक्ति की कुशलता का परिचय दिया है। जैसे “तुलना
उपक्रम”, “जीवित छाया”, “मूर्च्छित आसय”, “बृद्ध अनुभव”, “नील झंकार”
आदि।

प्रस्तुत: अभिव्यक्ति शिल्प के ये सभी प्रयोग छायावादी
कवियों की कल्पना प्रवणता के ही परिणाम हैं। जिस कवि के पास
जितनी कल्पना शीलता, प्रतिभा - नम नमोन्मेष शालिनी, या स्वयं
प्रकाश ज्ञान होगा वह अभिव्यक्ति के उतने ही नवीन मार्गों की खोज
कर सकेगा। ऐसे कवि युग दुष्टा ही नहीं युग सृष्टा भी होते हैं।

रहस्य भावना:-

=====

छायावादी कविता की विशिष्टता है। छायावादी कवियों का "तुम" अस्पष्ट होने के कारण उनकी प्रेमाभिव्यक्ति में रहस्यात्मकता आ गई है। प्रसाद का "आईसू" हो या महादेवी के गीत यह रहस्यात्मकता सर्वत्र विद्यमान है। किन्तु फिर भी छायावादी कविता को रहस्यवादी नहीं कहा जा सकता। रहस्यवाद जहाँ प्रकृति में ईश्वर के दर्शन करता है वहाँ छायावाद उसमें प्रेयिका के दर्शन करता है। अतः रहस्यवाद और छायावाद के प्रेम में मूल भूत अन्तर है। एक का झक हकी की है और दूसरे का झक मजा जी। छायावादी कवियों का "प्रिय" रहस्यवादियों के ईश्वर की तरह अस्पष्ट तो है किन्तु अलौकिक नहीं है। वह इसी लोक का है।

महादेवी वर्मा के अनुसार---- आज गीत में हम जिसे नये रहस्यवाद के रूप में ग्रहण कर रहे हैं वह इन सबकी विशेषताओं से युक्त होने पर भी उन सब से भिन्न है। उसने पराविद्या की अपार्थिवता ली, वेदान्त के अद्वैत की छाया मात्र ग्रहण की, लौकिक प्रेम से तीव्रता अधार ली और इन सबको कबीर के सांकेतिक दाम्भत्य-भाव-सूत्र में बाँध कर एक निराले स्नेह संबंध की सृष्टि कर डाली जो मनुष्य के हृदय को आलम्बन दे सका, पार्थिक प्रेम के ऊपर उठा सका तथा मस्तिक मय बना सका।¹ वे यह भी मानती है कि "इस बाद ने रुढ़ि बन बहुताँ को भ्रम में डाल दिया है। प्रसाद के आईसू का द्वितीय संस्करण

=====

॥॥ महादेवी वर्मा: यामा: अपनी बात: पृष्ठ: 8।

इस भ्रम के बाद बहुत बढ़ा गया । स्वयं महादेवी के अनेक गीत उसमें अलौ-
किकता का भ्रम उत्पन्न करते हैं ।

वस्तुतः छायावादियों का संकोच, कल्पना शीलता तथा उनकी
अनुभूति की कोमलता उनके प्रिय रहस्यमय और उनकी भावनाओं को रह-
स्यात्मक बना देते हैं । महादेवी जी का यह कथन सत्य है कि " रहस्य-
वाद आत्मा का गुण है, काव्य का नहीं यदि काव्य का गुण होता तो
प्रत्येक युग के काव्य में यह मिलता । यह छायावादियों की कल्पना शीलता
ही है जो उनके प्रियतम को अतीन्द्रिय और अलौकिक की वेदी पर प्रतिष्ठा-
पित कर देती है:-----

• चंचला स्नान कर आवे चन्द्रिका पर्व मैं जैसे ।

उस पावन तम की शोभा आलोक मुधुर थी जैसे ।

x x x

तुम सत्य हरे धिर सुन्दर मेरे इस मिथ्या जग के ।

ये केवल जीवन संगी कल्याण कलित इस भग के । •

प्रसाद की इन पंक्तियों में सत्य सुन्दर और कल्याण । शिव ।
का प्रयोग उनकी भावना को रहस्यमय बना देते हैं । छायावादियों का
यह नया रहस्यवाद छायावाद की गीत शैली में एक दम फिट भी बैठता
है । क्योंकि गीतों की भावुकता उस रहस्य को गहराने में अधिक सक्षम होती
है ।

= = = = =

॥ ज जय शंकर प्रसादः आसुः पृष्ठः 310 प्रसाद ग्रन्थालय

तृतीय अध्याय

=====

छायावाट के प्रमुख कवियों का परिचय

=====

1. मुकुटधर पाण्डेय
2. जयकिशोर प्रसाद
3. सुमित्रानन्दन पन्त
4. सूर्यकान्त त्रिवाठी "निराला"
5. महादेवी वर्मा
6. डॉ. राम कुमार वर्मा

छायावाद के प्रमुख कवि

=====

छायावाद का प्रारम्भ आचार्य राम चन्द्र शुक्ल मुकुट घर पाण्डेय से मानते हैं । और उसका विकास जयकांकर प्रताप से उनके अनुसार काव्य में छायावादी तत्त्व सम्मत 1970 से पहले ही दीखने लगे थे । छायावादी काव्य के विकास को उसके ऐतिहासिक क्रम में समझने के लिये छायावाद के कुछ प्रमुख कवि और समीक्षकों का परिचय प्राप्त कर लेना यहाँ अनिवार्य न होगा । अस्तु छायावाद के प्रमुख कवि - समीक्षकों का संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत है ।-----

यद्यपि प्रताप, पंत, निराला, और महादेवी छायावाद के प्रमुख चार स्तम्भ हैं । और इन चारों के काव्य के माध्यम से ही तथ्यपूर्ण छायावाद को समझा जा सकता है । फिर भी इन सबसे पूर्व श्री मुकुट घर पाण्डेय का उल्लेख करना इसलिये आवश्यक है , कि छायावादी काव्य तत्त्व और काव्य दृष्टि इनके काव्य और समीक्षाओं में तब प्रथम दृष्टि गौरव होती है ।

मुकुट घर पाण्डेय:-

=====

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार तरत्नवती आदि पत्रिकाओं में तब 1910 से ही बंगला कविताओं के हिन्दी अनुवाद निकलने लगे थे । इतना ही नहीं, ग्रे, चडवर्थी आदि । अंग्रेजी कवियों की रचनाओं के कुछ अनुवाद भी इस काल में निकले । कविता में

अंग्रेजी के टंग बर चली हुयी बंगला कविताओं से प्रभावित कुछ लाक्षणिक वैचित्र्य, व्यंजक, चित्र-विन्यास और कल्पना प्रधान चित्रकन वस्तु-विन्यास अनुठे शीर्षकों से युक्त चित्रमयी कोमल और व्यंजक भाषा में रहस्य भाषना से युक्त अनेक फुटकर प्रगीत मुक्तक हिन्दी में भी दिखाई देने लगे । और ये प्रवृत्तियों विनम्र कल्पना की प्रधानता रहती थी । श्री मुकुट धर पाण्डेय की कविताओं में स्पष्ट परिलक्षित होती है । * उनकी इत टंग की प्रारम्भिक रचनाओं में * अंतु*, * उदगार* इत्यादि । ध्यान देने योग्य है * । पाण्डेय की की तन 1917 में प्रकाशित एक कविता का उदाहरण यहाँ प्रस्तुत होगा । —

“हुआ प्रकाश तमोभय भग मैं,
मिला मुझे तू तत्पक्ष लग मैं,
दंष्ट्रति के मधुमय पिताम मैं,
शिशु के स्पष्टित मुग्ध हात मैं,
वन्य कुसुम के शुचि तुषात मैं,
था तब झींझा स्थान । ”

तन 1920 में श्री शारदा । जवाल्पुर । पत्रिका में श्री मुकुट धर पाण्डेय द्वारा लिखित चार लेख प्रकाशित हुये । उनके अनुसार * प्राकृतिक ह्रास और घटनायें छायावाद की प्रिय सामग्री है । वे तार्किक स्व से अद्वय तथा अव्यक्त के प्रकाशन में सादृश्य पहुँचती है । ————— यथार्थ मैं छायावाद भाव राज्य की सरकार है । उसमें केवल संकेत से ही काम लिया जाता है । भाषा उसमें भाव प्रकाशन का एक गौण साधन भाव है ।”

=====

III श्री शारदा सितम्बर 1920 पृष्ठ- 341- 344

121 जय शंकर प्रसाद :- 1889- 1937।

=====

बाण्डेय जी के बाद यही तत्काल व्यवस्थित रूप में अपनी दार्शनिक वृद्ध भूमि के साथ जयशंकर प्रसाद के काव्य में देखे जा सकते हैं। प्रसाद जी का छोटी बोली काव्य में साहित्यिक जीवन सन् 1993 से प्रारम्भ हुआ। कानन कुसुम, महाराणा का महत्व, कल्याण तथा और प्रेम- पथिक छोटी बोली में उनकी प्रारम्भिक रचनाएँ हैं। किन्तु मुकुट पर बाण्डेय द्वारा अन्धाधुनिक की प्रगल्भ चित्रमयी व्यञ्जना के उपयुक्त जित्त ज्वलन्त नूतन पदति का प्रारम्भ किया गया था * बीछे उत नूतन पदति पर प्रसाद जी ने भी कुछ छोटी - छोटी कविताएँ लिखी, जो सम्प्रति 1975। तन। 1918। में झरना के भीतर संग्रहीत हुयी *। किन्तु झरना का पहला संस्करण हिन्दी जगत में अपना कोई स्थान नहीं बना पाया। इसका दूसरा संस्करण सन् 1927 में प्रकाशित हुआ। उसमें नई जोड़ी गयी 3। रचनाओं में रहस्यवाद अभिव्यञ्जना का अनुठापन व्यञ्जक चित्र विधान सब कुछ मिल जाता है। "इस द्वितीय संस्करण में ही छायावाद कहीं जाने वाली विशेषताएँ स्पष्ट रूप में दिखाई पड़ी*2 * प्रसाद जी में ऐसी मधुरी प्रतिभा और ऐसी जागृत भावुकता अवश्य थी कि उन्होंने इस पदति का अपने ढंग पर बहुत ही मनोरम विकास किया *3। * जीवन के प्रेम विनाश मय मधुर पक्ष की और स्वाभाविक प्रवृत्ति होने के कारण वे उत प्रियतम के संयोग वियोग वाली रहस्य भावना में जिते स्वाभाविक रहस्य भावना से अलग समझना चाहिये - रमते प्रायः पाये जाते हैं। *4

=====

111	आचार्य राम चन्द्र शुक्लः	हिन्दी सा. इति. पृष्ठः	678
121	यही	"	पृष्ठः 679
131	"	"	पृष्ठः 679
141	"	"	पृष्ठः 679

उनके काव्य में नियति पाद और दुःख पाद का स्वर भी सुनाई पड़ता है। आसु, कामायनी तब उनका प्रमुख काव्य है। इनके अतिरिक्त उनके ऐतिहासिक नाटकों में भी छायावादी प्रवृत्ति के अनेक गीत देखे जा सकते हैं।

प्रसाद जी के पास छायावादी काव्य का एक दार्शनिक आधार था जो कामायनी के अतिरिक्त * उनके निबन्धों में स्पष्ट देखा जा सकता है। उनके कथानुसार * कविता के क्षेत्र में पौराणिक युग की किसी घटना अथवा देश - विदेश की सुन्दरी के आधार पर स्वानुभूति मयी अभिव्यक्ति होने लगी तब हिन्दी में उसे छायावाद के नाम से अभिहित किया गया --- इस ढंग की कविताओं में भिन्न प्रकार के भावों की नये ढंग से अभिव्यक्ति हुई। ये नवीन भाव अतिरिक्त स्पर्श से पुल किते थे। *

उनका मानना था कि * छायावादी भारतीय दृष्टि से अनुभूति और अभिव्यक्ति को भंगिमा पर अधिक निर्भर करती है। ध्वन्यात्मकता, लावण्यकता, तर्कित मय प्रतीक विधान तथा उच्चतर चक्रता के साथ स्वा-नुभूति की निवृत्ति छायावाद की विशेषतायें हैं। अपने भीतर से मोती के पानी की तरह अन्त-स्पर्श करके भाव समर्पण करने वाली अभिव्यक्ति छायावादिता मय होती है *2 इसके लिये प्राचीनों ने कहा है कि -----

मुक्ता क्लेशु जाया यास्तरतत्त्व भिन्नान्तम
प्रतिभाति यद्वेषु तन्मा वाग्य भिहोच्यते ॥

=====

111 जयदेव प्रसाद काव्य और कला तथा अन्य निबंध पृष्ठ 38

121 वही * * * * * पृष्ठ : 126

13। सुमित्रा नन्दन पंतः-२। सन 1900- 1979।

=====

प्रकाशन की दृष्टि से प्रसाद के "झरना" का द्वितीय संस्करण पंत के "पल्लव" के बाद आता है। छायावादी काव्य प्रवृत्तियाँ प्रसाद से पहले पंत में परलक्षित होती हैं। यद्यपि काव्य जगत में प्रसाद का प्रवेश पंत से पहले हुआ। पंत की रचनाओं का आरम्भ सन 1918 से उनकी "वीणा" से हुआ। वीणा पर "गीताम्जली" का प्रभाव कुछ कुछ दिखाई देता है। रमणीय कल्पना के साथ-साथ प्रकृति के सुन्दर स्वरों की आल्हादमयी अनुभूति वीणा में अनेक स्थानों पर पायी जाती है। "वीणा" के उपरान्त "ग्रन्थि" पंत के असफल प्रेम से उत्पन्न वेदना और पीड़ा की अनुभूति से युक्त है। प्रसाद के काव्य में जो स्थान "आँसू" का है। भाव पक्ष की दृष्टि से पंत के काव्य में वही स्थान "ग्रन्थि" का है। पंत जी की तीसरी सबसे बड़ी उपलब्धि "पल्लव" है। "पल्लव" में पंत जी की कविता पर जो निखार आया है वह अप्रतिम है। उपरान्त पंत जी का "गुंजन" प्रकाश में आया और फिर तो पंत जी की लेखनी अवाध रूप से चलती ही रही "युगान्त" "युगवाणी" "ग्राम्या" आदि। पंत ने अनेक काव्य रचनाएँ प्रस्तुत कीं। छायावादी कवियों में इतनी अधिक काव्य पुस्तकें किसी और ने नहीं लिखी एक बात ध्यान देने योग्य है कि पंत के काव्य का विकास छायावादी आन्दोलन से पूर्व एक स्वच्छंद और नवीन धारा के साथ हुआ। आगे चलकर वे छायावादी आन्दोलन से जुड़ गये। और अन्त में उनका झुकाव सांध्यवाद और समाजवाद की ओर होसँ लगा। प्रसाद की कविताओं में जैसे उनका भारतीय चिन्तन सर्वत्र ओत-प्रोत है। उस प्रकार पंत के काव्य

= =

कोई आधुनिक दर्शन नहीं है। साम्यवाद की ओर उसका झुकाव उन्हें प्रगतिशीलों के रवैये में लेजा कर छोड़ा कर देता है। किन्तु साम्यवाद से भी आगे वे दार्शनिक परिपक्वता की स्थिति में गांधीवाद और भारतीय अद्वैत दर्शन से प्रभावित दिखाई देते हैं।

उनकी कल्पित विशेषताओं में "बाल" शब्द का बार-बार प्रयोग स्त्रीलिंग शब्दों के अधिक प्रयोग संस्कृत की नकल पर व्याकरणहीन शब्द-रचना विशेष उल्लेखनीय है। दूसरी ओर रमणीय कल्पना प्रकृति का विस्तृत चित्रण और साधर्म्य मूलक सादृश्य योजना उनकी अपनी विशेषताएँ हैं।

छायावाद के सम्बन्ध में उनकी काव्य दृष्टि स्पष्ट है कि वे अपनी - स्वच्छंदता प्रसूति के कारण किसी प्रकार या भाव से बंध कर नहीं रहे। उनके अनुसार "कविता प्राणों का संगीत है, और छंद हृदय कम्पन। कविता का स्वाभाव ही छंद में लय होना है।"

उनके दार्शनिक विचारों को अद्वैतवाद के रूप में समझा जा सकता है। कल्पना को ही "सत्य" और "विषय" मानने वाले पंत जी का कहना है "मैंने --- आत्मवाद तथा वस्तुवाद के विरोधों को नवीन मानव चेतना के समन्वय में दालने का प्रयत्न किया है। और भौतिक आध्यात्मिक अति रंजनाओं का विरोध कर भौतिकता और आध्यात्मिकता को एक ही सत्य के दो पहलुओं के रूप में ग्रहण कर उन्हें लोक

=====

॥ सुमित्रानन्दन पंतः पञ्चमः प्रवेशः पृष्ठः 33

कल्याण के लिये महत्तर सांस्कृतिक समन्वय में एक दूसरे के पूरक के रूप में संयोजित करना चाहें ।¹

व्याकरण के प्रयुक्त स्वस्थों को त्याग कर अपने अर्थ के अनुसार शब्दों के लिंग को ग्रहण किया । उसकी धारणा है कि हस्तों भाषों को मूर्त रूप देने में सहायता मिलती है । और भाषा चित्रोन्मूल हो जाती है । उन्हीं के शब्दों में ——— * मुझे अर्थ के अनुसार ही शब्दों को स्त्रीलिंग और पुल्लिंग मानना अधिक उपयुक्त लगता है । जो शब्द केवल अकारान्त इकारान्त के अनुसार ही पुल्लिंग अथवा स्त्रीलिंग हो गये हैं । और जिनमें लिंग का अर्थ के साथ सामन्वय नहीं मिलता, उन शब्दों का ठीक - ठीक चित्र ही आँखों के सामने नहीं उतरता और कविता में उसका प्रयोग करते समय कल्पना कुठिल हो जाती है ।²

प्रसाद के काव्य में जहाँ रहस्य भावना के साथ - साथ दार्शनिक पक्ष प्रबल है वहीं पंत के काव्य में कल्पना और प्रकृति की प्रचुरता है ।

14। सूर्य कान्त त्रिपाठी निराला:-। 1988- 1961।।

=====

छायावादी काव्य धारा में सभी प्रकार के बन्धनों को उत्पीड़न करके चलने वाले एक मात्र कवि निराला ही हैं चाहे सामाजिक बंधन हो या फिर छंद के बंधन हो एक ही छेनी से सबको काटते हुये चलते हैं । उनके काव्य में संगीत और नाद की ओर सर्वाधिक स्थान पाया जाता है । आचार्य

=====

11। सुमित्रा नन्दन पंत: रश्मि बंध: भूमिका: पृष्ठ: 20- 21

12। " " " : बालमय : । प्रवेश। पृष्ठ : 33

राम चन्द्र शुक्ल के अनुसार * जैसे और सब बातों की वैसे ही संगीत के अंग्रेजी ढंग की भी नकल पहले पहले बंगाल में शुरू हुई। इस नये ढंग की और निराला सबसे अधिक आकर्षित हुये थे। और अपने गीतों में उन्होंने उसका पूरा जोहर दिखाया। संगीत को काव्य के आर काव्य को संगीत के अधिक निकट लाने का सबसे अधिक प्रयास निराला जी ने किया----- "गीतिका" में उनके वैसे ही गीतों का संग्रह है। इतना ही नहीं उन्होंने संगीत के स्तर पर जहाँ शास्त्रीय राग- रागनियाँ मिली वहीं तरह- तरह की स्वर-लिपियाँ की नयी- नयी योजनाएँ भी की, लंबे धुनों के माध्यम से कविता को जन सामान्य के निकट लाने का प्रयत्न भी निराला को ही जाता है ।*

आचार्य राम चन्द्र शुक्ल ने निराला की जित दूखी विशेषता का उल्लेख किया है वह छंदों के क्षेत्र में नवीन प्रयोग है। शुक्ल जी के शब्दों में "सबसे अधिक विशेषता आपके वर्यों में चरणों की स्वच्छंद विशेषताएँ हैं। कोई चरण बहुत लम्बा कोई बहुत छोटा, कोई मझोला देखकर ही बहुत से लोग स्वर, छंद, केयुआ छंद, आदि कहने लगे थे। बेमेल चरणों की विलक्षण आजमाइश उन्होंने सबसे अधिक की। "प्रगल्भ प्रेम" नाम की कविता में अपनी प्रेयसि कल्पना या कविता का आम्हान करते हुये उन्होंने कहा"।

* आज नहीं है मुझे और कुछ चाह,
अर्ध विकसित हृदय- कमल में आ तु
धिये। छोड़कर बंधन मय छंदों की छोटी राह।
गज - गमिनी वह पथ तेरा संकीर्ण, कंटका कीर्ण।

111 आचार्य राम चन्द्र शुक्ल : हिन्दी साहित्य का इतिहास

पृष्ठ 716

121 आचार्य राम चन्द्र शुक्ल : हिन्दी साहित्य का इतिहास

पृष्ठ 716

शब्द चित्र अंकित करने में निराला का कोई तानी नहीं * वह तोड़ती पत्थर*, * भिक्षु*, * तरोज स्मृति* के अतिरिक्त * राम की शक्ति* पूजा* इसका अद्वितीय उदाहरण है। बाबू गुलाब राय ने उनके सम्बन्ध में ठीक ही कहा है। * आप दार्शनिक भी है और कवि भी। आप में बुद्धि वाद और हृदय वाद दोनों ही सुखद सम्मेलन है। ----- आप ब्रह्म वाद से प्रभावित अवश्य है। किन्तु ब्रह्म तीन होकर अपने व्यक्तित्व की ओर देने के पक्ष में नहीं है। भक्तों की भाँति आप ईश्वर के साथ चन्द्र चकोर का ता ही सम्बन्ध रखना चाहते हैं। *¹¹ अद्वैतवाद के वेदान्ती स्वल्प की ग्रहण करने के कारण इनकी रहस्यात्मक रचनाओं में भारतीय दार्शनिक नित्यन की झलक जगह जगह मिलती है। इस विशेषता को छोड़ दें तो * इनकी रहस्यात्मक - कवितारें भी इसी प्रकार माधुर्य भाषना को लेकर चली हैं। जिस प्रकार और छायावादी कवियों की ।¹²

* नीतिका* * अनामिका*, परिमल*, *तुलसीदास* उनकी प्रमुख रचनायें हैं पंत की ही भाँति निराला का स्थान भी आगे चलकर साभ्यवाद की ओर हो गया था। *भिक्षु*, *दान*, *तरोज स्मृति*, * कुरुर मुक्ता* आदि रचनाओं से यह बात स्पष्ट परलक्षित होती है। काव्य में अभिव्यक्ति की संश्लेषणीयता के लिये वे भाषा की पूर्ण स्वतंत्रता के पक्षधर थे। संघर्षों से मुक्ति उनके जीवन का मानों एक मात्र लक्ष्य था। मानव जीवन की भाँति वे कविता को भी मुक्त और स्वतंत्र देखना चाहते थे ।-----

* मनुष्यों की मुक्ति की तरह कविता की भी मुक्ति होती है ।

=====

111 बाबू गुलाब राय : हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ: 234

121 निराला: परिमल की भूमिका : पृष्ठ: 14

मनुष्यों की मुक्ति कर्मों के बंधन से छुटकारा पाना है । और कविता को मुक्ति छंदों के शासन से अलग हो जाना । मुक्ति काव्य से साहित्य एक प्रकार की स्वाधीन चेतना कहलाता है । *¹

मुक्त छंद के सम्बन्ध में वे अन्यत्र लिखते हैं । * मैं हिन्दी के जीवन के सम्बन्ध में वर्णों के भीतर से विचार कर चुका हूँ । फिर किन वर्णों का सामीप्य है । मुक्त छंद की रचना में मैंने भाषा के साथ स्व तर्क पर ध्यान रखा है । बल्कि कहना चाहिए कि स्वाभावतः हुआ । नहीं तो मुक्त छंद न लिखा जा सकता, वहाँ कृत्रिमता नहीं चल सकती । *²

131 महादेवी वर्मा:- । 1902- 1987

=====

आचार्य शुक्ल के अनुसार * छायावादी कहे जाने वाले कवियों में महादेवी जी ही रहस्यवाद के भीतर रही हैं । *³ वस्तुतः छायावाद की इस चतुष्टयी में प्रत्येक स्तम्भ की अपनी कुछ विशेषताएँ रही हैं । प्रताप में यदि इतिहास और संस्कृति, तो पंत में प्रकृति, निराला में संगीत, और महादेवी में रहस्यभावना उनकी प्रमुख विशेषताएँ हैं । स्वयं महादेवी ने छायावाद के सम्बन्ध में अपना मत व्यक्त करते हुये कहा है -----

* छायावाद का कवि धर्म के आध्यात्म से अधिक दर्शन के ब्रह्म का श्रेणी है । जो मूर्त और अमूर्त विश्व को मिलाकर पूर्णता पाता है । * उनकी इसी धारणा से उनके काव्य में रहस्यभावना महत्व पूर्ण हो उठी है । रहस्य भय ब्रह्म की अभिव्यक्ति भी रहस्यमयी ही होगी । इस ब्रह्म

=====

11। निराला परिचय की भूमिका : पृष्ठ : 14

12। निराला प्रबन्ध प्रतिमा: पृष्ठ: 275

13। आचार्य राम चन्द्र शुक्ल : हिन्दी सा. इति. : पृष्ठ: 719

के साथ आत्मानुभूति के माध्यम से व्यक्तिगत सुख दुखों की अभिव्यक्ति उस रहस्य को और गहरा बना देती है। छायावादी कविता व्यक्ति प्रधान कविता थी। और इसमें कवियों ने अपने निजी सुख दुख को विविध तरीकों से प्रस्तुत किया। भाई प्रताप का आंसू हो या पंत का आंसू ही, या निराला की "सरोज स्मृति" हो, चाहे महादेवी के गीत हो----- सभी में व्यक्तिगत सुख दुखों की अभिव्यक्ति हुई है। स्वयं महादेवी की दृष्टि में दुखों का बहुत महत्व है। वे कहती हैं ----- "दुःख मेरे निकट जीवन का ऐसा काव्य है जो तारे संतार को एक सूत्र में बांधने की क्षमता रखता है हमारे अंतर्गत सुख हमें चाहे मनुष्यता की पहली सीढ़ी तक भी न पहुंचा सकें, किन्तु हमारा एक बूंद आंसू ही जीवन का अधिक मधुर, अधिक उर्वर बनार बिना नहीं मिल सकता। मनुष्य सुख को अकेला मांगना चाहता है। परन्तु दुःख सब को बाँट कर ----- विषय जीवन में अपने जीवन को, विषय वेदना में अपनी वेदना को, इस प्रकार मिला देना जिस प्रकार एक जल बिन्दु समुन्द्र में मिल जाता है, कवि की मोह है। *2

नीहार "रश्मि", "नीरजा" और "साध्य गीत" उनके गीत संग्रह हैं। इन सभी का एक बड़ा संग्रह "यामा" के नाम से भी प्रकाशित हो चुका है। दीप शिखा भी उनका एक पाठ का किन्तु छेठ गीत संग्रह है। उनकी कविता में रहस्य भावना के साथ - साथ वेदना का स्वर भी प्रधान है।---

* मैं नीर भरी दुःख की बदरी।

कल उमड़ी थी तो आज चली ॥ *2

111 महादेवी वर्मा: साहित्य कार की आस्था तथा अन्य निबंध:

पृष्ठ: 88

121 महादेवी वर्मा: यामा: पृष्ठ: 12

यह पीड़ा उबकी इतनी मधुर लगती है कि वे सब कुछ पीड़ा में ही देखती है । वस्तुतः वेदना जब लम्बे समय तक बनी रहती है । तो व्यक्ति उसका अभ्यस्त लगता है । पीड़ा से मुक्ति उसके लिये कष्ट कर होती है । यही कारण है कि वे पीड़ा से थक कुछ सोचती ही नहीं ।

• तुमको पीड़ा में डूँढ
तुममें डूँगी पीड़ा •

यह पीड़ा का "चक्का" ही तो है । भारतीय चिन्तन परम्परा सर्वात्म्यवाद से मुक्त रही है इस स्वतंत्र परम्परा के कारण छायावादी काव्य में जहाँ रहस्यानुभूति का समावेश हुआ है । वहीं कल्पना की प्रधानता भी हुई है । विविध रूपिणी कल्पना प्रकृति को अभिन्न सौंदर्य प्रदान करती है और मानव जीवन के विविध संकेत भी देती है । • काव्य जब प्रकृति का आधार लेकर चलता है । तब कल्पनाओं में सूक्ष्म रेखाओं का बाहुल्य और दीप्त रोगों का ठहराव स्वाभाविक ही रहेगा । छायावाद तत्त्वतः प्रकृति के बीच में जीवन का उदगीर्ण है । अतः कल्पना बहुरंगी और विविध स्पी है । • 2

161 डा० राम कुमार वर्मा : सन 1905-----।

=====

छायावादी काव्य में डा० राम कुमार वर्मा का इस चतुष्टयी के बाद का महत्व पूर्ण स्थान है । • अंजलि", "अभिज्ञान", "निर्णय", "स्वराशि", "चित्र-रेखा" आदि आपके कविता संग्रह है । दुःख बाद इनकी कविता का भी मुख्य

=====

111 महादेवी वर्मा : यामा : पृष्ठ : 32

121 महादेवी वर्मा : का विवेचनात्मक गद्य : पृष्ठ : 94

स्वर है । किन्तु यह दुःख वाद अन्य छायावादी कवियों से भिन्न है दुःख में तो सभी दुःखी होते हैं किन्तु वर्मा जी दुःख में भी दुःख के दर्शन करते हैं ।
वस्तुतः यह दुःख वाद बौद्ध मान्यताओं से प्रभावित है । जीवन में मृत्यु के दर्शन करना, प्रातः में संध्या की कालिमा के दर्शन करना इनकी प्रमुख विशेषतायें हैं ।-----

• फूल हाथ बनने ही को खिला है फूल अनूप ।

वह विकास है मुझों जाने का ही पहला स्पर्श । •

x x x

प्रातः मैं ही दौड़ गयी

संन्या की काली छाया । •

इस बौद्ध दुःख वाद के रहते हुये भी वर्मा जी अनीश्वर वादी नहीं हो जाते, उनका दुःख वाद आशावादी है । वस्तुतः यह मूल भारतीय बौद्धिक दर्शन का प्रभाव है । वे कहते हैं • छायावाद वास्तव में हृदय की एक अनुभूति है, वह भौतिक संसार के कोण में प्रवेश कर अनंत जीवन के तत्त्व ग्रहण करता है और उसे हमारे वास्तविक जीवन से जोड़कर हृदय में जीवन के प्रति एक गहरी संवेदना और आशावाद प्रदान करता है । •

=====

॥॥ डा० राम कुमार वर्मा; विचार दर्शन : पृष्ठ: 72

चतुर्थ अध्याय
=====

प्रयोगवादी काव्य की मूल प्रवृत्तियाँ
=====

1. व्यक्तिवादी प्रवृत्ति
2. "स्व" के प्रति ममत्व
3. रागहीन बौद्धिकता
4. विशेषीकरण की प्रवृत्ति
5. दमित वासनारें
6. यौन-वर्जनारें
7. उपमानों की नवीनता
8. नये प्रतीक
9. छन्दगत प्रवृत्तियाँ
10. भाषागत प्रवृत्तियाँ

॥३॥ प्रयोगवाद की मूल - प्रवृत्तियाँ:-

=====

छायावाद और प्रयोगवादी काव्य के अध्ययन से लगता है । कि प्रयोगवाद छायावाद का ही विकसित तम रूप है, छायावादी काव्य की प्रवृत्तियाँ ही प्रयोगवाद में अपनी घरम सीमा पर पहुँच गई थी । अन्तर केवल इतना है कि प्रयोगवाद में छायावादी काव्य प्रवृत्तियों का अतिवाद और विवृत रूप देखने को मिलता है । जहाँ हम प्रयोगवाद की एक-एक प्रवृत्ति का अध्ययन करेंगे ।

॥१॥ व्यक्तिवादी प्रवृत्ति:-

=====

छायावाद की भाँति प्रयोगवाद में आकर कविता "रक्स्टा पर्सनल" हो गई । इसके मूल में प्रयोगवादी कविता की विशेषीकरण प्रक्रिया थी । प्रयोगवादी कवि हर सामान्य बात को विशेष रूप से प्रस्तुत करता है । साक्षात्-रिक्तता के प्रति उसकी आसक्ति इतनी तीव्र है कि वह किसी भी साधारण चीज को अपने लिये अनिवार्य मान लेता है । और वह मामूली वस्तु भी उसके लिये असाधारण महत्वपूर्ण और विशेष हो जाती है । उसकी प्रेमिका और लोगों की तरह साधारण सामान्य प्रेमिका नहीं बल्कि विशिष्ट है और इसलिये विशिष्ट है कि वो अपनी है । उसके असाधारण होने के लिये इतना ही पर्याप्त है, इसी प्रकार कोई घटना जो विश्व के किसी भी कोने में घटी हो और कितनी भी मामूली क्यों न रही हो । उसके लिये तब ही इसलिये विशेष और महत्वपूर्ण हो जाती है, कि वह उस पर कविता लिख रहा है । यही कारण है कि इस कविता में किसी घटना या पदार्थ के प्रति रागात्मक आकर्षण के स्थान पर एक बौद्धिक लगाव अधिक रहता है । उसकी

दृष्टि में कथन का घमटकार वस्तु के घमटकार से इसलिये महान हो जाता है । एक साधारण वस्तु को भी वह अपने असाधारण कथन के द्वारा महत्व पूर्ण बना देता है ।

“पोस्टर

जो दूतरे की बात कहते हैं

जिनके हृदय नहीं है: पर प्यार का संदेश देते हैं

जो एक आकार है, महत्त आकार

जिनकी कोई सीमा नहीं है ।

जिनके भाव दूतरे के हैं

वे आज के युग में

आदमी से अधिक बड़े सत्य हैं • ।

पोस्टर कवि के लिये आदमी से भी बड़ा सत्य इसलिये बन गया है, कि वह उसे असाधारण और विशेष दिखाई दे रहा है । इन पंक्तियों में कवि पोस्टर के साथ भी भावात्मक सम्बन्ध स्थापित नहीं कर पाता क्योंकि पोस्टरों के हृदय नहीं है । फिर भी एक घमटकार पूर्ण बौद्धिक महत्व देते हुये कवि उनसे प्यार का संदेश प्राप्त करता है । यह जरूरी नहीं है कि किसी पोस्टर को देखकर सभी व्यक्ति प्यार का संदेश प्राप्त करें किन्तु यह कवि की वैयक्तिकता है कि वह एक पोस्टर से जो मात्र आकार है, प्यार का संदेश प्राप्त करता है ।

इतना ही नहीं प्रयोगवादी कवि अपनी कविता में वहीं तक अनुभूति की सफ़र प्रस्तुत कर पाता है जहाँ तक वस्तु उसके “मैं” से जुड़ी रहती है इसके परे उसकी कविता मात्र एक वक्तव्य होकर रह

=====

॥॥ सर्वेश्वर दयाल सक्सेना: काठकी धारियाँ
पृष्ठ: 382-383



जाती है:-

• ये शहर के घाट से उजले घुले से पाँव मेरी गोद में,
ये लहर पर नाचते ताजे ककल की छाँव मेरी गोद में • १

x

x

x

• पिय की याद ताजा है
किसी की उगलियाँ गँधी
सँवारी अक्षरों की झोर
झन के बीच पंखुरी पुल
उनसे मिलन आया है • 2

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि कवि के "मैं" के साथ कवि की अनुभूति की तीव्रता और सघनता व्यंजित हुई है। इन पंक्तियों में व्यक्त अनुभूति बौद्धिक न होकर रागात्मक - भावात्मक है।

दूसरी ओर जहाँ वर्ण्य वस्तु से इनके "मैं" का सम्बन्ध नहीं है वहाँ इनका सम्बन्ध शुद्ध बौद्धिक है और भावात्मक स्तर पर ये कवि तटस्थ दिखाई देते हैं। इनकी यह नित्यगता कविता को मात्र एक वस्तु-व्य तर्क या दर्शन बनाकर छोड़ देती है इसी लिये मदन मोहन मालवीय कविताओं को प्रयोगवादी-भाषावादी रचाना कहते हैं। उनका मानना है कि यह "निर्वैग बौद्धिक" रचनाएँ "मनुस्मृति" और "तांड्य सूत्र" का विकास मात्र हैं। इन में निहित संदेश गद्य के माध्यम से अधिक प्रय-विष्णु बन सकता था। उदाहरण के तौर पर:-----

=====

॥॥ ^{दूसरा पृष्ठ} धर्मवीर भारती : पृष्ठ 188-195

॥॥ ^{कृ०} : पृष्ठ 188-195

“ब्रह्मास्त्र विस्फोट गोरव था

अग्नि विस्फोट गर्हित है

इतिहास के किताबों में है, चाँदनी की पकालत” ।

III. “स्व” के प्रति ममत्व:-
=====

प्रयोगवादी काव्य में कवि अपने स्व के प्रति इतना जागृत और घेतन्त्र है कि अकेले एकान्त कमरे में चुपचाप बैठे- बैठे उसे अपना “अहंम” विखरता हुआ दिखाई पड़ता है । वह इतना अधिक अहंमन्त्र है कि एक माझूनी सी चोट ही नहीं अपितु एक जरा सा छटका भी उसके “अहंम” को तोड़ता सा लगता है । उसे चारों ओर अपने अस्तित्व का छतरा दिखाई देता है । समुची दुनियाँ को वह एक जेल के स्व में देखता है । तारे धर्म, नीतियाँ, परम्पराएँ, मायादायें उसे अपने में जकड़ लेने वाली ब्रंजलायें मजर आती हैं, और इतना सोचने मात्र से उसका मन अकलाने लगता है । वह निराशा के अंधकार में डूबता चला जाता है, वह अपने को विपन्न पाता है:-----

“मैं कमरे में हूँ तो जैसे
दरवाजे से हल्के पुरुषों पदों
खिड़की के ये उदके पल्लव
दीवारों से छोटे घेरे
लगता है तब प्राचीरों है
जो मुझ बेवारे बढ़ने वालों को
वरणत ही घेरे है ।”

=====

III. मदन वात्सयायन: तीसरा सप्तक : पृष्ठ: 84

में लिपटा हुआ दीकता है मानो उसकी आँखों पर एक छुई चीन चढ़ जाती है । और छोटी से छोटी चीज भी उसे बहुत बड़ी नजर आती है ।

• हृदय के आइने में
कब से तोचे हुये
ज्वालामुखी फूट पड़ते हैं¹¹

ये ज्वालामुखी सभी परम्पराओं, व्यावहारिक मान्यताओं, नीतियों और धर्मों को तोड़कर व्यक्ति को स्वतंत्रता का सहसास कराते हुये पीछे और तेजस के गर्त में ले जाकर हुये देते हैं ।

15। यौन वर्जनाएँ:-
=====

यौन वर्जनाओं की अभिव्यक्ति प्रयोगवादी कविताओं में दमित वासनाओं का ही परिणाम है । अश्वेत जैसे कवि भी अपने छुई वीर्य की पुकार सुनाने के लिये उत्तेजित हो जाते हैं ।² उसकी दृष्टि में प्रेम कोई भावना नहीं अपितु मात्र सहवास का सुख हो जाता है ।-----

• प्यार कोई
मुँह का
आँख का
शरीर का
मिलना नहीं
मांस पर गहरे पजे गड़ामा है
मांस से मांस की खैती बढ़ाना है ।³

111. टिनेना नन्दिनीः^{इति} पृष्ठः 62

121. अश्वेतः जनाब्धानः^{इत्यलम्} पृष्ठः 15)

131. विशु रविमः नारों के अन्ये शहर में: पृष्ठ 67

यह सोच - सोच
 मन जाने कितना अकुलाता
 भर- भर जाता
 हतनी सीमारै ये लंघन
 ये सिर्फ अकेले मेरे है
 मैं जो बढ़ने का आकांक्षी * ।

प्रयोगवादी कवि के सम्पूर्ण कुंठा, संशय और निराशाओं के पीछे उसकी
 अतिशय चिंतन शीलता है । वह अर्थमय चिन्तक की भाँति अपने ही विचारों
 से घेरा हुआ निरन्तर बाहर की दुनिया से कटता चला जाता है । वह
 अपने अस्तित्व को सिद्धि करने के बारे में बहुत सोचता है, किन्तु कुछ करता
 नहीं वह इन्तजार करता है * कि अभी कोई आकर रोशनी जलावेगा।
 अपनी इस अतिशय अलम्बिता और उससे उत्पन्न संशय से वह परिचित है ।
 किन्तु वह अपने अस्तित्व को सिद्धि नहीं कर पाता:-

* मैंने इस कमरे से बाहर की दुनिया पर
 अपना एक मात्र दरवाजा बन्द कर लिया है ।
 मुझे कुछ नहीं सूझता
 वह अंधेरा मेरा दम घोट रहा है
 पर मुझे अंधेरे में उठकर बत्ती जलाने से डर लगता है *
 और मुझे सहसा यह लगता है
 कि पागल हो जाऊँ तो पहले ही
 मुझे यहाँ से भागकर
 किसी रेस्तराँ या सार्वजनिक स्थान की

=====

भीड़ में-

शराब खाने में

x x x

अपना अस्तित्व सिद्धि करना चाहिये ।

x x x

पर मैं उठता नहीं हूँ ।

और लेटा रह जाता हूँ । लेटा रह जाता हूँ

मुझे इस अंधेरे में उठने से डर लगता है ।*

वास्तविकता यह है कि व्यक्ति जब अपने प्रति अधिक जाग-
रूक होता है तो उसकी संवेदनारें उसके चारों ओर सिमट आती है । और
वह दुनियाँ से कटा हुआ अपने ही मन से घिरा हुआ, अपने ही विचारों से
संनस्त न कुछ कर पाने से उत्पन्न हुआ रहता है । * उसे नहीं लगता कि
कभी सुख ये भी । उसे अब अपना अस्तित्व ऐसे तनाव में खिरा हुआ
लगता है- - - - - जैसे आँखों की पुतलियों पर किसी ने पोत दिया
हो तारकोल * अपने में डूबे हुये होने का ही परिणाम है कि उसकी
कविताओं की शृङ्खलात ही मेरी, हम, हमारी, तु, और- तेरे से होती है ।
अपना अस्तित्व सिद्ध करने के लिये वह निरन्तर अपने "मैं" का अधिक
से अधिक टिँदोरा बीटता है ।

यह कवि"----- की तरह अहंम रखते हैं और-----
की तरह जवान हो गये हैं । * वह इस हद तक अपने को अभिव्यक्त
करता है कि उसकी कविता मात्र आत्म कथा या निजी आंतरंग डायरी
बन कर रह जाती है । वह बहुत कुछ कहना चाहता है लेकिन एक बारगी

=====

॥॥ नीलमः संस्मरणारमः सूक्तः 37

अपने को तत्पूर्ण व्यक्त कर पाने का सुख नहीं प्राप्त कर पाता । उसकी सभी कल्पनाएँ अधूरी हैं । तथा छन भंगुर है:

•मेरी कल्पना यमुना के पानी में
ताजमहल की परछाया के समान है
जितनी
तीन ही मीनारें दिखती है
और जो
काँच की काँचरी से ही
काँच-काँच हो जाती है ।¹

12¹ रागहीन बौद्धिकता:-
=====

अपने अंतर घुलत में धिरे हुये इस कवि की रागात्मक संवेदनाएँ सुख गयी है । और बौद्धिक रेत ने उनको ढक लिया है वह अपनी चिन्ताओं से इतना डरा हुआ है और अनुभवाँ से इतना छला गया है कि अब किसी से प्रभावित नहीं होता है । उसका पूरे-नियम इतना कृत हो चुका है, कि वह संवेदन हीन "बेस्ट" जैसा रह गया है । वह सौंदर्य उसके लिये वैचारिक घमटकार रह गया है ।

प्रभाकर माधवे की "अन्तरीय" "पुलिन" शीर्षक कविताएँ ऐसी ही रागहीन बौद्धिकता से भरी पड़ी है । उगते हुये सूर्य का प्रिम्ब उठेरने की वजाय वह मात्र इतने से ही सन्तोष कर लेता है ।

=====

111 कीर्तिघोषरी: छुने हुये आत्मान के नीचे: पृष्ठ: 36

• आज मेरी समझ में ये आया
तब,
वर्षों उन प्राचीनों ने सूर्य को ही देवता
कहाया ।•।

उसे सम्पूर्ण दृष्टि अपनी ही तरह एक दूसरे से अनासक्त अपने में डूबी
लगती है । उसकी दृष्टि में पुलिन पर:-

• होंगे धौंधे
अपने ही कवचों में बंद
उतमें ही लेते आनंद
होंगी सीपी
मोती के मायापन में ही मस्त

x x x

केवल सिमता- सिमता
स्वाभाविकता
सहज, तटस्थ, अधिकता

x x x

सिक्ता यह अनासिक्ता ।-३

निरला की ही भाँति इस कवि का भी ----- " स्नेह निझर वह गया
है । रेत ज्यों तन रह गया है । "

=====

111 प्रभाकर माधवे: अनुक्षण : पृष्ठ 114

121 प्रभाकर माधवे: अनुक्षण : पृष्ठ 116- 117

13। विशेषीकरण की प्रवृत्ति:- =====

प्रयोग वादी कवि की प्रवृत्ति पुरानी कवियों की तरह साधारणीकरण की प्रवृत्ति नहीं है, अपितु विशेषीकरण की प्रवृत्ति है। वह साधारण को ही विशिष्ट रूप में देखता है। महत्व हीन को भी महत्व देता है, यही कारण है उसके मन की जिन कुंठाओं से समाज का कुछ लेना-देना नहीं है, और जो दूसरों की दृष्टि में महत्वहीन है, उन्हें वह बढ़ा-चढ़ा कर प्रस्तुत करता है। क्योंकि वे उसकी दृष्टि में अति विशिष्ट है। वह कुमारी अन्तरीय महाकवी पुरम्, देहरादून की शाय, काश्मीर में हिमालय जैसे विषयों पर उन्हें अति विशिष्ट बनाते हुये कविता लिख सकता है। कहीं - कहीं वे कविताएँ ऐसी लगती है, जैसे कवि अने काव्य विषयों का महात्म्य वर्णन कर रहा है। वह इतना निजी व रंकांगी होता है कि सामान्य पाठक उसे आत्मसात नहीं कर पाता कभी-कभी विशेषीकरण की यह प्रवृत्ति कविता में से प्रेक्षणीयता को मिटाने लगती है दूसरी ओर इसके परिणाम स्वस्थ चमत्कारिता को अतिमात्र बृद्धि हुई है। आचार्य राम चन्द्र शुक्ल जैसे वैचित्र्यवाद कहते हैं वह प्रयोग वादी कविता में सर्वत्र बिखरा पड़ा है। इस कविता से "आश्चर्य पूर्ण अवसादन" "आश्चर्य पूर्ण प्रसादन" और कहीं कहीं "कोतुहल मात्र" की दृष्टि होती है।

14। दम्भित वातनार्य:- =====

प्रयोगवादी कवि की दम्भित वातनार्य उसके बीड़ा, तंत्रात, दुष्ट को मुखर कर देती है। वह बहुत कुछ करना चाहता है, लेकिन कुछ

कर नहीं पाता लगातार एक ही तरह जीवन जीते हुये अपने जीवन से ऊब गया है वह उसकी कुँआरी अभिलाषा की लाश उसके सामने है :-

* नकली और असली का
भेद समझने के लिये
मैं भी लाश से झिझक कर
एक घलती - फिरती
लाश हो गई हूँ ।*

उसने इस बात की पीड़ा है कि:-

* आज तक किसीने
नहीं झाँका कि
मेरे भीतर क्या है,

x x x
किसी ने नहीं घूँसा
मुझे किधर जाना है ।*

उसका * अजन्मा अभिव्यक्त अवस्थीन हो के गर्भ में ही दम तोड़ देता है* ।

क्राइड के अनुसार मनुष्य की दमित वातनाहें मौका मिलते ही अनायास दूसरे मार्गों से फूट पड़ती है, मनुष्य जितनी उन्हें दवाने की चेष्टा करता है वे उतनी ही अभिव्यक्त होती है । नदी के लगे हुये जल की तरह या ज्वलता मुँही में भरे हुये लाघा की तरह इनका वेग बहुत तीव्र होता है । साथ ही विध्वंसक भी । इन्हीं के परिणाम स्वल्प व्यजित तरह- तरह के स्वप्न देखता है और धीरे- धीरे यथार्थ की दुनिया से कट कर कल्पना जीवी होता चला जाता है । सम्पूर्ण जगत उसे अपनी ही दमित वातनाहें

=====

॥१ दिनेश नन्दिनी: इति : पृष्ठ: 67

॥२॥ वहीं

मन की दमिल बातनाओं का लावा फूटने पर वह गुप्त कमरे के भीतर ली बातों को भी झुगार करने से नहीं चुकता¹ और वर्जित विचारों को भी अभिव्यक्ति दे बैठता है। विश्व रश्मि की ही "नंदी फोटो" शीर्षक कविता इसी प्रकार की है उन्हीं को "दो पान नुमा चेहरे" कविता में देखें:-

• एक नंदी फोटो ने
 क्षण भर में
 कल्पना-
 भाषना-
 काव्य निष्ठा को
 लिंग मात्र कर दिया
 पानी ताजमहल को बूड़े में ढर दिया ।²

इतना ही नहीं यह कवि अशुद्ध और वर्जित शब्दों को भी कविता में लिखने से नहीं चुकते। यौन के वर्जित क्षेत्रों में प्रवेश करना जैसे इनकी आदत बन गई है। इनकी दृष्टि में यौनाघर ही सब कुछ है, नारी के तन्मन्थ में इनके विचार निश्चय ही पिछले कवियों से भिन्न हैं। इनकी दृष्टि में नारी "समयों के सिफलित और गमोरिया को बहाले जाने वाली अन्धर ग्राउन्ड नातियाँ" है।³ रघुवीर तहाय की दृष्टि में:-

• नारी
 बेपारी है
 पुरुष की मारी है
 तन से मुदित
 मुन से मुदित है

=====

111 रघुवीर तहाय: सौंदर्यों पर धूप में: पृष्ठ: 172

121 विश्व रश्मि: नारों के अन्य शहर में : पृष्ठ: 50

131 ~~मैक्सिम~~ जैव: शून्य पुरुष और वस्तुएँ: पृष्ठ: 122
 कीर्ति कुमाँर

लपक कर
 छपक कर
 अंत में चित्त है॥

स्पष्ट है कि प्रयोगवादी कवि यौन के क्षेत्र में कुछ भी वर्जित नहीं मानता ।

16। उपमानों की नवीनता:— =====

यों तो उपमानों की नवीनता प्रत्येक युग में दीख पड़ती है । किन्तु प्रयोगवादी कविता के उपमान सम्भवतः पिछले उपमानों से नवीनता में भिन्न है । अब तक कवि अपने उपमान प्रकृति से चुनते थे या ऐसे उपमानों का चुनाव करते थे जो स्थायी हों । किन्तु प्रयोगवादी कविता में उपमान की नवीनता का महत्व उसके स्थायित्व की अपेक्षा बढ़ गया । उसमें हृस्म के लिये कोका कोला, चांदनी के लिये स्पया जैसे अविश्व उपमान बहुतायत में आने लगे । कहीं-कहीं ये उपमान बड़े तर्क संगत हैं । जैसे अश्व जी की "जलगी छरहरी बाजरे की" शीर्षक कविता में "हरी पिछली घात" का उपमान प्रेमिका के लिये बड़ा सटीक बन पड़ा है । उनकी मान्यता है, अब तक प्रयुक्त होने वाले—

"ये उपमान मौ हो गये हैं । वासन अधिक धिसने से ।
 मुलम्मा छूट जाता है ।" 2

इस तरह के यह नवीन उपमान कविता की भाषात्मकता बढ़ाने वाले लगते हैं किन्तु अधिकांश ये उपमान मात्र चमत्कार सृष्टि से अधिक कुछ नहीं करते । इन कवियों की प्रेमिका" साल के नये कलेंडर तक पहली

11। रघुवरी सहाय: खीदियों पर चूष मे: पृष्ठ: 172

12। अश्व: हरी घास पर 300 मर: पृ. 57

तारीख की तरह लगती है । और * उसकी अल्हड़ हंसी तीथी काजल सी*¹
 नव काले मेघ इन कावियों को कोयले पहाड़ और रेल के धुरे के तरीखें लगेते
 हैं ।*² सन. पी. उपमानों की नवीनता पस्तुतः इन कवियों की व्याव-
 हारिक जगत के प्रति सूक्ष्म दृष्टि का परिणाम है । इनके इन उपमानों में
 जहाँ नवीनता है । वहीं ये उपमान ढोंग तटीक भी है । * पुराने कौन्डरों
 की तरह उतरा हुआ चेहरा जो मन ही मन अपना इतिहास दोहरा रहा है ।*³
 अपने आध में एक तटीक उपमान है । जो भी हो प्रयोगवादी कविता में
 अंतर्मोक्षीयता के पहाड़ को इन उपमानों ने बहुत हद तक काटा है ।

17। नये प्रतीक:-

=====

प्रयोगवादी काव्य की अपनी ~~अलग~~ मुहावरे दारी है उसमें अभि-
 व्यक्ति के जो नये रास्ते तलाश किये, उनमें उसके नये मुहावरे और नये प्रतीक
 महत्वपूर्ण है ।

असल में प्रयोग वादी कवि जिस नवीन अनुभूत तथ्य को उद-
 धातित करना चाहता है वह पुराने प्रतीकों में नहीं समेटा जा सकता । इस
 लिये उसने अपनी बात कहने के लिये नये - नये तरीके खोज लिये । सिगरेट
 पीकर समय गुजारते लोगों का बिम्ब प्रस्तुत करने के लिये कवि सफ़दम नवीन
 उद्भावना करता है :-

* हम लोग जो आँखों में पूरा दिन पालते हैं
 मायिका की डिपिया में बंद पड़े
 सूरज के टुकड़ों को

=====

- 11। विश्व रश्मि: नारों के अन्य शहर में: पृष्ठ: 44-45
 12। शकुन्तला माधुर: चाँदनी घुनर: पृष्ठ: 80
 13। विश्व रश्मि: नारों के अन्य शहर में: पृष्ठ: 69-70

होठों पर उगाते है
 और फिर मुँह से बादल निकाल कर
 आँखों और माथे की
 झीबों पहाड़ों से ऊपर ऊड़ा देते हैं ।¹

इस कविता में सूरज के टूण्डे और जलती हुई सिगरेट और बादल मुँह से निकलते हुये धूरि के प्रतीक है । इस अत्याधुनिक क्रिया व्यापार के लिये निश्चय ही कवि को नये प्रतीक तलाशने पड़ें क्योंकि पुराने प्रतीकों से नवीन बिम्ब का संयोजक संभव न था ।

प्रयोगवादी कविता में ये नवीन प्रतीक युग के अनुस्य अधिक तर वैज्ञानिक क्षेत्र से ग्रहण किये गये है:-

• मेरे त्पाती होठ
 पीटते हैं
 बातों का लाल- लाल लोहा
 तो घुम
 अपने होठों पर
 घुम्बक रख लेती हो ।²

प्रस्तुत पंक्तियों में घुम्बक घुप्पी का प्रतीक है । इनके अतिरिक्त कवि-
 ताओं में " कटघरा ", "सूरज", "कैकट", "घील", "खिड़की", "पत्ती", "चांद"
 "घुल", "लावा" आदि इसी प्रकार के प्रतीक है । जिनके माध्यम से प्रयोगवादी
 कवि अपनी नवीन अनुभूतियों को अभिव्यक्ति देता है ।

=====

॥॥ विशु रश्मि: खी: पृष्ठ: 44-45

इन प्रतीकों में जहाँ अनुभूतियों को नये आयाम दिये हैं, वही ये प्रतीक संश्लेषणीयता में बाधक भी रहे हैं। वस्तुतः पुरानी कविताओं की अभ्यासी सहृदय इन नवीन प्रतीकों में अपने को अन्धान गालियों में भटके हुये शिशु सा पाता है उसे यह प्रतीक अपरिचित होने के कारण वह कविता की सह तक पहुँचने में असमर्थ हो जाता है। किन्तु यह सत्य है कि नवीनता प्रत्येक युग में पुराने अभ्यासियों को उत्पटी लगती रही है। प्रयोगवादी कविता भी इसका अपवाद नहीं है।

एक बात और है कि प्रयोगवादी कविता में अनेक उपमान ऐसे हैं जो स्थायी एवं सार्वभौम नहीं कहे जा सकते। प्रायः काव्य में दृष्टता ऐसे ही उपमानों केवल घमटकार के लिये, कहीं से भी स्थायी तौर पर जुटा लिये गये हैं, वे काव्य सत्य के स्थायी संवाहक नहीं हो सकते। ऐसे उपमानों के कारण प्रयोगवादी काव्य पर अनेक आक्षेप लगे हैं। किन्तु प्रयोगवादी कविता में ऐसा सर्वत्र नहीं हुआ है, प्रयोगवादी कवि ने जो उपमानों के क्षेत्र में नये धितिविध बोले हैं, उनमें अनेक स्थायी रहेंगे।

18। छंदगत प्रवृत्तियाँ:- =====

नवीनता की इस दौड़ में प्रयोगवादी कवि कविता को छंद की पगडंडियों से इतनी दूर ले गया है, कि कविता स्वर्य के लिये अजनबी हो गई है।

कव्यात्मकता छेड़ कविता का गुण कहा जा सकता है। तुर. केवध आदि सिद्ध कवियों में यह दर्शनीय है। उनके संवाद अपनी गथा-

त्मकता के कारण ही लोकप्रिय हुये हुये । किन्तु प्रयोगवादी कविता संवादात्मक कविता न होकर स्वयं एक संवाद बन गई है । दूसरे शब्दों में वह एक गद्यात्मक कविता न होकर गद्य बन गई है । काव्य वक्तव्य की ललक और रागहीन बौद्धिकता ने प्रयोगवादी कविता को कविता कम गद्य अधिक बना दिया है । यह निराला के युक्त छंद से बहुत बाद की स्थिति है, अधिकांश प्रयोगवादी रचनाओं में लम्बे- लम्बे वाक्य कवि के आत्म काव्य की मात्र गद्यात्मक अभिव्यक्ति लगते हैं । संस्मरणात्मक में मीलाम की कवितारें, रघुवीर सहाय की अनेक कवितारें, नेमीचन्द्र जैन की कवितारें, अजीत कुमार की कवितारें इस श्रेणी में आती हैं ।

जो भी हो इन कविताओं के अतिरिक्त ऐसी भी अनेक कवितारें हैं जिनमें एक गीत है एक रिदम है, यतियों का भी समुचित ध्यान रखा गया है । वस्तुतः एक ही वाक्य को अनेक पंक्तियों में लिख देने मात्र को कविता नहीं कवि समझते हैं जो अपनी अक्षरिपक्व अनुभूति को अभिव्यक्त करने की जल्दी में होते हैं । जिन्होंने अपनी अनुभूति को पकने दिया है । उनकी कविताओं में वाक्य इतने लम्बे उबड़- खाबड़ गति हीन और गद्यात्मक नहीं होने पाये हैं ।

19। भाषागत प्रवृत्तियाँ:- =====

नये युग के सत्य और नयी अभिव्यक्ति के लिये जब भाषा पुरानी पड़ जाती है तो साहित्य सृष्टियों को नवीन भाषा की तलाश करनी पड़ती है । वे अपनी आवश्यकता के अनुसार नये शब्द गढ़ते हैं या फिर दूसरी भाषाओं से शब्द संग्रहीत कर लेते हैं । प्रयोगवादी कविताओं

में जहाँ संस्कृत की भारी- भरकण दार्शनिक शब्दावली को ग्रहण किया गया, वहीं अंग्रेजी के बहुत से शब्द ले लिये गये हैं। आत्मा, ईश्वर श्वासें, स्तोत्र, चिनमन, पुराण, मन्त्रोच्चारण, वैष्णव, प्रकृति और पुच्छ जैसे शब्द जहाँ- संस्कृत की दार्शनिक शब्दावली से लिये गये। वहीं यूरिया, सुपर फास्फेट, पोस्ट - मार्टम, चैम्बर, साइड, प्रूफ, टॉनिक, कान सैन्टिक, न्यून साइन, रेत, हैगर, कैमसूल आदि शब्द अंग्रेजी से लिये गये हैं। इतना ही नहीं इन कवियों ने अनेक शब्द अपने हिसाब से गढ़ लिये हैं जैसे - लयहीन, गहराहियाँ, खूनी स्वर्ण, बंजर इमान, पिछेली काँटे, कुँआरी धूम, छ्यंग रेखा, मदिराया, अक्कार, खूबू, की बुद्ध, छलकते धन, प्रश्नों के बुलबुले, विधुर मन, मौन कुहाँसा, पीली आत्मा, अभिषाप्त हवा आदिवा शब्द विशेषण विपर्यय करके बनाये गये हैं।

इन कविताओं की शब्दावली में एक ध्यान देने लायक बात यह है कि कहीं कविता में कोमलता भरने के लिये तो कहीं गम्भीरता लाने के लिये अनेक ऐसे शब्द प्रयोग किये गये हैं। जो दोषों की श्रेणी में रखे जायेंगे। व्याकरण विरुद्ध अप्रतीतित्व आदि अनेक शब्द दोष इन कविताओं में देखे जा सकते हैं, वस्तुतः चमत्कार की "लस्ट" इन कवियों में इतनी है कि तंद्रीहीन शब्दों को प्रयुक्त करने से वाज नहीं आते। कीर्ति चौधरी की अनेक कविताओं में नदी को नदि लिखा गया है, पता नहीं ऐसा उनके वर्तनी के अज्ञान के कारण हुआ है अथवा जानबूझ कर नया पन लाने के लिये। इसी तरह अनेक शब्दों में ग्राम्यत्व दोष भी दृष्टव्य है:-

• रस की भरी गगरिया
भरे जल कलश
नहाई वसुन्धरा
पहिरा धानी दुकूल*

इन पंक्तियों में "पहिरा" शब्द यहाँ ग्राम्यत्व दोष उत्पन्न करता है। कवयित्री यदि "पहिरा" के स्थान पर "पहना" लिख देती तो इसके सौंदर्य में कोई कमी नहीं आती। इसी प्रकार इसी कविता में विद्युत को विद्युता कहकर व्याकरण विरुद्ध प्रयोग किया गया है।

शब्द के बाद भाषा की दूसरी महत्वपूर्ण इकाई है वाक्य। वाक्य विन्यास भी इन कवियों के पिछली कविता से भिन्न है। इन का वाक्य विन्यास संस्कृत वाक्यों की तर्ज पर खड़ा किया गया है:-

• प्रेषित करने को
कुछ नहीं रहा
केवल सूखे दूँठ सा
यह शरीर ही
अशेष है • ।

देर सारे विशेषण या फिर अनेक छोटे-छोटे पद वाक्यों से जोड़ कर बनाये हुये वाक्य इन कविताओं की विशेषता है।

अनेक स्थानों पर वाक्य रचना व्याकरण विरुद्ध हो गयी है। प्रायः उसमें लिंग भेद का ध्यान नहीं रखा गया है जैसे:-

• पचरंगी दिखने वाले धागे में" 2

=====

॥ दिनेश नन्दिनी: इति: पृष्ठ: 69

॥2॥ तैयद तैफुददीन: जन भारती वर्ष 9 अंक । सवत् 2017।सं. ।

डा. बलदेव प्रसाद मिश्र पृ० 3 से उद्धृत

यह धागा शब्द पुलिंग है । और पचरंगी स्त्री लिंग इसी तरह कसती गयी के स्थान पर कसाती गई का प्रयोग इन कवियों की व्याकरण हीनता की गवाही देता है ।

इतने पर भी इन कवियों की अभिव्यक्ति अपूरी रही ऐसा जान पड़ता है । अनेक कवियों ने त्रिभुज, कोण, गुणित चिन्ह, धन चिन्ह, अण चिन्ह, फल स्टाप, कोमा, आदि को भाषा प्रतीकों के रूप में प्रयुक्त किया है :-

"प्रेम प्यार यानी मौहब्बत"

, x =।

मौहब्बत के गाल पर चाँटा

झरवेरी का काँटा"

यद्यपि ऐसे भाषा प्रतीक कुछ कवियों ने अलग-अलग गढ़ लिये हैं । उनके पीछे कोई सशक्त एकता दिखाई नहीं देती । अतः इनके अर्थ लगाने में कठिनाई होती है । गूँग की भाषा जैसे ये प्रतीक शायद प्रयोगवादी कवि की ही समझ में आ सकते हैं । हिन्दी कविता के पाठकों के लिये ये प्रतीक दुर्लभ ही नहीं निरर्थक और बेमानी भी थे इनके कारण प्रयोगवादी कविता बहुत कुछ हास्यास्पद बन गई ।

फिर भी यह बात प्रयोगवादी कविता के पक्ष में दृढ़ता के साथ कही जा सकती है कि प्रयोगवादी कवियों ने भाषा के क्षेत्र में भी अनेक सार्थक प्रयोग किये हैं ।

पंचम अध्याय
=====

प्रयोगवाट के प्रमुख कवियों का परिचय
=====

1. उदय
2. रघुवीर तटाय
3. प्रधान नारायण त्रिपाठी
4. मदनमोहनाथ
5. कानन माधव "मुक्तिबोध"
6. भारत भूषण अग्रवाल
7. गिरिजा कुमार माथुर
8. नरेश मेहता
9. धर्मवीर भारती
10. नैमिषेन्द्र जैन
11. ज्योतिरनाथ सिंह
12. कैलरी कुमार
13. नरेश कुमार
14. नरिण विनीतन रमा

प्रयोग वाद के प्रमुख कवि

=====

छायावाद से ही कवियों के स्वयं समीक्षक होने ली जो परम्परा कम पड़ी थी प्रयोग वाद में भी यह बनी रही । इतना ही नहीं यह परम्परा और अधिक विकसित हुयी । छायावाद का कवि कविता पर वहाँ घतव्य देता था वहीं छायावादी कवि समीक्षक का कार्य भी करने लग । छायावादी प्रमुख कवियों को पूरी तरह समझने के लिये उनको काव्य के साथ - साथ उनकी समी-
क्षकों पर भी विचार करना वहाँ हमारे लक्ष्य रहेगा ।

|||

अश्वः-

=====

तच्छिष्टानन्द हीरानन्द वात्ताकम " अश्व " प्रयोग वाद और नयी कविता के पुराखाजों में है । वे एक गम्भीर चिन्तक और सर्वज्ञ साहित्यकार रहे हैं । सन 1941 से आजीवन अश्व हिन्दी कविता जगत के केन्द्रीय व्यक्तित्व रहे । " अश्व का काव्य - विकास चिन्तन जगत् है । वे एक उत्कृष्ट कवि हैं कनकर सिद्ध कवि तक पहुँचे हैं । " " भग्नदूत " से लेकर " इत्यम " तक की उनकी रचनायें कोई विशेष सम्भावनाएँ प्रस्तुत नहीं करती । संस्कृत निष्ठ, भारी भ्रम्य तत्सम शब्दों के प्रयोग उनकी कविता को बेोड़िल बनाते हैं । उनकी दार्शनिकता भी अनेक स्थानों पर कविता की सहजता को तोड़ती हुई दिवार्ध देती है । इस प्रकार सन 1933 से 1946 तक का उनका कवि जीवन कोई तमल कवि जीवन नहीं कहा जा सकता । सन 1933 में " भग्न दूत " और 1946 में " इत्यम " उनके चारों ही कविता संग्रह कमजोर नजर आते हैं ।

" कलात्मकता, मूल्यमोय और जन्मिति की दृष्टि से " तारतम्यक " में

=====

|||

डा० रविनाथ सिंह : नयी कविता की भाषा पृष्ठ : 262

उनकी रचनायें काफी प्राथमिक स्तर पर हैं। सन 1946 में प्रकाशित "इत्यलम" की अधिकांश रचनायें छाया कालीन संस्कार एवं शैली से लिप्त हैं। और अंत में "नूतन बोध" की जो प्रयोग शील रचनाये इस संग्रह में हैं, उनमें भी संवेदना गहरी नहीं है तथा अभिव्यक्ति में परिष्कार की कमी है। •।

सन 1949 में "हरी घास पर क्षण भर" के प्रकाशन के साथ ही अज्ञेय का काव्य व्यक्तित्व उभर कर आया ----- 1954 में "बावरा अहेरी" 1957 में "इन्द्र धनुष रौंदे हुये ये" 1959 में "अरी ओ कल्या प्रमाम्भ" और 1961 में "आंगन के द्वार द्वार" आदि संकलनों में अज्ञेय की काव्य प्रतिभा उत्तरोत्तर विकसित होती गई है। इन कृतियों में संवेदना की सरलता भाषा में व्यवस्था और पद्य विन्यास में निखार दिखाई देता है। इन कृतियों में अज्ञेय तत्सम शब्दों का मोह छोड़कर तदभव और देशज शब्दों के प्रयोग में प्रवृत्त होते हैं।

सन 1967 में "कितनी नावों में कितनी बार" 1970 में "सागर मुद्रा" तथा क्योंकि मैं उसे जानता हूँ" आदि रचनाओं में उनकी मध्यवर्ती रचनाओं की अपेक्षा अधिक प्रोढ़ता दिखाई देती है। इन संकलनों की भाषा उनकी मध्यवर्ती काव्य की भूमि तो नहीं छोड़ती किन्तु एक मोह को अवश्य सूचित करती है। वाक्य-विकास में स्पष्टता है।----- विशेष बल संज्ञा तथा क्रिया पर है कुछ युवा समीक्षकों के मत से अज्ञेय की ये परवर्ती प्रतियाँ विकास की नहीं, प्रत्युत ठहराव की द्योतक हैं।

=====

॥ गिरजा कुमार माथुर: नयी कविता सीमारें और संभावना:

अपनी कविता की स्वयं वकाशत करने की प्रवृत्ति अक्षेय में भी रही है। यह वकाशत करते हुये, उन्होंने काव्य और कला के सम्बन्ध में अनेक महत्वपूर्ण बातें और तर्क भी प्रस्तुत किये हैं। यह दूसरी बात है कि उनके सभी तर्कों से सहमत नहीं हुआ जा सकता। भाषा और संस्कृति के सम्बन्ध में अक्षेय के तर्क अजटय और सहज स्वीकार्य हैं। किन्तु * अक्षेय ने काव्य में निर्दोषता के साथ जो बड़ा महत्त्व दिया है। और तत्पश्चात् इसी की काव्य और व्याकरण की श्रेष्ठता का प्रमाण मान लिया है। *
अक्षेय के इस मत के विपरीत छायावादी काव्य सम्पूर्ण वैयक्तिकता का काव्य है। उसमें कवियों के व्यक्तित्व की इतनी गहरी छाप पड़ी है और उस छाप के कारण इतना मार्मिक भाव संवेदन उसमें सन्निहित हो गया है। कि यह निर्दोषता की पुकार एक अर्थ में अस्वाभाविक भी कहनी जा सकती है।

अपनी कविता की स्वयं वकाशत करने के पक्ष में उनका तर्क है कि शास्त्रीय आलोचकों ने नयी कविता को सहामुहुरि तो क्या पूर्ण-पूर रहित अध्ययन भी उपलब्ध नहीं हुआ। अतः उनका कहना है कि "कृति-कार के पक्ष में कवि को बखीस और जब दोनों होना चाहिये, तत्पश्चात् के साथ - साथ आम भी जाता बनकर भी प्रस्तुत होना चाहिये" *2 यह दूसरी बात है कि उनकी इस बात से जहाँ एक ओर अनेक प्रयोग वादी कवि तल्लीन हो जायेंगे वहीं आचार्य नन्द दूसरे पाखोयी जैसे लोग उनके विरोध में खड़े होंगे। अक्षेय के इस प्रस्ताव को मानने से यह सुविधा मिल सकती है, कि कवि पर स्वर एक दूसरे की भावनाओं को

111 आचार्य नन्द दूसरे पाखोयी: आधुनिक काव्य- चिन्तन

आलोचना अंक : 25: पृष्ठ 77

121 अक्षेय तीसरा सप्ताह : पृष्ठ : 11- 12

यथोचित तिष्ठ करने का प्रयास करें । और पारस्परिक द्वेष की अवस्थाओं में उसे निकट घीसित करें । जो भी हो अपने विचारों से उद्वेग में तदैव अपने भग विषादात्मक बनाये रहा । उनकी प्रतिष्ठा का श्रेष्ठ कविता के अतिरिक्त एक या भी रहस्य है ।

121 रघुवीर तहाय:-

रघुवीर तहाय की कविताओं में सामाजिक यथार्थ के प्रति जानबूझकर तथा वस्तु तत्त्व के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण तर्ज दियाई देता है । वे समाजवाद के मुख्य एवं मान्यताओं को ग्रहण कर मानव विज्ञान में अपनी पूरी आस्था व्यक्त करते हैं । किन्तु वह भी स्पष्ट करते हैं कि " समाजवाद को कविता पर निष्काश की तरह चढ़ाया नहीं जा सकता । उसके लिए प्रत्येक - धार्मिक धोखा खाते रहने वाले, दुःखी व्यक्ति को, अपनी धार्मिक धेनू को जातक रहना पड़ेगा और बराबर जानबूझकर एक दृष्टिकोण बनाना होगा - यही कविता में जान और माने पैदा करेंगे ।" 1 रघुवीर तहाय कविता की ताल । तयः की आम आदमी के साधारण जीवन वाल की ताल । तयः की तरह बनाने का भाषा को आम बोधयोग की भाषा के निकट लाने के वह माती है । कविता में यथार्थ विज्ञान पर वे विशेष जल देते हैं । अनुभूति की प्रकृता पर जल देते हुए वे कहते हैं कि " विचार वस्तु का काम कविता में कुल की तरह दीड़ते रहना, कविता को जीवन और शक्ति देता है । और वह भी तभी सम्भव है जब हमारी कविता की जड़े यथार्थ में हों " 2

111 रघुवीर तहाय: तार तप्तक : पृष्ठ : 150

121 रघुवीर तहाय: तार तप्तक : पृष्ठ : 151

13। प्रयाग नारायण त्रिपाठी:-

प्रयाग नारायण त्रिपाठी कविता को दर्शन, उच्चात्म, अन्तरा
लोई मत पाट नहीं मानते हैं कविता को एक अभिव्यक्ति स्वीकारते हैं,
जो पाठक या श्रोता के हृदय - विषाद आदि भावों को उद्देक्षित कर सकती
है। कवि के बारे में या त्रिपाठी का मानना है। कि कविता जानो यह
पन हुआ है जो वर्तमान के अन्तरांतर में कुछ कर तन में रिक्त तीर्थी का
गुंथ घेर कर मोती निकाल ले आता है और आप को साँप देता है। अब
आप चाहें तो उस मोती को अपनी केप पर रख कर निर्विघ्न देखते हरे, चाहें
उसे अपनी प्रिया के आभूषणों में लकवा दें चाहें उसे बेघर कर केँत बढ़ा दें।
कविता का तात्पर्य तो यथार्थ का तन तपशी, सुन्दर और प्रेक्षणीय चित्रण है।*

प्रयाग नारायण त्रिपाठी के उपरोक्त कथन से स्पष्ट है कि वे
यथार्थ के सुन्दर तन तपशी तथा प्रेक्षणीयचित्रण को कविता का ध्य मानते हैं।
क्यों कि कवि उनके अनुसार आप के जीवन को जीता है, भीखता है। किन्तु
तीसरा सप्तक में संग्रहीत उनकी कविताओं में यथार्थ के तन तपशी चित्रण की
अपेक्षा आत्मोन्मुखी प्रवृत्ति का अधिक चित्रण हुआ है। वस्तुन्मुख होने की
अपेक्षा वे उपलब्धियों को भीतर से ग्रहण करने के हामी अधिक दिशा ई देते
हैं। * समाधिस्थ* शीर्षक कविता में कुछ छद्मी प्रकार के लक्ष्य की स्वीकृति
दृष्टक होती है।-----

* गुड मैं छु है

जो मेरा धनकुल अना है

111 प्रयाग नारायण त्रिपाठी: तीसरा सप्तक: पृष्ठ 22- 23

जो मेरे अ-रोज्ज्वल मन के मन्थन कीका माकन
 पितली में बहुत दूट कर
 बहुत बहुत अपने में रहकर
 बहुत बहुत सहकर पाया है
 पितली उह रह दूतराया है । -1

आत्मोन्मुख रहने के कारण प्रयाग नारायण जीवन सर्व जगत् के प्रति
 विनम्र जीवता आ गयी है । दार्शनिक की रहस्य मुझा मे से ये प्रश्न पूछने लगते
 हैं:-

* पृष्ठ 1 पूर्ण निःशक्ति निःशब्द तुम इतने तटे ते
 निर्वृत निःशक्ति
 गुरु मु पृष्ठ ते जो कि वर्क १ वर्क
 पूर्ण निःशक्ति निः शब्द तुम इतनी तटी ती
 निर्वृत, निःशक्ति, दृढ़ गिरि पृष्ठ ते
 जो कि वर्क 1-2

किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि जीवन के व्यापक यथार्थ पर
 जीवता सर्व ताकता त कवि परिचित ही नहीं अवित यह कहा जा सकता है
 कि युग जीवन के संकटों तथा संघर्षों को वह व्यापक जीवन तन्मयों में देखता
 है और विन्दगी की "मुक्त विरात" करने के लिए दृढ़ संकल्प है —

11। प्रयाग नारायण त्रिपाठी तीतरी तपक । तमाधित्य कविता ।
 पृष्ठ : 26

12। प्रयाग नारायण त्रिपाठी तीतरी तपक । तमाधित्य कविता ।
 पृष्ठ : 30

13। प्रयाग नारायण त्रिपाठी तीतरी तपक पृष्ठ 28

"मे इच्छान वाचा पर नहीं निरुता हूँ
 मैं विन्दगी का मुताबिक हूँ उस के लीन विन्दगी का
 जो अपनी ताश की पतनियों पर पाँच रखकर
 ठहाके मारती है
 और फिर दौड़कर
 अपने ही जगत विभू जी के लीनों को घुम लेती है ।

और उस तार्किक आस्थापान मूढ़ तर्ज से बाधित हो उसके
 प्रान्तों में समा जाती है । जीवन के प्रति कवि का दृष्टि कोण प्रतियोग
 या हिंसा जगता बुभुक्षा का नहीं अपितु शांति और संतुष्टता से जीत प्रोत्त
 है । पिताजी जी का कवि मन वस्तु तत्त्व की ओर आत्म तत्त्व के प्रति
 इति इति है । सामाजिक यथार्थ की पकड़ की ओर व्यापक जीवन की पकड़
 के लिये उनकी कैलास तपस्व दृष्टि गोचर होती है अनुभूति की तुलना में
 उनकी चिन्तन शीलता अधिक मुखर है । तथा वे हास्य, व्यंग्य के आस्वादन
 के बड़े संयम, संतोष और गम्भीरता के साथ अपने विचारों को अभिव्यक्त
 करने के प्रति अधिक आग्रहीता दिखाने देते हैं । जहाँ तक कविता के शिल्प
 के सम्बन्ध में उनके दृष्टि कोण का प्रश्न है । वे भी ही कभी कभी अभ्यास
 के लिए ज़ेद कभी कभी को यथार्थ करने के लिए "परम्परागत छन्दों" का
 व्यवहार करते हैं । अन्यथा वे कविता में मुक्त छन्द के ही समर्थक हैं ।

14। मदन वात्स्यायन:-

मदन वात्स्यायन वेशे से रसायन शास्त्री हैं और तिन्दरी के

विशाल कारखाने में निरीक्षण का कार्य करते हैं। साथ ही तमक के वर्धित कवि के रूप में भी जाने जाते हैं तथैव ये एक विद्वान वैत्ता और कवि के रूप में पूर्ण हैं। मदन की का व्यक्तित्व मानना है कि कवि जन जीवन के अधिक निष्ठ नहीं पहुँच पायी तो इसके लिए कवियों को उद्यम नहीं अपितु इसके लिए पूर्ण की और समाज वादी राजकीय नियन्त्रण के लिए बंधन से निस्तेज हमारा आज का समाज उत्तर देगी है—* स्पष्ट तोड़ लिया है बँते ने, काइनों ने हमारा तब हर लिया है और विजात तो न पूँजी को है और न काइनों को।————— इतनी निस्तेज कविता कभी नहीं हुयी। * किन्तु ये इस बात पर संतोष पूर्ण गर्व करते जान पहुँते हैं कि * उगा देवता से लेकर जे तक, नान यौन भाषना से लेकर सामाजिक, श्रान्ति तक, देहाती प्रहार्द से लेकर कसुर्जों तक, उग्र चेतन से लेकर स्तुन के अनुत्तेजित पिछा तक इतना व्यापक विस्तार जगह पहले किसी पाद की कविता का नहीं हुआ।*2

मदन पातन्यायन ने कविताओं माया वादी तथा काया वादी दो कोटियों में विभक्त किया है। बुद्धि विजात की प्रधानता रहने वाली कविताओं को वे मायावादी और नये रसों की दृष्टि करने वाली कविताओं को वे काया वादी कहते हैं। पुनः माया वादी कविताओं को तीन और काया वादी कविताओं का चार भागों में बाँटा गया है। इस वर्गीकरण में नवीनता और काया वादी कविता की तराहना उनका उद्देश्य, दृष्टि गोचर होता है। इस क्षेत्र में उन्होंने दो प्रकार की कविताएँ लिखने में रुचि दिखाई है। पहली प्रेम की अथवा प्रेम की ओर, दूसरी उत कालस्य स्व बन्ध चरित्त वरिष्ठ से उत्पन्न जिसमें सरकारी काइनों

111 मदन पातन्यायन: तीसरा तमक : पृष्ठ : 219

121 मदन पातन्यायन: तीसरा तमक : पृष्ठ: 110

तथा सरकारी अखबारों का अदभुत रूप प्राप्ति मूल्य है । यहाँ केन्द्र-परक कविताओं में नई कल्पनाओं की आयोजना विमानत मनीषा का पट्टी है ।-

टोटा नैन, तरंग अंग मैं रोक की रात मेरी राह
लिखट गयी अंग अंग लहराती गोरी बोरी गेहूँन तपि १-१

कायावादी कविताओं के दूसरे भेद के रूप में श्री मदन वात्स्यायन ने कारखानों की पम्पकत जिन्दगी और अखबारों की अखबार शाही के बीच मोड़ों के जीवन की झलक स्पष्ट लिखी है:-----

* अखबारों से भरा सरकारी कारखाना
ताँपों से भरी कोठरी है
अबि नहीं लबकी ।
अखबारों से भरा सरकारी कारखाना
बहुत का धन बन है
परि नहीं टकले । १-२

कायावादी कविताओं की ओर मायावादी कविताओं पर मदन वात्स्यायन का ध्यान का गया है ।

वात्स्यायन की कविता का आरंभ प्रधान और सब युक्त होना आवश्यक मानते हैं । नयी कविता में संगीत के प्रभाव की स्थिति को वे शीघ्रणीय अवश्य मानते हैं किन्तु अटपटे पन को वे कोई कलंक नहीं मानते हैं वे साहित्य में मायावाद की शिक्षाओं को भी सार्थक मानते हुए अग्रिम करते हैं कि नये अंशों की फल के लिए फल भर के लिए बार महीने का घना

=====

११। मदन वात्स्यायन : तीसरा सप्ताक : पृष्ठ: १५५

१२। मदन वात्स्यायन : तीसरा सप्ताक : पृष्ठ: १५५

तो दीवार नयी चीज के बीज है पुरानी अनुभव नहीं है, यौन्य बदल गया है
 पैल न रहे, देहर है, बाट नहीं, कटिनाअर ह, उतनी कुरीत भी नहीं रही -
 पैली ही, क्यहरी, पंचायत है, पुंनय है, गाँव में शहर पुन आ रहा है ।
 आशिका तबु तलब और तमन्न केताब ।¹ गालिब ।¹

कविता सर्वज्ञा को मदन वात्स्यायन अतिथेन और अब पैलन दोनों
 से प्रभावित मानते हैं । उनका कथन है कि अति पैलन और अब पैलन के द्वन्द्व
 के बीच भाव कुछ बिजली के डे छोके की तरह लहता आगे ह । एक चित्र आया
 और अनुभवों की बिटारी में ते दूसरे चित्र युव में युवने लगे यह हुआ कविता
 का नभाधान वन्य पाहे नो कल बाद हो या नये ताल बाद ।²

वस्तुतः मदन वात्स्यायन की कवितारे वर्तमान व्यावसायिक
 और औद्योगिक युग के प्रक्षिरोध में झाँक कुनोती के तजान हमें आकृष्ट करती
 है । वे मुक्तः कोमल प्राणी के कवि हैं । नयी कल्पनारे नये उपमानों के
 नियोजन से उनकी काव्य प्रतिभा को और अधिक निखारती रही ह ।
 'मुक्तारा' तीर्थ कविता नये उपमानों के लिए दृष्टव्य ह । निष्कर्षः
 हम कह सकते हैं कि मदन वात्स्यायन विद्वत् संस्कृत और हरिष्कृत जनोपति
 के कवि हैं ।

5: गजानन माधव मुक्ति बोध:-

गजानन माधव मुक्ति बोध लोने के तारु तारु तिर्जित और

11। मदन वात्स्यायनः तीतरा तपकः पुच्छः 188

12। मदन वात्स्यायनः तीतरा तपकः पुच्छः 128

साक्षात् विचारक भी है। मुक्ति बोध ने अपने विकास में लिखा है कि "जब मन की पहली पुरुष ताँन्ट" थी और दूसरी किच मानस का तब दुःख इन दोनों का संघर्ष उनके साहित्यिक जीवन की पहली उत्पन्न थी। "कृष्णः मेरा दुःख माँझाट की ओर हुआ। अधिक वैज्ञानिक अधिक मुँह, और अधिक तेजस्वी दृष्टिकोण मुझे प्राप्त हुआ।----- यहाँ यह स्वीकार करने में मुझे संकोच नहीं कि मेरी हर विकास स्थिति में मुझे और उत्तमोच्च रहा और है। मानसिक द्रष्टा मेरे व्यक्तित्व में बढ मूल है। यह मैं निकटता से अनुभव करता आ रहा हूँ कि चित भी क्षेत्र में मैं हूँ यह स्वयं अपूर्ण है और उसका ठीक ठीक प्रकटीकरण भी नहीं हो रहा है। फलतः गुप्ता आर्ति मन के अन्दर लार लिये रहती है।"¹

लेकिन के विषय में मुक्ति बोध कहते हैं कि मैं जलाकार की स्थानान्तरण नामी प्रवृत्ति पर बहुत जोर देता हूँ आज के वैविध्य मय उत्पन्न से भरे रंग बिरंगे जीवन को घटि देखना है तो अपने वैचारिक क्षेत्र से एक बार तो उड़कर बाहर जाना ही पड़ेगा। बिना उसके इस विज्ञान जीवन समुद्र की परितोषा उसके तट प्रदेशों के झुंझड़ आँगी से और ही रह जायेंगे जला का केन्द्र व्यक्ति है किन्तु उती केन्द्र को अब दिया - व्यापी करने की आवश्यकता है। फिर पुनः संश्लेषण में कार्यक्षम उत्पन्न होते हैं जलाकार नहीं। इस धारणा की वास्तविकता के द्वारा जला साक्षात् करना ही पड़ेगा।² उनकी कविता के "प्रान्त परिवर्तन का कारण है यही आन्तरिक जिज्ञासा" और यह जिज्ञासा उनके काव्य में अन्त तक बनी रहती है। वे स्वयं स्वीकारते हैं कि उनकी ये कविताएँ अपना पथ ढूँढ़ने वाले वैपेन मन की ही अभिव्यक्ति है उनका सत्य और

॥१॥ जलानन माधव मुक्ति बोध : तार कथक पृष्ठः ॥

॥२॥ जलानन माधव मुक्ति बोध : तार तथक पृष्ठः ॥

मुख्य उती जीवन स्थिति में लिया है ।¹

मुक्ति बोध केन्द्रेती निजने में अपना सामी नहीं रखते हैं । उनकी कवितातियों में उनके अपने आन्तरिक और बाह्य परिवेश कवि के अहम और सामाजिक के व्यक्तित्व के बीच का संबंध उभर कर सामने आया है :-

* चित गया वह भीतरी और बाहरी
दो कविन पाटी के बीच
है वहीं है नीच ।²

16। भारत भूख अग्रवाल:-

भारत भूख अग्रवाल कम्युनिस्ट है और मार्क्सवाद जो आज के समाज के लिए राय मान * मानते हैं आज के कवि । छायावाद के हास कात के कवि । जो दम्भी अकर्म्य और असामाजिक बताते हैं । वे बोलते हैं कि हिन्दी काव्य को समाज से नाराज होकर भागने की सजाय समाज की उत शक्ति सत्ता से लड़ना होगा जितने अतकी कोरा स्वरनाशिताधी और कल्पना विनासी बना छोड़ा है । इस संदर्भ के पक्ष पर जब कवि अ ने अनुभवी को पक्ष बतलाने का कविता उनके हाथ में एक मुख्यवाद अलग की भाँति होगी आज की तरह आर्थिक अस्तित्व हीन कुनो की तेज नहीं ।³

17। गिरजा कुमार माधुर:-

गिरजा कुमार माधुर विषय की मौलिकता के पक्षपाती होते हए

11। कानन माधव मुक्ति बोध: तार सप्तक: पृष्ठ 11

12। कानन माधव मुक्ति बोध : अहम राष्ट्रकविता पृष्ठ:

13। भारत भूख अग्रवाल : तार सप्तक पृष्ठ 33

अस टक्नी कि को अधिक महत्त्व देते है इसी कारण चित्र को अधिक स्पष्ट करने के लिये वे वातावरण के रंग उसमें भरते रहे हैं । और कहीं कहीं तो उन्होंने वातावरण के चित्रण से ही विषय को इंगित किया है । चित्र में अत्यधिक गहरे रंगों का प्रयोग वे प्राचीनता लाने के लिए ही रख हैं । यहाँ मैंने आधार भूमि विशालकाय कर दी है और डिटेल् कम डिटेल् मैंने रोमानी कविताओं में ही अधिक भरे है । *¹ रोमानी कविताएँ वे हिन्दुस्तानी भाषा में ही छोटी और मीठी हवस वाले बोल चाल के शब्दों के प्रयोग से ही लिखना पसन्द करते है । और ~~बला-सिक्क~~ कविताओं में आर्य गुण लाने के लिए बड़ी लम्बी और गम्भीर हवस वाले शब्द रखे हैं । *² माधुर के काव्य में रंग रस और रोमांस की कोमल अनुभूतियों का एक चित्र दृष्टव्य है :-

आज अचानक सुनी संधा मैं
जब मैं यों ही मैले कपड़े देख रहा था
किसी काम मैं जी बहलाने
एक सिल्क के कुर्ते की सिलवट मैं लिपटा
गिरा रेशमी चुड़ी का छोटा सा टुकड़ा
उन गोरी कलाईयों में जो तुमने पहनी थी
रंग भरी उस मिलन रात में
मैं वैसा का वैसा ही हर गया सोचता
पहली बातें
इन कोर से उस टुकड़े पर
तिरने लगी तुम्हारी सब लज्जित तस्वीरें
तेज सुनहली

=====

111 गिरजा कुमार माधुर: तार सप्तक पृष्ठ: 40

121 गिरजा कुमार माधुर : तार सप्तक पृष्ठ: 40

जैसे हृदय बन्धनों में धुँडी का धरजाना
 निकल गयीं तबने जैसी वे रातें
 पाद टिकाने रहा तुझमें भरत यह दुँडा ।¹

वस्तुतः यह कहा जा सकता है कि वस्तु जन्म के क्षेत्र में नये प्रयोग करने वाले कवियों में निरजा कुमार माधुर अपना अलग स्थान रखी हैं जीवन के परिणामित तन्त्रों पर उनकी दृष्टि पहुँची है और उन्हें के साथ कद को भी उनकी रचनाओं में पायी मिली है । रंग, रस और रोमान्स उनकी लक्ष्य अभिव्यक्ति का सहारा पाकर सुन्दर रूप से कविता में आये हैं उनका कवि व्यक्तित्व उत्तरोत्तर विकसित गया है ।

151- नरेश कुमार मेहता:-

नरेश कुमार मेहता राजनीति और साहित्य को समर्थ मानते हैं । नरेश मेहता का कवि व्यक्तित्व निरन्तर विकसित होता रहा है समय के साथ साथ उनकी साहित्य विषयक मान्यताएँ भी बदलती रही हैं । वे अपनी छायावादी स्व रहस्यवाद से प्रभावित रचनाओं को कविता नहीं मानते उनका विचार है कि " मनुष्य के आदि काल से काव्य से भावों की विराटता प्रकट करके सुन्दर कवना प्रथम साहित्य" रचा जा सकता है । अपने भाषा की पुष्ट करने के लिए वे " उषा " शीर्षक से निजी गयी रचना को प्रस्तुत करते हैं । उनके मतानुसार " कविता की अकाल सृष्टि ही गयी है । और हिन्दी में प्रयोगों की आवश्यकता बढ़ती जा रही है क्योंकि युग आज बदल रहा है ।"² अपने विचारों की वैसाक अभिव्यक्ति के कारण ही

111 निरजा कुमार माधुर: तार सप्तक : पृष्ठ: 42

121 नरेश मेहता: दूसरा सप्तक: पृष्ठ: 120- 121

कई बार आलोचक ऊपर ऊँहें वादी तथा व्यक्तिवादी होने का आरोप लगाते हैं किन्तु वे स्वयं इस तरह का कुत्ता कुँडन करते हैं। उनकी रचनाएँ भी प्रयोग वादी काव्य धारा में एक विशिष्ट स्वर की उभारती हैं और वह स्वर है पिछे मानव की पीछा का स्वर मेला मानव की लज्जा की प्रतीति से वर्णित नहीं होते वे मानव को छुड़ छुड़ देना नहीं चाहते उनके विचार से पिछे की मानवता एक है और उतने देश काल के अनुसार अपने भाग्य और स्वल्प का विकास किया है। पिछे मानव की रक्षा की स्पष्ट स्वीकृति उनकी "तमय देवता" कविता में स्पष्ट देखी जा सकती है। इस कविता इस कविता में श्री मेला ने टूंडा, टैगा, स्लोवीन, चापान, हिमालय, भारत वर्ष, म्यां, अमरीका, इंग्लैंड, फ्रान्स, स्विटजरलैंड, जर्मनी, इटली, मिस्र, दक्षिण अफ्रीका, इत्यादि सभी प्रभागों की मानव उपलब्धियों का यथा तथ्य किन्तु रागविष्ट किया है। विभिन्न देशों के जीवन एवं चरित्र पर कवि ने अत्यन्त सूक्ष्म एवं निष्पक्ष टिप्पणी की है। भौतिक ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक सभी पहलु उनकी नैयमी से सुन्दर रूप में प्रस्तुत हुए हैं। द्वितीय युद्ध की विभीषिकाओं की ओर संकेत करते हुए कवि ने नव युग एवं नव मानव के अभि युद्ध की कामना भी व्यक्त की है :—

तमय देवता ।

होत तमय तुम्हें मेरी बुद्धि का परिधय प्राप्त हुआ है

जो कि युद्ध की पीतों के मुँह से लड़की की संभ जा रही ।

x

x

x

तमय देवता

आज बिदा लो

किन्तु हमारे देश के इस घमक घटन में
मिट्टी का मिश्रण बाँधकर भेज रहा हूँ
मेरी धरती पुष्प जाती है और
मनुष्य की बेजानी के घराबाह पर दौड़ रही है
लूकानों की नमी हवा में ।¹

स्पष्ट त्व से नरेश मेहता में विश्व मानव की कामना कल्पना
के रंग से रंगी होने के बाद भी अत्यन्त गम्भीर और उदात्त धरातल पर मिलती
है उनकी शैली में यथार्थ के पुः के साथ - साथ अभिव्यक्ति के साधनों में नयेन
के दर्शन होते हैं उनके अस्तुत और विश्व विधान की नवीनता उनके भावों की
स्वीय तथा सुवर्णित करने में पूरी तरह सक्षम है ।

19¹ धर्मीर भारती:-

धर्मीर भारती के लिए कविता * शान्ति की छाया और
विश्रान्त की आवाज रही है * । जब उसकी पैरों ने पंख पतारे तब छाया-
वाद का बीज बोला था । उसे लगा कि * कविता की गहवाड़ी, इन अना-
धि कल्पनाओं , टेढ़े, मोड़े, लब्ध जालों अस्पष्ट त्व को और उनके हुए
जीवन दर्शन की गिलाजों से बंधी उदात्त जल परी की तरह बँद है और भारती
को चाहिए कि वह उसे उका मुक्त कर सर्वथा मानवीय धरातल पर उतार
लावे ताकि वह फेंकी- फेंकी याँदी की बालू पर आदम की तन्तानों के साथ
बेहियक जूँट मिश्रीली होत तबे उन्हीं की बोली में बोल तबे उनके लीये-लीये
वातनाजों कामनाओं को समझ तबे । इसलिए भारती जी ने सर्व प्रथम लिखे

॥॥

नरेश मेहता: दूसरा संपर्क: पृष्ठ: 132- 145

भाषा में सरल व रंग विहंगी विधात्मकता से समन्वित साहित्य पूर्ण
उन्मुक्त स्पर्श वातना और उद्दाम यौवन के तर्जना साक्ष्य थी।
जो न तो मन की प्यास को बुझाये और न उसके प्रति कोई झुका
ही प्यार है जो सीधे देग से पूरी ताकत से अपनी बात आगे रवे
आदमी की सरल और तबल अनुभूतियों के साथ निहार के तर्ज बोम
तर्ज ।-1

झिंकी की गोद में तिर धर
बटा बनसीर विहरा कर अगर विधात तो जाये
धड़कते घड़ पर मेरा अगर व्यक्तित्व को धार ?
न हो यह घासना तो जिन्दगी की भाष कैसे हो ?
झिंकी के रूप का सम्मान मुझ पर पाष कैसे हो ?
झाँ की रोजमी पुष्पन मुझ पर शाय कैसे हो ?-2

भारती की की कविता में प्रकृति का सारा यौवन और काकली भावी
कवि के साक्ष्य प्रमाण के निमित्त है उपकरण चुटा कर उसे व्यक्तित्व करता है
कवि ने प्रकृति के सहज सौन्दर्य की पृष्ठ भूमि में मिलन और लज्जा के
तेजो पित्त अंकित किये हैं वे स्वयं लिखते हैं कि - यों वाचत में भारती
के पास लुप्तता है और वह तारों से रोजमी और फूलों से रंग बुरा कर
बात - बात पर विष बनाती चलती है । आखिर उसकी कविता रोजी
पिछले जन्म में कुछ देग की राजकुमारीरही होगी जिन्की तिर का
हर अक्षर ही एक स्वयं पूर्ण विष होता है । लेकिन भारती की इस
बात का ध्यान रहता है कि उसके विष आवत में अतलने न पायें और
कुल मिलाकर अपनी बात को पूरे प्रभाव के साथ रहें ।-3

=====

111 धर्मवीर भारती: दूसरा सप्ताक: पृष्ठ: 170- 77

121 धर्मवीर भारती: ठन्डा लोहा: पृष्ठ: 22

131 धर्मवीर भारती: दूसरा सप्ताक: पृष्ठ: 177- 78

भारती की कविता का मुख्य कार्य •

मानकर

"प्रभाव डालना" मानते हैं वे लिखते हैं कि इस वैज्ञानिक काल में मानव की सदियों पुरानी मान्यताएँ बहुत तेजी से लाभ दहती चली जा रही हैं उसकी चेतना के सामने नये नये विचार हर समय कुल्लो जा रहे हैं । x x ऐसी अवस्था में बि जीवन का आत्मादन करता है तो उसे ऐसे कितने स्पंदन तैपंदन मिल जाते हैं जिनके लिए उसे एक नयी अभिव्यक्ति की खोज करनी पड़ती है, नया काव्य रूप ढूँढना पड़ता है । इसलिये अब कविता की कठौटी की हतनी व्यावहारिक करनी होगी कि वह इन सभी उक्ति मनी अनुभूतियों को अपनी बाँटों में भरती हुई सभी मानव की फिर आत्म प्रभूतियों का अर्थ भी सु लके । इसलिये आज की आधुनिकता कविता के लही- लही मूल्योक्ति के लिए एक पुन पुराना सिद्धान्त बहुत ना काफी मायूम होता है । उसमें नये अध्याय जोड़ने हगि ।¹ तिक रत सिद्धान्त के विषय में ही नहीं अन्य अनेक साहित्यिक मूल्यों और मानदण्डों के लिए भी भारती की ने अपने मौलिक रूप स्थापित किये हैं पुरानी सीक से हट कर कुछ नया देने की चाह उनकी कविता में आपोषान्त दिखाई देती है । कायि परम्परा को तोड़ने के लिए भारती तत्पर है किन्तु वे परम्परा को एक निश्चित मूल्य और मानदण्डों की स्थापना के लिए ही तोड़ते हैं अपितु तिक प्रयोग के लिए प्रयोग करना उनका अभिप्राय नहीं है अपितु अपनी अनुभूति और स्व विचारों के तीव्र अनुरोध से प्रेरित होकर ही वे परम्परा को तोड़ते और नये प्रयोग करते हैं । " मानवता की मुक्ति का क्षीन है क्षीन आलोक कम" वाले प्रत्येक नये आन्दोलन और नयी विचारधारा का वे त्याग करके हैं फिर भी सर्व सर्व के सिद्धान्त को वे अक्षत ही रखी- धृति दे पाते हैं ।²

=====

111 धर्मवीर भारती: दूसरा तपक: पृष्ठ: 176

121 धर्मवीर भारती: दूसरा तपक: पृष्ठ: 180

॥०॥ नेमिचन्द्र जैन:-

नेमिचन्द्र जैन मार्क्सवाद से पूरी तरह प्रभावित है तथा कविता में भी कम्युनिस्ट के सिद्धान्तों की प्रशंसा पर का देते हैं किन्तु "अपनी कविताओं के नये रूप और रूपों का कलात्मक सुस्थापन वे तुम्ही पाठकों पर छोड़ने के पक्ष में हैं। उनकी कविताओं में ते अशिक्षा की कुछ छुमि में " संशय के रंगों की प्रभावता दृष्टिगोचर होती है संस्कार और विवेक की कलकला की योजना ही इन कविताओं का विषय है।^१ तीसरे क्रम विभाजन के इस युग में यदि सम्यक् प्रत्येक मुख्य की विन्दुओं " एक छलाही बन गयी है तो साथ ही " तत्पर सहयोगिता और निर्भरता भी असाधारण रूप से बढ़ गयी है। किन्तु विवेक चाहे जितना इस समय को सामने रहे आज के जहाँ का मन प्रत्येक समस्या को सामने पाकर बैठे जितनी की गोट में कुछ दुबका मैना चाहता है अपने भीतर आत्मस्था हो रहना चाहता है।^२ प्रस्तुत कविताओं की पीछे नेमिचन्द्र जैन का कथन है विवेक द्वारा इस आत्मस्थ होने की चाह को परखने की प्रवृत्ति की कवि की है। - " अपने संस्कारों और भावनाओं के जहा को यह समझ-पाजों की तुलना के तही मार्ग पर उचित एक सामूहिक प्रयत्न के द्वारा उनका समाधान पाने के मार्ग पर जाने में अपनी अतमर्षिता की बार - बार अपने विवेक के द्वारा पीर- पीर झटका चाहता है उसके मन का तारा संकट इती विन्दु पर केन्द्रित हो उठा है।^३

श्री जैन का मानना है कि " सौन्दर्य का आकाश पलायन की

॥१॥ नेमिचन्द्र जैन: तार सप्तक: पृष्ठ: 21

121 " " पृष्ठ: 22

131 " " पृष्ठ: 22

प्रवृत्ति का सर्वदा सूचक नहीं होता सौन्दर्य की अनुभूति तो व्यक्तित्व जो और भी स्पष्टनीति बना देती है ।^{*1}

नेमिचन्द्र जैन साहित्य में प्रगतिशीलता के समर्थक है अथवा किन्तु उनके मतानुसार ज्ञान की सच्ची प्रगतिशीलता ज्ञानकार के व्यक्तित्व की सामाजिकता में है व्यक्तित्वहीनता में नहीं ।^{*2} उनकी कविता में व्यक्ति और सामाजिक के बीच के संबंध की दृष्टि को भी पर्याप्त स्पष्ट शब्दों में अभिव्यक्ति मिली है:-

*किन्तु वय- दारि

विषय में हार जाता है भयंकर मोन से

वे माय अपने प्राण में छाये हुए स्वप्न से

सत्ता निर्वातित हृदय से

तिरस्कृत व्यक्तित्व के

धीरे अज्ञान हर्ष ने मन की

सहज अन्याय स्वाभाविक अनापुन्य धार को

छर दिया है कुण्ठित

सहज अंगारे

कि मानो दब गये हों कुठे से

कैसे कि ठन्डी राख है ।^{*3}

नेमिचन्द्र जैन की कविताओं के मूल्यांकन से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि विचारों से प्रगतिवादी होने के बाद भी कम्युनिस्ट विचारों

111 नेमिचन्द्र जैन: तार सप्तक: पृष्ठ: 23

121 " " पृष्ठ: 23

131 " " पृष्ठ: 30

को वन पुर्यंक कविता का विषय बनाया उनका उद्देश्य नहीं है तामा-
विज्ञता पर विशेष का देने के बावजूद भी वे व्यक्ति के अहम को भी पूरी
ईमानदारी के साथ उतारने में तत्पर हुए हैं उनकी कविता में उनके मौलिक
चिन्तन की स्पष्ट झलक दृष्टि गोचर होती है ।

॥॥॥ कैदार नाथ सिंह:- *****

कविता में विषय विधान पर विशेष ध्यान देने वाले प्रयोग
वादी कवि कैदार नाथ सिंह को जो कविता, संगीत और उक्ति पन
तीन चीजें बहुत प्रिय हैं । स्वयं उन्हीं के शब्दों में - " हर लम्बे दिन
के बाद जब लौट कर आता हूँ तो कुछ देर तक कमरे के दानव से लड़ना
पड़ता है । पराजित कोई नहीं होता पर समझौता भी कोई नहीं करता
शायद हम दोनों को यह विश्वास है कि हमारे बीच एक तीतरा भी है
जो अजन्मा है । कौन जाने वह तीतरा उती के लिए हो ।"¹

कैदार नाथ सिंह कविता में सबसे अधिक महत्व विषय विधान
को देते हैं - " क्योंकि वह विषय को पूरी रस ग्रह बनाता है । और
व्यक्ति की तीक्ष्ण रस दीप्त ।"² यिनों के प्रति उनमें सहज आकर्षण है
उनका विश्वास है कि बिना यिनों प्रतीकों, लयको, और बिम्बों की
सहायता के मानव अभिव्यक्ति का क्रम पूर्ण नहीं हो सकता । वे मानते
हैं कि आज की विकारी अनुभूतियाँ तथा चलि तपेदनाओं को स्थापित
करने के लिए कविता में बिम्बों की सृष्टि ही सहायक हो सकती है ।

॥॥॥ कैदार नाथ सिंह: तीतरा तपेदना: पृष्ठ: 180

॥॥॥

•

•

पृष्ठ: 182

पहुँचा के हाथों में हाथे किरौंकी
 पुरमा के हाथों में कुल
 जाना जी बादल जखर
 धान तुलै, धान तुलै
 तुलै हमारे केा में
 जाना जी बादल जखर ।^१

बेदार नाव किंग की कविताओं के दूसरे खंड में वे रचनाएँ सम्मिलित की जा सकती हैं जो अनागत या नवयुग के स्वप्नों का विषय करती हैं एवं तीसरी खंड में उनकी प्रेम विषयक रचनाओं को रखा जायेगा ।

केदार नाथ सिंह जी कविताओं के मूल्यांकन से एक बात तो साफ झलकती है कि उनमें कलात्मक विशेषता है। लघु-टिप्पणियाँ विधान मधुर संगीत योजना तथा लोक जीवन के प्रति उच्चिष्ठ आस्था का सिंह जी कविताओं में सर्वत्र देखी जा सकती है।

1121

अन्तर्गत प्रश्न:-

कैतरी कुमार प्रया वाद : नरेन वाद : ते तम्बद दुतै कवि
है । उनकी छवि छवि है साथ साथ प्रपञ्चाद के दार्शनिक व्याख्याता

॥ : हेदार नाथ सिंह : तीसरा तपक : पृष्ठ : 201- 202

के लक्ष में अधिक उम्मीद है, कारण स्पष्ट है कि अतिशय बोधिमता ।
 केतरी कुमार की रचनाएँ आसानी से अपना भार झुका नहीं लेती
 उन्हें समझने के लिए दिमागी कसरत आवश्यक हो जाती है । पाठक
 को कुछ सुझावों में जानने का आदेश कल्पित समीक्षकों ने केतरी
 कुमार की अनेक रचनाओं पर लगाया है । वस्तु निश्चित ही यही
 है कि " आकाशस्य प्रथम दिवसे " - " दृष्टि कोण " आदि अनेक
 कविताएँ इस तन्त्र में उदात्त की जा सकती हैं । एक उदाहरण दृष्टव्य
 है:-

अर्पित उम्र
 चिन्ता भुवि
 नखदान दे रहे स्वर
 । लोड्डा ।

तब जनः
 दीपदल-
 ज्यों तब जगह में दूर दूर की लहर ।*

नयी कल्पनाओं की योजना में केतरी कुमार की विशेष अभिरुचि
 है " लोड्डा " शीर्षक रचना अनेक नयी उपमाओं के लिए दृष्टव्य है जिसमें
 तब कटी एक अस्थिर आदमी की जम्हाई है तो वहीं शरीर लड़की और
 वहीं त्याही लोड्डा ।

॥ केतरी कुमार : दूसरा लघुक : पृष्ठ : 28

केतरी कुमार में दुख्खता तिरक विचारों के स्तर पर ही नहीं शब्द प्रयुक्त भी देखी जाती है। कई जगह तो लगता है। कि जैसे केतरी कुमार बिना शब्द कोष के अपना काम नहीं बना लको और प्रयास करते ऐसे शब्दों को खोज रहे हैं जिन्हे उर्ध्व ललाश करने के लिए पाठक को भी रचना के अतिरिक्त खोज करनी पड़े। आधोदम्य प्रथम पद्यों में "उन्दुर"। घुहा। "विनाशित"। पीड़ित। उर्ध्वगित। कंजीर में बंधा हुआ, "आपस"। लोहा। तथा उत्तमर्ग आरिष, काक पद, शरीरदी, आदि कुछ ऐसे ही शब्द हैं। लेकिन ऐसा नहीं है कि यह दुख्खता हर स्थान पर ही छापी रही हो केतरी कुमार की प्रेम विषय अनेक कविताओं में भावों की सहज अभिव्यक्ति भी पूरी तरह मिलती है।

॥५॥

नरेश:-

=====

अभिव्यक्ति के साक्ष्यता के दृष्टिकोण से नरेशवादी कवियों में नरेश का स्थान सर्वोपरि माना जा सकता है। इनकी कविताएँ अन्धों की तुलना में अधिक सुबोध है और ओढ़ी हुई दुख्खता से बचने की कोशिश उनमें लक्ष्य दिखाई देती है। नरेश ने तो बसतकार के मोह में पड़े होते हुए भी वे और न अपने अन्विष्ट उर्ध्व को पाण्डित्य का लोहा उड़ाकर ही व्यक्त करते हैं। प्रेम और व्यंग्य नरेश जी के काव्य में अधिक मुखरित होते दिखाई देते हैं। फिर भी उनकी कविताओं का प्रेरणा के अधिक विकसित है। उनकी प्रेम सम्बन्धी कविताओं में स्मृतता का अभाव है लक्ष्मीन शीर्षक

कविता हृष्टव्य है जिसमें प्रिया से दूर रहते हुए भी नेकट्य की अनुभूति की व्यंजना की गयी है ।

• मैं हूँ दूर, दूर हूँ फिर भी
 तुमसे इतना पास
 किना दो नाताओं ने कसे वाली ताँत
 और धुँद को कुण्ठित करने वाले
 निराकार पर मानव का विघात
 उतना पास, उतना पास ।^१

इसमें पर भी नरेश जी प्रपञ्चाद की समरकार प्रियता नये
 आर मौलिक शब्द प्रयोग की होड़ से प्रायः क्या नहीं पायी है । "पव-
 टीता- पव", मुक्ता-तम-हृद-रानी, पूर्ण विराज आदि शब्दों की
 तोड़ जोड़ उनकी कविताओं में स्वान स्वान पर मिल जाती है । ऐसी
 के शब्दों के प्रति भी उनके मोह दिखाई देता है ।

॥ नरेश : नरेश के प्रपञ्च: पृष्ठ: 71- 72

षष्ठ अध्याय
=====

छायावादी और प्रयोगवादी काव्य में ताम्य
=====

के आधार भूत तत्त्व
=====

- 1: विषय वस्तु की दृष्टि से
- 2: काव्य रूप की दृष्टि से
 - ॥क॥ कविता
 - ॥ख॥ अन्य काव्य रूप
- 3: अभिव्यञ्जना शिल्प की दृष्टि से
 - ॥क॥ भाषा
 - ॥ख॥ अलंकरण
 - ॥ग॥ छन्द एवं लय

छायावादी और प्रयोग वादी काव्य की मूल धारणा व्यक्तिवादी है। दोनों काव्य धाराओं के मूल में व्यक्ति प्रमुख है। फलतः दोनों ही काव्य धाराएँ नवीनता की ओर झुकी हुई, काम भावना प्रधान, निराशा वादी और कुंठा ग्रस्त है। यह बात दूसरी है कि छायावादी काव्य की अपेक्षा प्रयोग वादी काव्य अधिक कुंठा ग्रस्त है। वस्तुतः प्रयोगवाद छायावाद की ही चरम परणति है।

व्यक्ति जब महत्त्वपूर्ण हो जाता है तो समस्त सामाजिक मर्यादाएँ, धार्मिक वर्जनाएँ, नैतिक मान्यताएँ शिथिल होकर धीरे-धीरे टूटने लगती हैं। छायावादी कविता में यह मान्यताएँ शिथिल हुई हैं तो प्रयोगवादी कविता में यह टूट गई हैं। व्यक्ति की प्रधानता का अर्थ है व्यक्ति की अपनी परतों का महत्त्व वह जो अनुभव करता है, जो चाहता है और जो सोचता है, यही उसके लिये सब कुछ हो जाता है वह ऐसी स्थिति में उसकी चाहत उस पर सर्वाधिक हावी होती है। क्योंकि चाहत में जो सौंदर्य और आकर्षण होता है वह और किसी में नहीं। केवल चाहत के पीछे भागने से निश्चय ही कुंठाएँ और निराशा जन्म लेती है। क्योंकि प्रत्येक चाहत का पूरा होना जरूरी नहीं है "चाहिये अभिय जग जुड़े न धौंधी"।

विषय वस्तु:-
=====

आदमी की चाहत में सबसे ज्यादा आकर्षण काम भावनाओं की पूर्णता की चाहत है। यही कारण है कि सम्पूर्ण छायावादी काव्य प्रेम का काव्य बन गया। प्रेम की ओर इनके झुकाव का एक कारण यह भी है कि द्विपदी युगीन कठोर मान्यताएँ जो इनकी प्रेम की चाहत को

दवाये रही, उनके प्रति छायावादी कवियों के मन में विद्रोह की भावना पनपी और द्वितीय गुंन वर्जनाओं के विरुद्ध छायावादी कवियों ने अपनी काम भावनाओं की अभिव्यक्ति दी । ये दम्भित वातनाएँ जब एक आघेय के साथ व्यक्त हुईं तो अपने सहज स्व में नहीं । अपितु एक आचरण पहनकर छायावाद में मान्यीकरण की प्रकृति इसी आचरण का एक स्व है कवि को जो कुछ कहना था वह प्रकृति के माध्यम से उसने कहा । निराला की " जूही की जूही " इसी प्रकार की कविता है । इन कवियों ने सर्वत्र प्रकृति को एक नारी के स्व में देखा था और नारी के प्रति अपनी समस्त दम्भित वातनाओं की सृष्टि प्रकृति के माध्यम से की-

"तिन्धु तेज पर धरा पथु अब
तनिक संकुचित बैठी ती
प्रलय निशा की लज्जत स्फुटि में
मन किये ती रैठी ती"

यही नहीं पंत की " मौन नियंत्रण कविता में भी प्रकृति के ध्वनित मानवीय स्व का चित्रण किया गया ।

छायावादी कवि की अति भावुकता और संवेदनशीलता इन्हीं दम्भित वातनाओं का परिणाम थी ।

दूसरी ओर प्रयोगवादी कविता भी काम भावनाओं से सम्बन्धित वर्जनाओं को तोड़ती है । इस दृष्टि से छायावादी और प्रयोगवादी काव्य धारा में कोई भी अंतर नहीं है । अंतर है तो केवल विद्रोह की तीव्रता का छायावादी कविता जहाँ एक शास्त्रीयता

=====

॥॥ प्रस्ताव: कमायनी, आशा तर्ग पृष्ठ ५३५ अक्षर-गोप्यबली

लिये हुये विद्रोह करती है वहीं प्रयोगवादी कविता जब विद्रोही होती है तो शालीनता का त्याग कर देती है। उसे घर्ष से भीगी हुई पृथ्वी आकाश पुरुष के नीचे पड़ी हुयी रतिकर्ता भीगी योनि जैसी दिखाई देती है।¹ छायावादी कवि की भाँति दयी दही वधू जैसी वह नहीं लगती। पुनरावस्था आने पर प्रयोगवादी कविता स्पष्ट घोषणा करती है -

“फैल रही है परिधि स्तनों की
हसरतें भी जवान है।
आओ दोस्तों और साथियो
आओ मेरे झंडे के नीचे
उत्सव करें
नारें, गाये, रक्त की लय पर”²

जहाँ तक निराशा का प्रश्न है, यह भी दोनों कवियों की एक जैसी है। छायावादी कवि जहाँ हतमिये निराश है कि -

“शून्य निर्झर न बना हता भाग्य
गल नहीं सका जो कि हिमखंड
दौड़कर मिता न जल निधि अंक
आस पैसा ही हूँ पाखंड”³

वहीं प्रयोगवादी कवि की निराशा भी उससे भिन्न नहीं है-

“बाहें की
लेकिन जब बाहों में बंधने को
कोई भी कमी नहीं

111 अज्ञेय: तारतम्यक: पृ. 282

121 शान्ता तिन्हा: समानान्तर तुने: पृष्ठ: 58-59

131 जयशंकर प्रसाद, : कामायनी: ब्रह्म सर्ग: पृष्ठ: 458 (भा० २)-पा० 4 लो

आकुल व्याकुल हुआ
तो मैंने सोचा
ये बाहें हैं
क्या यों ही
यों ही रह जायेंगी*।

इन कवियों की प्रेम भावना में जैसी समानता है वैसी ही समानता लगभग इनकी निराशा में है और दोनों ही अपनी चाहत के अधूरे पन में कुंठा ग्रस्त होते जाते हैं। छायावादी कवि कुंठित होकर वहाँ पलायन की सोचता है वहीं प्रयोगवादी कवि और जोर से चीख-कर दूसरे को आकर्षित कर देना चाहता है अपनी निराशा में छायावादी कवि यदि तिक रहा है तो प्रयोगवादी कवि घीब रहा है दोनों ही त्रस्त हैं। दोनों ही निराश हैं और दोनों ही एक जैसी वेदनाओं को जी रहे हैं। क्यों न हो वेदनाओं का कारण भी एक ही है।

12। काव्य स्वः:-

छायावादी और प्रयोगवादी कवियों के काव्य स्वों का वहाँ तक प्रश्न है दोनों ही कवि अपनी अनुभूतियों के लिये अभि-व्यक्ति के नये माध्यम तलाशते हैं। काव्य में गथात्मकता छाया-वाद युग से ही आरम्भ हो गई थी। निराला और पंत ने पहले ही छंदों के बंधन तोड़ दिये थे। युक्त छंद उन्नीस विद्रोह का परिणाम था। इतना ही नहीं काव्य में नाटकीयता एवं संवाद की स्थिति छायावादी युग से ही आने लगी थी।

* * * * *

111 अजित कुमार: कल्पना: जुलाई अगस्त 1988

सम्पूर्ण विद्रोह के वायव्य छायावादी कवि में शालीनता और कोमलता विद्यमान थी। अतः युक्त छंद के साथ ही साथ छायावादी कविता का मुख्य काव्य स्व गद्यात्मक या गीतात्मक बना रहा तब - तब मीटर वाले गीत छायावाद की विशेषता थे।

प्रयोगवाद में वह शालीनता और कोमलता दिखाई नहीं देती। यही कारण है कि उसमें गीतों का अभाव है। किन्तु छायावाद की युक्तछंद को विद्रोही प्रवृत्ति, प्रयोगवादी काव्य में और अधिक मुखर रूप में दिखाई देती है। ऐसी बात नहीं है प्रयोगवाद में गीत लिखे ही न गये हों। छायावाद की ही भाँति गीत यहाँ भी हैं भावनाओं की कोमलता यहाँ भी है। किन्तु यह गीत गद्य गीत है -

“जित्तिदिन ये तुमने फूल चिखे माथे पर
अपने तुलसी दल जैसे होठों से
मैं नहज तुम्हारे गर्म वक्ष में शीश छुपा
चिड़ियों के सहमें बघ्ये ता
हो गया मूक”।

ये गीत अपनी भावना की कोमलता में छायावादी गीतों से पीछे नहीं है। अपितु अपनी गद्यात्मकता में छायावादी गीतों से अलग है। छायावादी गीतों जैसी सयवदता तो यहाँ नहीं है। किन्तु रिद्धम इन गीतों में है। ठीक उसी प्रकार छायावादी युक्त छंद जैसा रिद्धम इन कविताओं में नहीं है लेकिन एक गद्यात्मक प्रकार इन कविताओं में विद्यमान है। जो भी हो काव्य स्रोत के स्तर

=====

पर छायावाद से भिन्न होते हुये भी प्रयोग वादी काव्य त्यों की नवीनता की प्रवृत्ति के मामले में छायावाद के समान ही है। छाया-वादी गीतों की ही भाँति भावों की ताँद्रता, एक मनित्वता, वैयक्तिकता, निजीपन प्रयोगवादी गीतों में भी है।

काव्य में नाटकीयता तथा संवाद की प्रवृत्ति जो छाया-वाद की "मैं शैली" के कारण जन्मी और पनपी थी। वह प्रयोगवादी काव्य में अपनी ज्वाली के साथ दिवाई देती है। निराला की "राम की शक्ति पूजा" जिस नाटकीयता से ओत-प्रोत है। उसी नाटकीयता से और उससे भी आगे नाट्य कविता के स्तर पर प्रयोग वादी कविता दिवाई देती है। धर्मवीर भारती की "कनू प्रिया", "अंधा युग", रवीन्द्र नरेश मेहता की "संशय की एक रात" इसके प्रेष्ठ उदाहरण हैं। ये रचनाएँ नाटक की हद तक कविताएँ हैं।

अभिव्यञ्जना शिल्प=
=====

प्रयोगवादी कवियों की ही भाँति छायावादी कवियों ने भी अभिव्यक्ति के नये मार्गों की आवश्यकता महसूस की थी। अपनी नयी भावानुभूति के लिये उनको नयी भाषा की और नये अलंकारों की तथा नयी अभिव्यञ्जनाओं की आवश्यकता थी।

शेक। भाषा:-

=====

प्रचलित भाषा छायावादी कवियों की भावानुभूति की अभिव्यक्ति के लिये ओछी पड़ने लगी थी। वे पुराने भावों में जिस कोमलता को अनुभव करते थे। उसके लिये प्रचलित बड़ी बोली हिन्दी

हिन्दी सर्वथा अनुपयुक्त थी। यही कारण है कि छायावादी कवियों ने प्रारम्भ में प्रजभाषा को अपनी काव्य भाषा बनाया किन्तु खड़ी बोली हिन्दी के प्रचार प्रसार को भी वे अन्दरेबा नहीं कर सके थे। अतः उन्होंने खड़ी बोली हिन्दी को काव्य भाषा के रूप में ग्रहण कर लिया और उसे अपनी भाषानुभूतियों के अनुकूल ढाला। संस्कृत की कोमल कान्त पटावली के सहारे वह अपनी भाषा को निरंतर अपने काव्य के अनुस्यू ढालते रहे। इतना ही नहीं उन्होंने उसे कोमल बनाने के लिये संस्कृत की तर्ज पर घर-तर्जों का प्रयोग कम से कम किया। सहायक क्रियाओं का प्रयोग भी उनके काव्य में नहीं के बराबर है। अनेक स्थलों पर नवीन शब्दों की उन्होंने गढ़े।

लगभग यही स्थिति छायावाद के बाद प्रयोगवादियों की भी रही यद्यपि छायावादी काव्य धारा की भाँति प्रयोगवादी काव्य धारा भाषुक्ता प्रधान नहीं तथापि भाषा की नवीनता उसे भी आवश्यक जान पड़ी।

फिती भी काव्य में भाषा की नवीनता आवश्यक होती है। जब काव्य की अनुभूति बदल जाती है नवीन अनुभूति के लिये पुरानी भाषा ओछी और छोटी पड़ने लगती है। छायावादी काव्य की अनुभूति जहाँ अपनी पिछली कविता से भिन्न थी वहीं प्रयोगवादी काव्य की अनुभूति पुरानी पूर्ण कविता से भिन्न प्रकार की थी जहाँ छायावादी कविता द्वितीय युगीन इतिवृत्तात्मकता विरोधी थी वहीं प्रयोगवादी कविता छायावादी कविता से अगली सीढ़ी पर खड़ी होकर छायावादी कविता के विद्रोह की वैचारिक स्तर पर जी रही थी उस का रास्ता छायावादी कविता वाला ही था, किन्तु

इसमें भाषानुभूति का स्थान विचारानुभूति में ले लिया था । छाया-वादी कविता में नये भाषों के लिये भाषा तो दी थी किन्तु नवीन विचारों के लिये भाषा की आवश्यकता अभी बनी हुई थी । प्रयोगवादी कविता में इस आवश्यकता को पूरा किया । इस दृष्टि से प्रयोगवादी कविता छायावाद का " सप्लीमेन्ट " थी ।

छायावादी कविता में भाषा को अपने भाषानुसंग बनाने के लिये जहाँ संस्कृत की कौमल कान्त पदावली का सहारा लिया । वहाँ प्रयोगवादी कविता में भाषा को अपने विचारानुसंग बनाने के लिये अंग्रेजी की शब्दावली को आधार बनाया । दोनों अंग्रेजी के शब्द प्रयोगवादी कविता में इतने लिये आ गये अंग्रेजी भाषा के प्रयोगवादी काव्य पर प्रभाव का कारण वस्तुतः यह रहा कि भारतीय मनीषा की परम्परा से होकर पितृत्व की प्रवृत्ति अंग्रेजी भाषा में ही उभरे दी थी । अस्तु- - - - -

प्रयोगवादी कवियों ने भाषा को व्याकरण के स्तर पर भी अपने अनुसंग बनाया । इन कवियों की वाक्य रचना अंग्रेजी की वाक्य रचना के अनुसंग होने लगी । संयुक्त क्रियाओं के स्थान पर ऐकिक क्रियाएँ इन कवियों ने गढ़ ली । संस्कृत में " कृत्वा " प्रत्यय की ही भाँति । हिन्दी में भी शब्द गढ़ लिये । यद्यपि हिन्दी में यह प्रवृत्ति पहले से ही थी । प्रयोगवादियों ने उसे आगे बढ़ाया । " भोग किया " के स्थान पर " भोगा " महसूस किया " के स्थान पर " महसूसा " अथवा प्रयोग किया के स्थान पर " प्रयोगा " आदि ऐसा भी हुआ है कि अनेक स्थानों पर इस नवीनता के चक्कर में प्रयोग में व्याकरण विस्तृता

भी आ गई है। जैसे "देहाती" के वजन पर इन कवियों ने "अहराती" बना दिया। यही नहीं लिंग भेद को भी इन कवियों ने भुला दिया -

• ऊपर आकाश था
नीचे पाताल था
अप्य के मारे बड़ा बुरा हाल था
दिल दि भाग भूते का
छट्टर का बाल था । •

यहाँ हाल के लिये "का" का प्रयोग व्याकरण विरुद्ध है। बाल शब्द स्त्री लिंग है तथा "का" पुलिङ्ग परस्मै है।

॥४॥ अलंकरण:-
=====

अलंकरण के क्षेत्र में भी प्रयोगवादी कविता छायावादी कविता से पृथक् नहीं है अपितु उसका ही विकसित रूप दीख पड़ती है। स्कूल के लिये सूक्ष्म उपमानों की प्रवृत्ति तो प्रयोगवादी कविता में छायावाद की भाँति दिखाई नहीं देती। किन्तु नवीन उपमानों का प्रयोग इसमें छायावाद की ही तरह खूब हुआ है। जहाँ प्रताप "चिखरी आँक" के लिये "तर्क बज्ज" की उपमा देते हैं। वहीं प्रयोगवादी कवि प्रेमिका को "टटकी कली चम्बे" की या "नीहार न्हाई कुई" कहने को बजाय "कलगी छरहरी पाजरे की" और "हरी पिछली घात" कहना अधिक प्रसन्न करता है। अक्षेय की मान्यता है कि-

=====

॥॥ भागार्जुन: आधुनिक हिन्दी कविता की प्रमुख कविता: डॉ० मोन्द

“देवता इन प्रतीकों के
कर गये हैं कुँघ
वासन अधिक धितने से
मुलम्मा छुट जाता है ।”¹

साथ ही मानवीकरण की प्रवृत्ति भी दोनों कविताओं में समान रूप से
विद्यमान है । दोनों ही कवियों ने प्रकृति को एक मानवी के रूप में
देखा है । उदाहरण के लिये एक छायावादी और एक प्रयोगवादी
कविता प्रस्तुत है।-

“तन्ध्या घन माला की ओढ़े
सुन्दर रंग - बिरंगी छींट ।
गगन घुम्बनी शैल ब्रेणियाँ
पहने हुये तुषार किरिटी।”²

छायावादी कवि को जहाँ तन्ध्या रंग- बिरंगी छींट पहने दिखाई देती
है । और शैल ब्रेणियाँ किरिटी पहने हुये । वहीं प्रयोगवादी कवि को
भी कुछ ऐसा ही लगता है :-

“ नील नीलाम्बर
हिमगिरि शैल- व्रंग
श्वेत घवल

पादः अक्षर , वसन, धन ।”³

छायावादी कवियों ने जहाँ प्रकृति में वस्तुओं के विभिन्न रूपों को देखा
है वहीं प्रयोगवादी कवि भी प्रकृति को केवल मानवी ही नहीं मानव के
रूप में भी देखता है । यद्यपि निराशा में प्रकृति को पुरुष रूप में देखा गया है।

=====

11। ज्ञेयः हरीधाम पर क्षण भरः पृष्ठ 57

12। प्रतापः कामायनीः आशा तर्गः पृष्ठः 440 पृष्ठ 5 शब्द/440

13। रामदत्त शर्माः एक अपरिचित आकाशः पृष्ठः 79

14। मोहन निराशः एक अपरिचित आकाशः पृष्ठः 43

तथापि प्रयोगवादी कविता भी उतने पीछे नहीं है। इन कवियों ने सुरज को कभी तो नीचा बिगड़े आदमी के रूप में देखा है। और कभी और के "पावरे अहेरी" के रूप में। कहीं कहीं इन कवियों ने छायावादी कवियों की ही भाँति मानवीकरण के संकेत मात्र प्रस्तुत किये हैं।-

• दूँती परत पर परत
दिगम्बर आहत घर्ग ।
हवा
कैसे रोके
विलोरी पर्व पर शीशे के तमनों के कदम ।

x x x

झरे लाल पत्तों की टैरी तरे
तड़ - तड़ - तड़
टूट रही
क्या नवम्बर की कतमताती पगी देह।*2

अभिव्यञ्जना के नये- नये मार्ग भी प्रयोगवादी कवियों ने छायावादी कवियों की भाँति खोले हैं। मानवीकरण के साथ- साथ विशेषण विषय भी छायावादी और प्रयोगवादी दोनों ही कविताओं की अभिव्यञ्जना का एक महत्वपूर्ण अंग है।-

*शीतल ज्वाला जलती है
इंधन होता हग जल का
यह व्यर्थ इवात चल- चल कर
करता है काम अन्न का।*3

=====

111 अज्ञेय: वाकडा अहेरी: पृष्ठ: 81

12। रतनलाल शान्त: एक अपरिचित आकाश: पृष्ठ :36-37

13। प्रताप: आसु: पृष्ठ: प्रताप ग्रन्थावली पृष्ठ 304

इन पंक्तियों में ज्वाला के लिये शीतल का विशेषण विपर्यय उत्पन्न करने वाला है। प्रयोगवादी कविता में भी इस तरह के अनेक प्रयोग दर्शनीय हैं। जैसे-

• घंट नर्पुसक आचार्य, एक पालतु वाक्य"।

• दलदली पकड़न मनहर विष दमघौंठ मधु" आदि।

क काव्य में वक्रता अभिव्यञ्जना का एक शक्ति माध्यम है। प्रतीक और मि अभिव्यञ्जना के साधन हैं। मुहावरे भी अभिव्यञ्जना के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। प्रयोगवादी कविता में छाया-वाद की ओर प्रतीकों में बात कहने की प्रवृत्ति अधिक है। यद्यपि प्रतीकों का प्रयोग छायावादी कविता में भी पर्याप्त मात्रा में हुआ है तथापि प्रयोगवादी कवि प्रतीकों के बिना कोई बात कहता ही नहीं "मछली" "सुरज" "समुन्द्र" ऐसे ही प्रतीक हैं। शास्वत प्रतीकों के साथ-साथ अनेक सामयिक प्रतीक भी छायावादी कवियों ने प्रयुक्त किये हैं। "कमरा" "शहर" "जंगल" "आंधी" "कैकट" आदि इसी प्रकार के प्रतीक हैं।

प्रयोगवादी कविता ने छायावाद की ही भाँति एक नयी मुहावरेदारी प्रस्तुत की है। उसके अपने अनेक मुहावरे हैं। लेकिन प्रयोगों की विविधता के कारण ये मुहावरे छायावादी मुहावरों की तरह अधिक चल न सके। जैसे छायावादी कविताओं में "मधु" के बाल", "वस्तु के रूप" आदि। जहाँ तक मियों का प्रश्न है। प्रयोगवादी कविता के मिथ पुरोपियन जीवन से ग्रहण किये गये हैं। साथ ही उसमें प्राचीन भारतीय मियों को विस्तृत नये संदर्भों में नये ढंग से प्रस्तुत किया गया है। "महाभारत" "रथ का पहिया" "रक्तव्य" "पांडव" "द्रोणाचार्य"

=====

111 रवीशेखर: तोष खानी: पृष्ठ 31-32

121 मीना कौल: वही: पृष्ठ: 88

इसी प्रकार के मिश्र है। कहीं - कहीं इन मिश्रों का प्रयोग बहुत भौड़ा हो गया है। और पाठकों के हास्य का कारण बन गया है। कवि "मेनका" को "नर्त" के रूप में और "नारद" को "वीणा" छोड़कर "गिटार" बजाते हुये देखते हैं।¹

अभिव्यञ्जना शिल्प भी प्रयोगवादी कवियों का अनुठा है। अभिव्यक्ति में तीखापन पैदा करने का भरसक प्रयत्न किया गया है। जनता को "धैर्य धन गढ़वा" ² या "भेड़" जो दूसरों को ठुंड से बचाने के लिये अपने शरीर पर उम की फसल छोटी है- कहा गया है³ अभिव्यक्ति के तीखे पन के लिये इन कवियों के अभिव्यञ्जना शिल्प का यहाँ एक ही उदाहरण पर्याप्त है।-

ताप

तुम तन्म तो हुये नहीं

नगर में

घसना भी तुम्हें नहीं आया

एक बात पूछू

उत्तर दोगे

फिर कहाँ तीखा

इतना

विष कहाँ पाया⁴

=====

111 अक्षि प्रस्तुत मनः भारत भूषण अग्रवाल पृष्ठ 102

121 अक्षेयः इत्यलमः पृष्ठ :66

131 धूमिलः संसद से सड़क तकः पृष्ठः 114

141 अक्षेयः इन्द्रधनुष रोदे हुये पृष्ठ : 291

सप्तमः अध्यायः
=====

**छायावादी और प्रयोगवादी काव्य में ताम्र
के कारण**
=====

- 1: हताशा
- 2: युगीन परिस्थितियों में ताम्र
- 3: मानवतावाद
- 4: विदेशी साहित्य का प्रभाव

छायावाद और प्रयोगवाद काव्य में साभ्य के कारणः
=====

छायावाद और प्रयोगवाद काव्यधाराओं के काल के दो
अलग- अलग छहों में प्रभाव में आने के बावजूद भी दोनों में अनेक स्तरों
पर समानता दृष्टिगोचर होती है । वह अस्त काव्यधाराओं का विकास
सन और समयतों के आधार पर नहीं तय किया जा सकता । काव्य धाराओं
के विकास में उस युग की परिस्थितियाँ ही अधिक प्रभावी होती है । यही
कारण है कि छायावाद और प्रयोगवाद के उदभव के मध्य लगभग दस दशकों
का अन्तराल होने के बाद भी दोनों के स्वर अनेक स्तरों पर अपने आप
में साभ्य रखे हैं ।

छायावाद और प्रयोगवाद अपने पूर्ववर्ती काव्यधाराओं की प्रतिक्रियाः-
=====

छायावाद और प्रयोगवाद दोनों के मध्य साभ्य का वह तो
बिन्दु यह है कि दोनों ही काव्यधारायें अपने पूर्ववर्ती काव्य धाराओं के
के सिद्धान्तों का विरोध करते हुए उनकी प्रतिक्रिया स्वल्प उत्पन्न हुई ।
“हिन्दी काव्य में जब द्विषदी युग के प्रति प्रतिक्रिया होने लगी तो उसमें
जो परिवर्तन आया वह छायावाद के रूप में प्रकट हुआ।”¹ और इसी
प्रकार प्रगतिवाद के चरम उत्कर्ष पर जाकर उसके सिद्धान्तों में पन्थी
रूढ़िवादिता के कारण * प्रगतिवाद की प्रतिक्रिया स्वल्प हुआ परिवर्तन
प्रयोगवाद के रूप में प्रस्फुटित हुआ ।²

छायावाद और प्रयोगवाद दोनों ही अपने पूर्ववर्ती काव्य ज्ञान्दो-
ननों की प्रतिक्रिया स्वल्प अस्तित्व में आये किन्तु जिन प्रवृत्तियों के प्रति

=====

111 सुरेश चन्द्र सहस्रः नयी कविता और उसका मूल्यांकनः पृष्ठः 1

121 सुरेश चन्द्र सहस्रः नयी कविता और उसका मूल्यांकनः पृष्ठः 8

इन दोनों काव्यान्दोलनों ने प्रतिक्रिया व्यक्त की उनमें कितनी समानता है यह देखने के लिए दोनों युगों की प्रवृत्तियों का संक्षिप्त आंकलन यहां अभीष्ट है। द्विवेदी युगीन काव्य के प्रति प्रतिक्रिया होकर जो परिचर्चन हमारे सामने छायावादी काव्य के रूप में प्रस्तुतित हुए उसके कई कारण थे। * द्विवेदी युग की कविता इतिवृत्तात्मक, नैतिकता, परक, उपदेशात्मक, कल्पनाहीन वस्तुओं की बाह्य पकड़ या सतही विवेचन दैनिक जीवन के विषयों पर अधिक आश्रित होने के साथ ही संस्कृति शब्द एवं अनगढ़ भाषा में लिखी जा रही थी। *¹ द्विवेदी युगीन काव्य की इन विशेषताओं के प्रति तत्कालीन साहित्य में एक प्रकार की प्रतिक्रिया हुई जिसके कारण काव्य में युग की इन विशेषताओं के ठीक विपरीत विशेषताओं को लेकर छायावादी काव्यधारा का उदभव हुआ। * इस प्रकार छायावाद में कल्पना और भावुकता की प्रचुरता वस्तुओं की आंतरिक व गहरी पकड़ वैयक्तिकता, सौन्दर्य वादिता के साथ ही साथ भाषा की कोमलता का समावेश हुआ। मानवीय सीमा में अनन्त और असीम का भावना को छायावाद ने द्विवेदी युगीन सीमित काव्य दृष्टि को विस्तार प्रदान किया²

ठीक इसी प्रकार जब प्रगतिवादी युग में विषय वस्तु की संकीर्णता और रुढ़िवादता के प्रति असंतोष और शिल्प सौन्दर्य के प्रति पूर्ण उदासीनता बढ़ने लगी तो उसके प्रतिक्रिया स्वरूप एक नयी काव्य धारा कुलमुत्पत्ति लगी। प्रगतिवादी युग में भाषा की अराजकता ने कविताओं में एक चारगी पुनः द्विवेदी युग के पूर्व का द्वय उत्पन्न कर दिया अलंकारों को बुरा मानकर उनका बहिष्कार होने लगा छन्द भी लाभ हीन

=====

॥१॥ डा. सुरेश चन्द्र सहलः नयी कविता और उसका मूल्यांकन:पृष्ठ:१।

॥२॥ डा. सुरेश चन्द्र सहलः नयी कविता और उसका मूल्यांकन:पृष्ठ: १।

होने लगे।⁵ इस प्रकार छायावाद के सन्दर्भ में प्रगतिवाद का क्वाथप्र प्रगति के स्थान पर अगति की ओर ही अग्रसर हो रहा था। इस प्रकार की शिल्पगत हीनता के कारण ही प्रगतिवाद की प्रतिक्रिया हुई। इस समय यह तो सम्भव नहीं था कि कविमण छायावाद की ओर पुनः लौटते अतः युगीन प्रतिक्रिया को व्यक्त करने के लिए उन्होंने जो काव्य रूप अपनाया उसे प्रयोगवाद के नाम से अभिहित किया गया। इस प्रकार हम देखते हैं कि छायावाद और प्रयोगवाद दोनों ही काव्यधाराएँ अपने पूर्ववर्ती काव्यान्दोलनों की प्रतिक्रिया से उत्पन्न काव्य धाराएँ थी। दोनों ही काव्य धाराओं ने साभ्य को निम्न लिखित स्तरों पर देखा जा सकता है।

वैयक्तिक स्वातन्त्र्य के स्तर पर साभ्यः

=====

छायावादी युग का प्रादुर्भाव द्विवेदी युग की अतिशय नैतिकतावादी दृष्टि और जड़ीभूत ब्रह्म मान्यताओं की प्रतिक्रिया स्वल्प हुआ था इसीलिए छायावाद अपने पूर्ववर्ती सामन्त युग की जड़ीभूत मर्यादाओं तथा व्यक्ति चेतना पर आरुढ़ समाज के गहरे दबाव के विरुद्ध स्वातन्त्र्य की भावना को अपने अन्दर दबाये हुए था। परिणामतः व्यक्तिगत अनुभूतियों के क्षेत्र में जो भाषनाएँ अभी तक अभिव्यक्त नहीं की जा रही थी छायावाद युग में छुलकर अभिव्यक्त की जाने लगी। यद्यपि नारी विषयक दृष्टि को ही यदि हम देखें तो द्विवेदी युग में आकर नारी की छवि स्व समाज सुधारक और जन सेविका के साथ-साथ अत्यन्त नैतिक धरातल पर टिकी दिखाई देती है जो आगे चलकर इसी अर्थ में रुढ़ हो गयी थी और मुख्य की मानव सुलभ स्वाभाविक अनुभूतियों के अंकन की कोई जगह नहीं दी

=====

गयी परिमाणतः इस दृष्टि कोण के प्रति प्रतिक्रिया हुई दिनकर जी ने चक्र
 चाल की भूमिका में इस प्रश्न को विस्तार से समझाते हुए लिखा है कि
 'नर और नारी के भीतर जो पारस्परिक आकर्षक का तार है कैसे कहा
 जाये कि वह द्विवेदी युग में टूट गया था? किन्तु इस विषय में द्विवेदी युगीन
 कवि अत्यन्त सावधान बल्कि चौकन्ने मालूम होते हैं। मनोहर समय वे
 सोच रहे हैं कि स्वामी दयानन्द दास ही खड़े देख रहे हैं। इस समय का
 परिणाम यह हुआ कि इस काल की रचनाओं जो नारियाँ चित्रित की गयी
 वे या तो सती साहसी देवियाँ हैं अथवा वीर क्षत्रियाँ जो अपनी निर्भी-
 कता और तेजी से नारी जाति में नूतन प्रेरणा भरती हैं नारी का जो कामिनी
 रूप है वह इस काल में जान बूझ कर छोड़ दिया गया।¹ वस्तुतः इसकी
 प्रतिक्रिया स्वस्थ ही नारी का स्वस्थ छायावाद में कामिनी का रूप हो
 गया। नारी की केचन बंधाओं पृष्ठ बाहुओं उन्नत उरोजों और उसकी
 कान्ता सम्मिलित उपदेशों के संतर्ग को हर समय हर प्रकार से कवि लालायित
 दिखाई देने लगा:-

नील परिधान बीच सुकुमार

खिल रहा मृदुल अधुखला अंग

खिला हो ज्यों बिजली का फूल

मेघवन बीच गुलाबी रंग।²

ठीक इसी प्रकार प्रयोगवाद के उदभव के पीछे प्रगतिवाद की
 जड़ मान्यताओं और निजीय परम्पराओं के प्रति स्पष्ट प्रतिक्रिया हुई।
 प्रगतिवादी काव्य अपने आरम्भ में जिस महल उददेश्य को लेकर विकसित
 हुआ था उसमें समाज और समाजवाद शोषित पीड़ित बहुता, मजदूर, मिल

= = = = =

121 रामधारी सिंह दिनकर: चक्रवाल। भूमिका। पृष्ठ=6

121 जयशंकर प्रसाद: कामयानी : पृष्ठ: 39

मालिक, साम्राज्यवाद क्रान्ति आदि जैसे आइडल शब्दों ने बड़ा बड़ेड़ा खड़ा किया। अनुभूतियाँ है भोगी हुई हो उड़ाई हुई या फिर बिल्कुल काल्पनिक मगर अभिव्यक्ति सिर्फ तथा कल्पित समाजवाद की ही होनी चाहिये यही नहीं चाहे देश को छोड़ कर रूस और चीन के गीत गायेंगे मगर देश की अन्य किसी समस्या को नहीं उठाएँगे जैसी मानसिकता ने प्रगतिवाद को मानव मूल्य अनुभूतियों से प्रेरक कर दिया था परिणाम स्वस्थ इन्हीं वैयक्तिक मानव सुलभ अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने के लिए एक बार कविता ने पुनः विद्रोह किया और जहाँ प्रगतिवाद में व्यक्तिगत प्रेम आदि की चर्चा उपेक्षित समझी जाती थी वहीं प्रयोगवादी कवियों ने अपने व्यक्तिगत प्रेम के खुद गीत गाये। धर्म-वीर भारती जैसे कवियों ने पूजा जैसे निष्काम स्व और तुलसीदास जैसे पावन ओठों को स्थूल धरातल पर आकर स्वीकारा सराहा * उसे लगा कि कविता की शहजादी इस अपारिधि कल्पनाओं टैडै मेडे शब्द जालों अस्पष्ट स्व और उलझे हुए जीवन दर्शन की शिलाओं से बंधी उदास जल परी की तरह कैद है। और भारती को चाहिए कि वह उसे उन्मुक्त कर सर्वथा मानवीय धरातल पर उतार लाये। हाकि वह पैली- पैली चाँदी की बालू पर आदम की सन्तानों के साथ बेहियक आँख भिन्नौनी खेल सके उनके सीधे सादे सुख दुख वासनाओं कामनाओं को समझ सके उन्हीं की बोली में बोल सके। इसी-लिये भारती ने सर्वप्रथम लिखे सज्जनतम भाषा में रंग विरंगी चित्रात्मकता और समन्वित साहित्य पूर्ण स्वीपासना और उददाम यौवन के सर्वथा मांसल गीत जो न तो मन की प्यास को बुकलारें और न ही उनके प्रति कोई कुंठा अभिव्यक्त करें जो सीधे ढंग से पूरी ताकत से अपनी बात आगे रखे। आदमी की सरल और सहज अनुभूतियों के साथ निडर खेल सके बोल सके :-

== ==

॥॥ धर्मवीर भारती: दूसरा सप्तक वक्तव्य = पृष्ठ= 177-178

ये शरद के चाँद से उजले धुले से पाँच
मेरी गोद में ।

ये लहर पर नाँचते ताँजे कमल की छाँव
मेरी गोद में ।²

छायावादी और प्रयोगवादी दोनों ही काव्यधाराएँ अपने पूर्व वर्ती काव्यान्दोलनों की कथित नैतिकता वादी दृष्टिकोण के प्रतिक्रिया स्वरूप उत्पन्न हुई थी अतः दोनों ही काव्यधाराओं में तथाकथित नैतिकता से दूर हटकर कल्पना आश्रित एक नये लोक में विचरण का भाव पर्याप्त मात्रा में मिलता है । यही नहीं इस अतिशय नैतिक बन्धनों ने ही दोनों की प्रवृत्ति को स्पष्टाचकरी और स्वच्छन्द वादी बना दिया है ।

द्विवेदी युगीन नैतिकता के विरुद्ध छायावाद के कवियों ने स्वरचित कल्पना लोक में अत्यधिक विचरण किया है इसलिये इस युग की

[illegible]

॥॥ धर्मवीर भारती : सुनाह का दूसरा गीत : पृष्ठ : १८६-१८७

12। धर्मावीर भारती: तुम्हारे पाँव मेरी गोद में। दूसरा सप्तक:

पृष्ठ: 188-189

की कविता जीवन के सामयिक यथार्थ से दूर हटकर व्यक्तिगत सुख दुख को ही अधिक चाणी दे सकी है। उस युग में जब भारतीय जनमानस अंग्रेजों की दास्ता झेल रहा था पहला विश्व युद्ध अभी कुछ ही दिनों पहले गुजरा था तबारा हिन्दुस्तान अंग्रेजों के घुगुल से मुक्त होने के लिये एक योजना बद्ध तरीके से क्रान्ति की लड़ाई लड़ रहा था और गांव घर का आम जन जीवन शौखन, दमन, बेगारी, भुखमरी, के कुचक्र में फंसा धिलधिला रहा था उस युग में भी पंत का कवि हम धरती पर स्वर्ण नीच में विचरण कर रहा था और वह एक उड़ता फिर रहा था :-

“है स्वर्ण नीच मेरा भी जग उपवन में,
मैं छा सा फिरता नीख भाव गगन में
उड़ मुटुल कल्पना पंखों में निर्जन में
चुगता हूं गाने पिछरे तुण में कण में
कल कण्ठनि । निज कलरल-ध में भर
अपने कवि के गीत मनोहर
फला आओ वन- वन में घर- घर
बाधे तुण तरु पात
जग का नव्य प्रभास ।”

ठीक इसी प्रकार प्रयोगवादी कवियों ने भी अपने युग की मूल परिस्थितियों से नजर बचा कर अपने व्यक्तिगत सुख दुख को ही अधिक उभारा। प्रयोगवादी आन्दोलन के समय में भारत ने दूसरे विश्व युद्ध

=====

॥॥ सुमित्रानन्दन पंतः पुत ग्रन्थावलीः पृष्ठः ॥०

की हैकिड़ी होती थी उस समय भारतीय राजनीति के पटल पर भी आन्दोलन अनेकानेक चल रहे थे । सन 1945 में भारतीय नागरिकों ने "अंग्रेजो भारत छोड़ो" का नारा दे दिया था और सन 1943 में बंगाल में भीष्म हुर्मिषा पड़ा था । यही नहीं सामाजिक दृष्टि से भी भारतीय पूंजीपति यहां के मजदूरों का शोषण कर रहा था । गांव में किसानों का खून जमींदार घूस रहे थे और शोषण के शिखरे में फंसी भारतीय जनमानस की आत्मा मुक्ति के लिए छट पटा रही थी मगर प्रयोगवादी कवियों ने उस समय की युगीन परिस्थितियों के लिए कलम उठाने की अपेक्षा कृत अपने जीवन की वैयक्तिक अनुभूतियों को वाणी देना ही अधिक श्रेष्ठकर समझा, अज्ञेय, गिरजाकुमार माधुर, शान्ता सिन्हा, शकुन्ता माधुर आदि कविकवियत्रियों के प्रयास प्रायः दूसरी दिशा में अधिक रहे हैं गिरजाकुमार माधुर की एक कविता दृष्टव्य है:-

आज अघानक सूनी संध्या में
जब मैं यो ही मैले कपड़े देख रहा था
किसी काम में जी वहलाने
एक सिल्क के कुर्ते की सिलवट में लिपटा
गिरा रेशमी चुड़ी का छोटा सा टुकड़ा
उन गौरी कलाइयों में जो तुम पहने थीं
रंग भरी उस मिलन रात में
मैं वैसा का वैसा ही रह गया सोचता
पिछली बातें

=====

।।। गिरजाकुमार माधुर: चुड़ी का टुकड़ा: पृष्ठ: 3

इजकोर से उस टुकड़े पर तिरने लगी
 तुम्हारी सब लज्जित तस्वीरें
 तेज सुनहली
 कसे हुए बन्धन में चुड़ी का झर जाना
 निकल गयी सपने जैसी वे राते
 याद दिलाने रहा तुहाग भरा यह टुकड़ा ।^१

छायावाद और प्रयोगवाद में भोगवादी प्रवृत्तियों में साम्य:-

=====

प्रेमाभाव का स्वाभाविक छाप है और काम उसकी मूल में सांख्यिक प्रवृत्ति है । जब भी मूल प्रवृत्तियों पर किसी वाहना नैतिकता का आरोप किया जाता है वह स्पष्ट बदल कर प्रकट होती है कविता में जब ऐसे चित्रण किये जाते हैं तो अभिव्यक्ति स्वतः ही प्रतीकात्मक हो जाती है ।

छायावाद और प्रयोगवाद दोनों काम के भोगवादी रूप के पर्याप्त चिह्नित होते हैं वहीं प्रतीकात्मक शैली में तो वहीं सीधे सपाट और दोनों के ही मूल में पूर्व वर्ती काव्यधाराओं की वाहा आरोपित नैतिकता कारण रही है । काम से प्राप्त वृप्ति का वर्णन निराला के अनेक गीतों में अनेक प्रकार से देखा जा सकता है । स्पर्श से लाज लगी रंगात्का पृष्ठ ३१ । की नामकन जो उरगी के समान अधरा खपान करती है , हस्त की पैसी ही परिणिति चाहती है जैसी शिष के लिए तप करने वाली शैल सुता । रस के निर्झर झरे स्नेह का मेह वरसा, भव बाधा दूर हुई :-

=====

॥॥ गिरजा कुमार माथुर: चुड़ी का टुकड़ा: पृष्ठ: ३

*उगा अमर अंकुर उर भीतर,
संस्तुति कीति मगी ।*¹

अधुन संस्तुति में प्रेम के अंकुर की अमरता क्षण भुनुर संसार में पुष्प और नारी के प्रेम की विषय है । मेघ के घन केश वाली निस्पृहा सुन्दरी रस वषण के बाद से काली की तरह अपने को निःशेष कर देती है । यही उसके जीवन की पूर्णता है । रचना का सोमरस पीकर वह जीवन के प्रणय के यज्ञ में होम कर देती है । सिद्ध स्थ में अपरत्व वाला तीसरा नेत्र खुल जाता है ।

*पी प्रचुर रचना मृत शुचि सोम
सुरति की मूर्ति प्राण मुख होम
लाघ लिया निज केशों में व्योम
तीसरा नयन प्रकाश अपरा ।*²

केशों में व्योम देखने की क्रिया द्वारा कवि के प्रसार और युवती के उस स्थ के ज्ञान की ओर संकेत है इस ज्ञान की चर्चा निराला ने *यमुना प्रति में कुछ विस्तार से की है :-

* वह सहसा सजीव कम्पन हत
सुरभि समीर अधीर वितान,
वह सहसा स्तम्भित वक्ष स्थल
टलमल पद प्रदीप निवर्ण

=====

111 निराला: गीतिका: पृष्ठ: 31

121 निराला: गीतिका: पृष्ठ: 48

गुप्त रहस्य सज्जन अतिशय ब्रय
 वह क्रम- क्रम से संचित ज्ञान
 स्वरलित वसन तनु ता तनु अमरण
 नग्न, उदात्त, व्यक्त अप्रिमान ।^१

रीतिवादी कवियों ने यद्यपि काम के लिए वर्णन करने में लय तोड़ दी है मगर इस बात की ओर उनका ध्यान भी कम ही गया है कि यहाँ^१ के लिए मानव की सृजन लीला है । इस लीला की अनेक स्थितियों का मार्मिक चित्रण उपरोक्त पंक्तियों में है ।

ठीक इसी प्रकार काम की भोगवादी प्रवृत्ति को प्रयोग वादी कवियों द्वारा सूक्ष्मता से उभारा गया है । अक्षेय की अनेक रचनाएँ इसी भोगवादी प्रवृत्ति की प्रतीकात्मक रूप में अभिव्यक्त करती हैं:-

जबकि सहसा तडित के आघात से धिर
 फूट निकला स्वर्ग का आलोक
 वाहय देखा
 स्नेह से आलिप्त
 बीज के भ्रम तक से उत्कलभ
 वह
 वासना के पंक ती फैली हुई

=====

॥ निराला । यमुना के प्रति । गीतिका: पृष्ठ: 61

घरिघरी सत्य से निर्लज्ज
नंगी औ समर्पित ।^१

छायावादी और प्रयोगवादी कविता में हताशा की समानता:-

=====

छायावादी और प्रयोगवादी काव्य में निराशा के स्वर भी अपने उदभव के आधार पर साभ्य रखते हैं और इस समानता का सबसे बड़ा कारण है उस के अपने युगों की परिस्थितियाँ जो अनेक स्तरों पर साभ्य दिखाई देती है । परिस्थितियों की समानता का प्रमुख आधार तो यही है कि दोनों काव्यान्दोलनों की पृष्ठभूमि में एक एक महायुद्ध रहा है । छायावाद का प्रादुर्भाव प्रथम विश्व युद्ध के बाद हुआ था एवं प्रयोगवाद के उदभव से ठीक पहले दूसरे विश्व युद्ध की शुरुआत हो गयी थी । दोनों ही युगों के कवियों ने विश्व युद्धों के दौरान राष्ट्रीय अन्तराष्ट्रीय परिस्थितियों के परिवर्तनों को अत्यन्त निकट से देखा था भोगा था । और भोगी थी उसके बाद की बेकिड़ी जो कुंठा, घृण, संभ्रम, पीड़ा मृत्यु बोध, हताशा वेदना आदि के रूप में साहित्य में अभिव्यक्त हुई :-

मुसीबतें मैं कहे हैं दिन, मुसीबत में कटी रातें
जो हस्ती ले हुए है पस्त समझे है वही क्या है
गुजरती जिन्दगी के साथ हरकत से भरी बाते ।^२

मुसीबत में कटी रातों को तो भोक्ता होकर ही महसूस किया

=====

11। अज्ञेय। सावन मेघ। तार सप्तक पृष्ठ: 77-78

12। निराला : बेला । गजल। पृष्ठ:69

जा सकता है। वक्त की ऐसी मार जिससे स्नेह का निर्झर बह गया है और सब बोध नष्ट हो गये हैं :- स्नेह की नल कट चुकी है*¹। शरीर रेत जंता है- रक्तहीन, अशक्ति संज्ञा शून्य रह गया है।*²

आम की यह डाल जो सूखी दिखी
कह रही है अब यहाँ पिक या गिरवी
नहीं आते पंक्ति में वह हूँ लिखी
नहीं जिसका अर्थ - जीवन दह गया है।*³

कहने का तात्पर्य है कि छायावादी काव्य में निराशा, टूटन पस्ती और हताशा तो व्यक्त हुई है मगर उसके पीछे स्वाभिमान के विघटन की स्थिति नहीं है। ठीक इसी प्रकार प्रयोगवादी काव्य में भी निराशा की स्थिति देखी जा सकती है :-

* किन्तु पथ प्रदर्शक

विक्षा में डार जाता हूँ भयंकर मौन से
वे भाव अपने प्राण में छाये हुए एकान्त से
सतत निर्वासित हृदय से
तिरस्कृत व्यक्तित्व के
थोड़े अज्ञात दर्प ने मन की
सहज अनजान स्वाभाविक अनाधृताधार को
कर दिया है कृण्णित -

=====

111 डा० रामविलास शर्मा: निराला की साहित्य साधना प्रथम खण्ड

पृष्ठ: 393

121 निराला: गीतिका पृष्ठ: 79

131 निराला: अग्निमा: पृष्ठ: 55

सहज अंगारे

कि मानो देब गये हों बुझे से

जैसे कि ठण्डी राख से ।¹

छायावादी और प्रयोगवादी काव्यधाराओं के मानववाद में साध्य:-

=====

छायावादी और प्रयोगवादी दोनों ही काव्यधाराएँ मानववाद पर विशेष बल देती हैं। छायावाद के "निराला हिन्दी साहित्य में नये मानवतावाद के प्रतिष्ठापक है। संसार की आलोचना करके वैराग्य की शरण लेने वाला मनुष्य उनके काव्य का केन्द्र बिन्दु नहीं है। उनका मानव साधारण मानव की तरह जीता है, सांसारिकता से बंधा हुआ कर्म करता है संघर्ष के भाग लेता है। और उसके संघर्ष और कर्म का लक्ष्य इसी संसार में अपनों या दूसरों का कल्याण है।² निराला की जागो फिर एक बार" शीर्षक कविता नये मानवतावाद की स्पष्ट रेखा स्पष्ट करने में सक्षम है और स्वयंकी शक्ति पूजा जैसी लम्बी कविता इसी मानववादी स्वयं की चरम परिणिति है। राम की शक्ति पूजा में राम जिस संघर्ष से ग्रस्त होकर कुछ समय के लिए किर्करीय विमूढ़ हो जायेंगे उसका पूर्व आभास " महाराज सिधाजी के पत्र में स्पष्ट है :-

सोचता हूँ अपना कर्तव्य अब

देश का उद्वेग

पर क्या करूँ मैं

निश्चय कुछ होता नहीं

द्विविधा मैं पड़े हैं प्राण।³

=====

11। नेमिचन्द्र जैन: । व्यर्थ । तार सप्तक : पृष्ठ= 14

12। डा. रामविलास शर्मा: निराला की साहित्य साधना भाग 2।

पृष्ठ: 159

विपरीत परिस्थितियों के आने पर मानव मन स्वाभाविक रूप से द्विविधा की अनुभूति करने लगता है ऐसी अनुभूति प्रायः अतिमानव को नहीं होती किन्तु निराला के शिवाजी मानव है अति मानव नहीं इसलिए उनकी द्विविधा भी सहज स्वाभाविक है कि यदि वह राजा जय सिंह से मिल जाये तो उनके शत्रु कहेंगे कि डर कर मिल गया है और यदि युद्ध करें तो दोनों ओर हिन्दुओं का ही खून होगा और इसी द्विविधा की स्थिति पर विचार करते हुए ही हृदय से आह निकल पड़ती है :-

हाथ री दासता
पेट के लिए हों
सड़ते हैं भाई- भाई । २

देश की पद्धिस्थितियों की वेदना शिवाजी का हृदय पैघ डालती है । शिवाजी जैसे:- समाज के नेता और योद्धा को दूसरे की भावनाओं से दुखी दिखाकर निराला ने एक अत्यन्त उदात्त हृदयवीर का चित्र प्रस्तुत किया है । मानवतावाद का यह स्वल्प उनसे पहले कव्यान्दोलनों में नहीं मिलता यही उदात्त कर्षण मिश्रित और ओजपूर्ण काव्य रूप नये मानववाद की प्रतिष्ठा का पोषक है ।

प्रयोगवादी कवि भी इसी मानववाद की भावना से आधान्त प्रभावित रहे हैं । यही कारण है कि प्रयोगवादी कविता में दलित और शोषित मानव के प्रति सहानुभूति और स्वेदना के पर्याप्त स्वर मिलते हैं।

=====

॥॥ निराला: महाराज शिवाजी का पत्र: निराला की साहित्य

साधना : पृष्ठ: 162

विजयदेव नारायण साही का कवि युगीन परिस्थितियों के कारण दिलों के बीच गहराती दरार पर क्षीभ व्यक्त करता है । आँसू बहाता है मगर इसलिये किये दरारे मिट जायें ।¹ वेदना का यह पोषण वर्तमान को बदलने हेतु नव मानव के नव प्रयोग की भावना है मगर यह भावना जहाँ दूसरों के छोटे से दुःख से दुःखी हो जाती है वही किसी भी बड़ी से बड़ी शक्ति के प्रति झुकने को तैयार नहीं होती :-

ओ महा प्रलय के बाद नये उगते विश्वों
है तुम्हें क्षम इन ध्वस्त विध्य मालाओं की
मत शीश झुकाना तुम अपना ।²

उपरोक्त विवेचन के आधार पर स्पष्ट है कि छायावादी और प्रयोगवादी काव्य धाराओं के सांभ्य के अनेक कारण आसानी से दृष्टि गोचर हो जाते हैं । दोनों ही काव्यधाराओं की अनेक विशेषताएँ आपस में सांभ्य रखती हैं । दोनों की युगीन परिस्थितियों तथा जीवन दृष्टि में पर्याप्त समानता है । छायावादी और प्रयोगवादी काव्यधाराओं का आरम्भ जिस प्रकार परिस्थितियों का सांभ्य संजोये हुए है उसी प्रकार दोनों के अस्तित्व के कारणों में पर्याप्त सांभ्य दिखाई देता है यह एक जाना माना तथ्य है कि दोनों ही काव्यधाराओं का अन्त भी यथार्थोन्मुखी दृष्टि कोणों से दूर हटते जाने और स्वयच्छन्द तथा वैयक्तिकता की अतिवादिता के कारण हुआ ।

=====

11। विजयदेवनारायण साही: हिमालय के आँसू: पृष्ठ: 285

12। विजयदेवनारायण साही: नये विश्वों से : पृष्ठ: 283

अष्टमः अध्यायः
=====

छायावादी और प्रयोगवादी काव्य में वैचर्म्य के
=====

आधार भूत तत्त्व
=====

- 1: विषय वस्तु की दृष्टि से
- 2: काव्य रूप की दृष्टि से
 - क) कविता में
 - ख) अन्य काव्य रूप
- 3: अभिव्यञ्जना शिल्प की दृष्टि से
 - क) भाषा
 - ख) छन्द और लय
 - ग) उपमान एवं प्रतीक

प्रयोग वादी कविता छायावाद की भाषुकता का पौष्टिक संस्करण है। द्वितीय विश्व युद्ध में परमाणु बम की विभीषिका ने विश्व को इतना भयाङ्कान्त कर दिया। कि उसकी सम्पूर्ण रागात्मक वृत्तियाँ रतहीन हो गईं। आतन्त्र भय से अपने को बचाने के लिये मानव जाति भाषुकता को छोड़कर पौष्टिक होती चली गई वह अपनी घुट्टि से किसी भी भावी विभीषिका से बचने के उपाय ढोजने लगी। फलतः विश्व में इसके परिणाम स्वल्प दो प्रतिक्रियार्यें दिखाई देने लगी। एक ओर तो सम्पूर्ण मानव चेतना निराशा के अन्धकार में डूबती हुई अर-अर से अपनी रागात्मक वृत्तियों को जोर से बढे रही और दूसरी ओर विज्ञान के क्षेत्र में नयी-नयी खोजों के साथ नवीन अस्त्र-शस्त्रों युद्ध तकनीकों और नयी-नयी विचार धाराओं को प्रस्तुत करने लगी। प्रयोग वादी कविता ऐसे ही माहौल में पैदा हुई।

छायावादी कविता ने जिस व्यक्ति वादी परिवेश में जन्म लिया था प्रयोग वादी कविता उसके ठीक विपरीत व्यक्तिवाद और समाजवाद के संघर्ष के युग में पैदा हुई वह प्रगति वादी कविता या साम्यवाद की भी देन नहीं है। इसके पीछे पूँजीवाद और साम्यवाद के संघर्ष से उदभूत अस्तित्व वादी दर्शन है। छायावादी कविता एक अपनी देशीय परिस्थितियाँ और चिन्तन कवि के सहयोगी थे। किन्तु प्रयोग वादी कविता में विश्व चिन्तन और विश्व की परिस्थितियाँ सहयोगी हैं। यद्यपि छायावादी कविता भी व्यापक मानवतावाद में विश्वास करती थी। तथापि प्रयोग वादी कविता का मानवतावाद उसके तथ्या भिन्न है। छायावादी मानवतावाद में कवि विश्व मानव को व्यक्ति की दृष्टि

ते देखता है। जबकि प्रयोग वादी मान्यतावाद इसके ठीक विपरीत है। उसमें एक व्यापक तार्क्य भीम दृष्टि से व्यक्ति को देखा जाता है। वस्तुतः प्रयोगवाद में राष्ट्रीय बनने से पहले ही हम अन्तर्राष्ट्रीय हो गये। जबकि छायावाद का मान्यतावाद अन्तर्राष्ट्रीयतावाद और राष्ट्रीयतावाद दोनों से ऊपर है। प्रयोगवाद की इस अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि के परिणामस्वरूप ही हिन्दी कविता पश्चिम की अन्धी नकल की गलियों में भटकने लगी। "अपने ही इस वर्ग के नायिक विदेश और विशेष कर अमरीका यात्रा के लिए तैयार हो जाते हैं। और लौटने पर वहाँ की शक्त मुख से प्रस्तुत करने में दत्त-चित्त रहते हैं। यही नहीं विदेशी पूँजी अन्धा अन्य प्रकार की सहायता से यह लेखक तथा व्यक्तित्व नयी शैलियों में अपने साहित्य का प्रकाशन करने में नहीं हिचकते।"

छायावादी और प्रयोग वादी कविता के वैषम्य का दूसरा आधार भूत तत्त्व है राजनीति साहित्य का विशेष कर प्रयोग वादी साहित्यकार कहीं न कहीं आज के युग में राजनीति से जुड़ा हुआ है। प्रयोगवादी चिन्तकों के मत से वर्तमान सभी व्यवस्था ने जहाँ साहित्य की राजनीति तक सीमित कर दिया है, वहाँ राजनीति के साहित्य को सिद्धांत प्रकार के साधन व्यवस्था के रूप में करना अरंभ कर दिया है। साहित्य और राजनीति को लेकर सन 1953 में इलाहाबाद की "परिभ्रम" गोष्ठी में एक व्यापक चर्चा हुई थी। जिस में निरुद्ध तथा राजनीति को साहित्य का विरोधी स्वीकार कर लिया गया था। डा० रघुवीर इस मत के सबसे बड़े वकील रहे हैं। उनके अनुसार राजनीति में भारतीय समाज की आस्था को जड़ बना दिया है। और इस जड़ आस्था से उत्पन्न

=====

॥॥ आचार्य: नन्द दुलारे वाजपेयी: सामयिक परिवेष्टा:

आलोचना पृष्ठ: 2

" सामाजिक परिस्थिति ने कवि को संवेदित किया है । वह इस तर्षाही जड़ता और कुंठा का अनुभव अपने जीवन में कर रहा है । यह कुंठा पतावन वादी न होकर परिस्थिति जन्य है । उसके मन का संघर्ष, विषमता, आवेश विप्रक्षेपता सभी इस सामाजिक परिस्थिति का संवेदन है । आज के कवि का संघर्ष उसकी आशा निराशा जन्य कुंठारै व्यक्तिगत से अधिक सामाजिक है ।" छायावादी कविता में ऐसी किसी जड़ता की समस्या नहीं थी । छायावादी कवि की आस्था घेतन थी । उसकी वेदना का कारण किसी राजनीति से उत्पन्न सामाजिक कुंठारै नहीं थी । अपितु वह मानवीय संवेदनारै थी, जो पग- पग पर शास्त्रीयतावाद और नैतिकतावाद की संकुचित दृष्टि से आहत हो रही थी । उसकी पीड़ा सामाजिक न होकर व्यक्तिगत थी जो उसे पूरे समाज में दिखाई देती थी । -

"कल्पा का लघु बिन्दु युगों से,
भरता छलकाता नम घन ।
समा न पाता जग के छोटे,
घ्याले में उतका जीवन ।" 2

उसे सम्पूर्ण समाज तो क्या सम्पूर्ण प्रकृति भी अपने सुख दुःख में भागीदार दिखाई देती है । जबकि प्रयोगवादी कवि सम्पूर्ण समाज के सुख दुःख में अपने को भागीदार देखता है । संक्षेप में कहें तो कह सकते हैं कि छायावादी कवि व्यक्ति के सुख दुःख को समष्टि पर आरोपित करता था जबकि प्रयोगवादी कवि समष्टिगत सुख दुःखों को व्यक्ति पर आरोपित करता है ।

=====

111 डा० रघुवीरः । लेखक का नाम । नयी कविता का सामाजिक परिघेदः
नयी कविता अंक 2

121 महादेवी वर्माः यामाः पृष्ठः 116

प्रयोग वादी कविता को छायावाद से अलग करने का एक कारण और भी है और वह है । छायावादी कविता जिस सांस्कृतिक पृष्ठ भूमि पर खड़ी थी । प्रयोग वादी कविता उससे भिन्न मानी तत्कालीन संस्कृति पर खड़ी है । * पुरानी संस्कृति मर रही है और संस्कृति का प्रश्न हमारे जीवन मरण का प्रश्न है । यह दोहराने की आवश्यकता नहीं कि पुरानी व्यवस्था के टूटने का कारण मानी है ।*¹ अश्वे के अनुसार मानी युग में विज्ञापन का महत्त्व बहुत बढ़ गया है * साहित्य की कला जो यही से बहुत दूर कभी नहीं रही कभी गमीली और युक्त थी । लेकिन आज हम देखते हैं । कि वह पेदिनी है, और व्यभिचार के लिये मजबूर है जबकि विज्ञापन वाजों की एक चुनी हुई एक नटनी, जिस * लिटरेचर* उसका स्वांग भर रही है ।*² छायावादी कविता जिस स्वतंत्रता की पक्षधर थी उसके लिए व्यक्ति स्वतंत्र एक आवश्यक वस्तु थी । भारत की स्वतंत्रता के साथ यह लक्ष्य किसी सीमा तक प्राप्त भी कर लिया गया है । किन्तु वाह्य स्वतंत्रता ही सब कुछ नहीं है आंतरिक स्वतंत्रता भी आवश्यक है * आज भारत में भी जो साहित्यकार मानव नियति के सम्बन्ध में राष्ट्र के नव निर्माण के प्रति अपना दायित्व अनुभव करता है, उसके लिए सबसे प्रमुख चिन्ता हो जाती है ----- * सामान्य जन की मुक्ति* । भारत की स्वतंत्रता तब तक सार्थक नहीं है । जब तक भारत का सामान्य जन स्वतंत्र नहीं है । सामान्य जन के स्वतंत्र होने का अर्थ यही नहीं है कि उसे भर पेट भोजन जलरत के मुतापिक कपड़ा मिल जाये । यह भी है तथा इसके अलावा और बहुत कुछ भी है । उसके मानस में जो अन्य- रुढ़ियाँ हैं, कुंठाएँ हैं, अधि-विषेक है, सूँटना है, मृत परम्पराएँ आदि प्रवृत्तियाँ हैं, चिनके कारण वह

=====

॥॥ सविद्यानन्द हीरानन्द वात्सायन अश्वे: त्रिशंकु: संस्कृति और
परिस्थितियाँ पृष्ठ : 15

युग- युग से दास बनता चला जाता है ----- उससे भी उन्हें मुक्त कराना है इस दृष्टि से स्वातंत्र्य न केवल एक वाह्य परिस्थिति है, वरन् एक आन्तरिक मूल्य भी है । और जब साहित्यकार सामान्य जन के स्वातंत्र्य का दायित्व लेता है तो वह सम्पूर्ण वाह्य और आन्तरिक जटिल व्यवस्था की पूछ भूमि में उसे ग्रहण करता है । केवल सीमित राजनीतिक अर्थ में नहीं ।¹ छायावादी कवियों ने भी इस बात को महसूस किया था -----

"आह मृत्यु का ऐसा अमर अपारिधिक पूजन,
जब विषम निजी पड़ा हो जग का जीवन

x

x

x

मानव ऐसी भी पिशाचिता क्या जीवन के प्रति *2

पंज जी की ताज के प्रति की कहीं नयी ये पंक्तियाँ मानव के आन्तरिक स्वातंत्र्य की ही कामना करती है किन्तु यह बात छायावाद के अन्तिम दौर की है । छायावादी रचनाओं में इन सब बातों पर ध्यान नहीं दिया जाता है । उनमें तो केवल व्यक्तिगत अनुभूतियों को ही अधिक महत्व दिया गया है । इस दृष्टि से देखें तो प्रयोगवादी कविता का फलक छायावादी कविता की अपेक्षा बहुत विशाल है, किन्तु दृष्टि समष्टि से व्यष्टि की ओर होने के कारण उसमें वह अनुभूति की तादृशता और आवेगमय व्यंग्य नहीं है जो छायावादी कविता में था । अतिलिप्त यह है कि विदेशों के चक्कर में रहने वाला और महत्व पाने के लिए लालायित स्वाध्याय का हृद्यक प्रयोगवादी कवि कविता में नया बन लाने के लिए एक क्षणिक घमाकार सृष्टि करता है । और इस घमाकार सृष्टि के लिये वह निरंतर विदेशी साहित्य की नकल करता है ।

=====

111 धर्मवीर भारती: मानव मूल्य और साहित्य: पृष्ठ: 74

121 सुमित्रा नन्दन पन्त: ग्राम्या: पृष्ठ: 267

अपने व्यक्तिगत भावों में अत्यधिक तल्लीनता और उसकी यथा स्व व्यंजना कवि को कलाकार नहीं बनाती कलाकारिता व्यक्तिगत को विषयात्मक घरातल पर उठाने में सन्निहित है । छायावादी काव्य व्यक्तिगत भावों को विषयात्मक घरातल पर उठाने में निश्चय ही तत्क्षिप्त रहा है । किन्तु प्रयोगवादी कविता अपने व्यक्तिगत भावों अत्यधिक तल्लीनता और उसकी यथा स्व व्यंजना करने में ही अपना दायित्व समझती रही । इसीलिये प्रयोगवादी कविता में छा का महत्त्व बहुत अधिक बढ़ गया है । संक्षेप में कह सकते हैं कि छायावाद व्यक्ति को समष्टि में घिरीन करने का एक प्रयोग था जबकि प्रयोगवाद समष्टि को व्यक्ति में लीन कर देने का एक प्रयत्न मात्र है । और यही इन दोनों के वैषम्य का आधार भूत कारण है । अब देखना है कि यह आधार काव्य के विभिन्न अंगों और स्तरों में किस प्रकार परिलक्षित होता है । इसके लिए विषय वस्तु काव्य के स्व और अभि- व्यंजना शिल्प की दृष्टि से छायावादी और प्रयोगवादी कविताओं का तुलनात्मक अध्ययन आवश्यक है ।

III विषय वस्तु से सम्बन्धित वैषम्य:-

=====

जहाँ तक विषय- वस्तु का प्रश्न है छायावादी और प्रयोग वादी कविता की विषय- वस्तु में पर्याप्त अन्तर है । छायावादी कवि जहाँ प्रेम, वेदना, प्रकृति रहस्य भावना को अपना काव्य विषय बनाता था वहाँ प्रयोग वादी कवि जीवन और जगत की पथार्थता और विराधाभासों, वैज्ञानिक मान्यताओं या खोजों को अपना काव्य विषय बनाता है । साथ ही वह अपने

विषय को बिना किसी रोमान्टिक आवरण के सीधे- सीधे प्रस्तुत करता है । छायावादी कवि शान्ति को पसंद करता है । किन्तु वह शान्ति उसे व्यावहारिक जीवन और जगत से दूर प्रकृति में प्रेम और वेदना में मिलती थी । जब कि प्रयोग वादी कवि ठीक उसके विपरीत उस शान्ति की खोज युद्ध की विभीषिका की समाप्ति वैज्ञानिक अस्त्रों- शस्त्रों की भागदौड़ से युक्ति में देखता है । यहाँ दो उद्धरण पर्याप्त है । पंत जी की " एक तारा" शीर्षक कविता में यह शान्ति सन्ध्या काल के ग्रामीण अंगण में देखने को मिलती है —

“नीरव सन्ध्या में वृशान्त
हूँ मैं तारा ग्राम ग्रान्त
पत्तों के ज्ञान्त अधरों पर
तो गया निखिल वन का मर- मर
ज्यों घीणा के तारों में स्पर्श” ।¹

व्यावहारिक जीवन और जगत से दूर शान्ति की खोज छायावादी करना चाहता है वह शान्ति एक कल्पना लोक की शान्ति है । वस्तुतः यह शान्ति की खोज एक प्रकार का जीवन से बलावन है:-----

“फिर विकल है प्राण मेरे
तोड़ दो यह धित्ति मैं भी देख लूँ उस ओर क्या है
जो रहे जिस पथ से पुन कल्प अब और क्या है ।
ज्यों मुझे प्राचीर वन कर
आज मेरे प्राण घेरे”²

॥१॥ तुमित्रा नंदन पंतः पल्लव पृष्ठः 267

॥2॥ महादेवी वर्माः यामाः पृष्ठः 238।

• चेतना लहर न उठेगी जीवन समुद्र फिर होगा ।

तन्मया ही सर्ग प्रलय की विच्छेद मिलन फिर होगा •।

इस प्रकार आलोचिता या कल्पना जगत में शान्ति की खोज छायावादी कवियों का लक्ष्य था ।

वास्तव में छायावादी कवि ठोस जीवन के आघातों से पीड़ित होकर रो उठने वाले बच्चों की तरह है वह पूँछ छवने पर फन उठाने वाले तारों की तरह नहीं है । उसमें पीड़ा तो है किन्तु उसके निवारण की कर्म प्रवृत्ति नहीं है । अर्थात् पीड़ा से कल्पना जगत या आध्यात्मिक जगत में पलायन को ही वह पीड़ा से निवृत्ति मानता है । जबकि प्रयोगवादी कवि उस पीड़ा के कारण से टकराने के लिए तन्मय है । वह पलायन नहीं करता अर्थात् उसके निवारण का संकल्प करता है ।

“पीर बहूटी की बूटे वाली घात पर

ये काले टैंक नहीं जाने दूंगा

अथ से ठंडी इस कामोशी की साज पर

बन्दूकें तुम्हें नहीं लाने दूंगा ।”²

सर्वेस्वर की इस कविता की शुरुआत पंत जी के “ माँ अल्माड़े मैं आये थे जब राखर्षि धिवेकानंद” वाली शैली में हुई किन्तु अंत एक दृढ़ संकल्प के साथ हुआ है । पंत जी की भाँति श्रेष्ठ और सुन्दर के अनुकरण की ललक के साथ नहीं, अपनी इस दृढ़ मनोवृत्ति के कारण प्रयोगवादी समीक्षक छायावाद को

=====

॥१॥ प्रसाद: आतु: पृष्ठ: ३२३ प्रसाद शम्भूदास

॥२॥ सर्वेस्वर दयाल सखतना: काठ की घण्टियाँ : पृष्ठ: ३७६।

“ अनेक प्रकार की चर्जाओं का पुन मानते हैं तथा उत्तम काव्य कृति के लिये प्रेरणा का उभाव पाते हैं । ”¹ उसकी दृष्टि में छायावादी तादृश्य बोध विभु वत निष्क्रियता को ही अन्तिम तत्त्व मानता है । उनका कहना है कि छायावाद “तो केवल घमटकार देकता है, आश्चर्य वक्ति होना जानता है विविधता का वक्तव्य है । और साथ ही साथ यह तारा भाव- बोध आत्म हीनता की संज्ञा पर आकृति है । प्रकृति के अविवेक पूर्ण प्रदर्शनों से भी वह उतना अभिभूत हो जाता है, जितना कि उसकी वड़ प्रक्रिया से होता है । और अंत में जब वह रहस्यवादी सीमा पर पहुँचता है तो उसकी विधुमत विज्ञाता इन सबसे पलायन करके निष्क्रिय ीदिव त्वचन के कुँहा ते में आत्म विभोर होकर परियों के देश की कहानी बुनने लगती है । वित्तमें केवल इस बार उस बार का संकेत है । न तो इस बार के जीवन का यथार्थ है और न उस बार की दृष्टि । ”²

यहाँ तक कि प्रयोगवादी समीक छायावाद पुन के अन्तिम वर्धों को “स्नायरी” का काव्य मानते हैं । अपने व्यक्ति को तिरौहित करने का छायावादी प्रयास आत्म पाती है । किन्तु प्रयोग वादी कवि में वह आत्म निमग्न है । जीवन की जटिलताओं, तमस्याओं और पाषाओं से प्रताड़ित तो दोनों ही कवियों का अहम होता है । किन्तु एक कल्पना की मारपीन बाकर उस दर्द को भुजाने की फैला करता है । और दूसरा उनके बुझने के मार्ग तलाशता है । एक की संवेदन शीलता एक वृष्टा भर उत्पन्न करती है । और दूसरे की एक संकल्प शक्ति । एक ही घोट की यह पूछ- पूछ प्रतिक्रियाएँ हैं, जो छायावादी और प्रयोगवादी कवियों में देखी जा सकती है ।

111 मरेन्द्र देव वर्मा: प्रयोग वाद: पृष्ठ 148

121 लक्ष्मीकांत वर्मा: नयी कविता के प्रतिमान: पृष्ठ 79

महादेवी में जहाँ " मैं भी देख लूँ उस ओर क्या है" जैसी मात्र इच्छा उत्पन्न होती है । और यह इच्छा संकल्प विहीन है " तोड़ दो यह क्षितिज" कहकर वे किसी दूसरे से यह अपेक्षा करते हैं कि वह आये और उनके वन्दनों को तोड़ दें । स्वयं वन्दनों को तोड़ने की इच्छा शक्ति का यहाँ अभाव है । अपने अहम की अन्तर्मुहा से वे बाहर निकलने का साहस नहीं कर पाती और न उस सत्य को स्वीकार पाती हैं जो प्रयोग वादी कवियों ने सहज स्वीकार किया है —

"अहम अन्तर्मुहा पाती, स्वरहित क्या ये चीन्हाता कोई न दूजी राह
जानता क्या नहीं निज मैं बद्ध होकर है नहीं निराह
छुट नलकी मैं समाता है कहीं वे बाह
मुक्ति जीवन की सक्रिय अभिव्यञ्जना का तेज दीप्त प्रवाह ।"¹

वे उस घर झाँकने की बजाय अपनी पीड़ा को सब की पीड़ा में मिला देना चाहते हैं । अपने व्यक्ति को समष्टि में मिलाने का इतने अच्छा और क्या उदाहरण हो सकता है ।-----

* यह दीप अकेला स्नेह भरा
है गर्व भरा मदमाता पर
इसको भी पंक्ति को देदो ।²

प्रयोग वाद और छाया वाद की वेदना लगभग एक ही है किन्तु उसको प्रतिक्रिया में मूल भूत अंतर है । यह अंतर केवल विषय वस्तु के स्तर पर नहीं अपितु काव्य रूप की दृष्टि से भी और भाषा, अंशकार

=====

111 अजेय: हरी घास पर क्षण भर : पृष्ठ: 14

121 अजेय: घाघरा अहेरी: । 171

अभिर्व्यञ्जना तथा छंद विधान की दृष्टि से भी परिलक्षित होता है ।

काव्य रूप की दृष्टि से वैषम्य के आधार भूत तत्त्व:-
=====

छायावाद की भाँति प्रयोगवाद में काव्य रूपों के विवेचन का पैता प्रयास नहीं हुआ जैसा छायावादी काव्य रूपों का हुआ है । छायावादी प्रवृत्ति कविता के अतिरिक्त तत्तर गुमीन नाटकों, उपन्यासों, कहानियों में परिलक्षित होती है । इस युग के लगभग सभी कवि पंथ को छोड़कर विभिन्न काव्य रूपों के निर्माण में लगे थे । छायावाद के आधार भूत तत्त्व ज्योंज्यों प्रस्ताव में कविता ही नहीं उपन्यास, कहानी, नाटक, निबंध आदि लगभग सभी काव्य रूपों में रचना की । महादेवी जी का गद्य साहित्य तो प्रसिद्ध ही है । निराला ने भी विभिन्न काव्य रूपों में संछिप्त की है । पंथ को भी इस दृष्टि से बिल्कुल अछूता नहीं कहा जा सकता । काव्य पुस्तकों की भूमिकाओं के माध्यमों से तथा विभिन्न लेखों के माध्यम से छायावादी समीक्षा में पंथ ने भी अपना योगदान किया है ।

इसके विपरीत प्रयोगवाद शुद्ध कविता का आन्दोलन है । अतः प्रयोगवादी समीक्षकों की दृष्टि प्रयोगवादी कविता को ही स्थापित करने में लगी है । प्रयोगवादी समीक्षा का विकास पर्याप्त हुआ किन्तु यह समीक्षा भी केवल, काव्य तक ही सीमित रही । * कविता के जटिल रूपों और उतमें निहित उलझी हुयी संवेदनाओं के स्पष्टीकरण में समस्त ध्यान केंद्रित हो जाने के कारण अन्य महत्वपूर्ण साहित्योक्तों एवं काव्य रूपों की वांछित विवेचना करने के लिये प्रयोगवादी समीक्षकों को अवकाश नहीं मिलता । *

=====

॥॥ प्रयोगवाद: नरेन्द्र देव वर्मा पृष्ठ: 165

काव्य स्वरों पर थोड़ी बहुत चर्चा अक्षेय और धर्मवीर भारती ने की है। किन्तु अक्षेय हय और ब्रह्म काव्य का भेद स्वीकार नहीं करते उनके अनुसार " आधुनिक कविता न केवल हय यानी दृष्टि मय्य है न केवल ब्रह्म यानी श्रवण मय्य है। उनका प्रयास है कि वह तीथी- तीथी बोध मय्य हो उसे स्पष्टता मिलती है कि नहीं। मिल सकती है कि नहीं, यह और बात है। उसका उद्देश्य यह है कि वह तीथी चेतना को घुना पाहती है इसलिये निरे शब्दों के निरे अर्थ से आगे बढ़कर वह ध्वनियों और अंतर ध्वनियों स्वरों और अन्तः स्वरों से उलझती है और संवादी और विवादी स्वरों को लेकर अन्वेषण करती है। आप चाहें तो कह लें कि वह एक ताव दो विवादी दिशाओं में चलती है।" ।

छायावादी और प्रयोग वादी काव्य स्वरों के वैधर्म्य को संक्षेप में हम निम्न लिखित शीर्षकों में चित्रित कर सकते हैं।

क। कविता:- =====

मुख्यतः छायावाद और प्रयोग वाद दोनों ही कविता के आन्दोलन हैं। किन्तु दोनों ही कविताओं में पर्याप्त अन्तर है। छायावादी कविताओं जहाँ गीतों पर आश्रित है वहाँ प्रयोग वादी कवितायें गद्यश्रित हैं। फलतः एक ही पीढ़ा की दोनों में भिन्न - भिन्न प्रकार की अभिव्यक्ति है। छायावादी कविता में यदि उसकी भावमय अभिव्यक्ति है तो प्रयोग वादी कविता में उसकी शुद्ध वादिक अभिव्यक्ति है। कहना न होना कि प्रयोग वादी कविता छायावादी की ओर अधिक वादिक है इसीलिये इन दोनों में एक अंतर और परिलक्षित होता है। प्रयोग वादी कवि छाया वादी कविताओं

=====

की अपेक्षा छोटी कविताओं पर बल देता है। यह मानता है कि "जो कविता भावना प्रधान होती है। उसे अनिवार्यतः छोटा होना चाहिये। लघु आकार के अभाव में भावों की तच्चाई नहीं रह जाती और उसमें नैसर्गिक तीव्रता एवं प्रभुविभूता का आभाव भी हो जाता है।" ¹ अक्षेय का कहना है कि "जो कभी भी पीड़ा थी मस्तक में स्थिति थी छाया" वह एक आँसु बन कर आये यहाँ तक तो ठीक है किन्तु जब वह बरसात की झड़ी ती घरतने लगती है तब वह शायद वही पीड़ा नहीं रहती, और कभी भी तो भूत रह ही कैसे सकती है। एक बात और कि अक्षेय प्रयोगवादी कविता पर मनोविज्ञान का तीव्र प्रभाव मानते हैं। उनके अनुसार वर्तमान युग में व्यक्ति और परिस्थिति के मध्य तनाव और विरोध जितनी तीव्रता से लक्षित हुआ है। ~~इतना~~ उनके पूर्व कभी घटित नहीं हुआ है। इस विरोध का दबाव इतना तीव्र है कि कवि उसकी ~~अथा~~ तत्त्व अभिव्यक्ति करने में असमर्थ होता है। और उसको व्यक्त करने के लिये कतिपय संकेतों की नियोजना करता है। जिससे बाधक उस विरोध का आभास पा सके। उसके अनुसार काव्य में परिप्रेक्ष्य का नवीन आभास होना चाहिये। उसके द्वारा ग्रहीत अनुभव जीवन के अस्तुत्सव संदर्भों से सम्बन्ध हो और उसकी अभिव्यक्ति शैली भी तदनुसृत्य परिवर्तित होनी चाहिये। "मानसिक तनाव से धनुष की प्रत्यक्षा ती तनी हुयी अन्तर्जीवन की तीखी चेतना से स्वर ती संयत लेकिन जीवन विविधता के बोध से विभ्रंजित होती हुई भी आज की कविता का सौंदर्य इस तीसरी कोटि का ही सौंदर्य है।" ² छायावादी कविता में कवि की चेतना मानसिक तनाव से धनुष की प्रत्यक्षा ती तनी हुयी नहीं थी। वहाँ वेदना और पीड़ा तो है लेकिन किसी प्रकार का तनाव नहीं। यही छायावादी और प्रयोगवादी कविता का मूल भूत

=====

111 प्रयोगवाद: नरेन्द्र देव वर्मा: पृष्ठ: 167

121 अक्षेय: आत्म नेमद: पृष्ठ 19

स्वात्मिक वैषम्य है ।

18। अन्य काव्य रूप:-

=====

अन्य काव्य रूपों में उपन्यास ही एक ऐसा काव्य है जिसका फलक अपनी विज्ञानता में कविता और नाटक की समकक्षता कर सकता है । जहाँ तक छायावादी और प्रयोग वादी काव्य रूपों में उपन्यास का प्रश्न है प्रयोग वाद में उपन्यास नग्न्य है । ते- देकर उद्देय का " शेखर एक जीवनी" ही एक उपन्यास है जब कि छायावाद में प्रसाद और निराला दोनों ही उपन्यास के रचियता थे । फिर भी प्रसाद के " तितली" उपन्यास को तुलनात्मक दृष्टि से देखें तो दोनों में वैषम्य स्पष्टपरिलक्षित होता है । वस्तुतः विषय वस्तु का जो कविता सम्बन्धी अन्तर दोनों आन्दोलनों में है, वह उपन्यास में भी है । " तितली" में जहाँ सामाजिक और राजनैतिक परिवेश का चित्रण महत्वपूर्ण है और " मधुवन" का व्यक्तित्व उसमें तिरोहित हो जाता है वहीं " शेखर एक जीवनी" में शेखर का व्यक्तित्व महत्व पूर्ण है । समस्त परिवेश उस व्यक्तित्व के निर्माण और विकास में मात्र सहायक की भूमिका का निर्वाह करता है । दोनों की धारा परस्पर विपरीत है "तितली" के बाबा राम नाथ जैता कोई परिव्र " शेखर एक जीवनी" में नहीं है । वहाँ तितली की भाँति शैला, वादसन जैसे भिन्न पात्र भी नहीं शेखर एक जीवनी शुद्ध रूप से एक मनोवैज्ञानिक उपन्यास है जबकि तितली एक सामाजिक उपन्यास है । व्यष्टि और समष्टि और समष्टि से व्यष्टि की ओर का वैषम्य दोनों उपन्यासों की शैली में भी स्पष्ट देखा जा सकता है । जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है " शेखर एक जीवनी" जीवनी शैली में लिखा गया उपन्यास है बल्कि यों कहें आत्म कथात्मक शैली में लिखा गया उपन्यास

है। जबकि तितली कयात्क गैली की रचना है। इतना ही नहीं तितली में प्रसाद की अपनी कुछ मान्यताएँ रही जो कि सांस्कृतिक धरोहर नहीं जा सकती है। लेकिन अक्षय के पास ऐसी कोई सांस्कृतिक धरोहर न होकर शुद्ध वैज्ञानिक। मनोवैज्ञानिक। दृष्टि रही है। प्रसाद जहाँ प्रेम की पूर्णता विवाह में मानते हैं। यहाँ अक्षय इस सांस्कृतिक और धार्मिक मान्यता से युक्त है। वे फ्राइड से इतने प्रभावित हैं कि काम सम्बन्धों का उनके शुद्ध स्व में वे प्रस्तुत करते हैं। यहाँ तक की कोई नैतिक मान्यता इसमें उनके आड़े नहीं आती। शंकर का अपनी ही मौसी की पुत्री के प्रति लगाव इसका उदाहरण है। किशोरों की मानसिकता के विकास की दृष्टि से इसे अमान्य नहीं कहा जा सकता फिर भी प्रसाद जिस सांस्कृतिक धरातल पर उड़े वे उस धरातल के लिये यह एक अनहोनी है।

इस प्रकार गैली, विषय वस्तु और जीवन दृष्टि तीनों ही स्तरों पर छायावादी और प्रयोगवादी उपन्यासों में मूल भूत वैधर्म्य है।

कविता और उपन्यास की ही भाँति नाटक भी एक महत्वपूर्ण काव्य स्वरूप है छायावाद युग की भाँति प्रयोगवादी आन्दोलनों ने नाटकों के क्षेत्र में कोई कार्य नहीं किया छायावाद ने जहाँ हिन्दी को प्रसाद जैसा तमर्थ नाटक कर दिया वैसे नाटक के इतिहास में ग्रीस का ही नहीं नीच का पत्थर भी कहा जा सकता है। यहाँ प्रयोगवाद इस क्षेत्र में एक दम कोरा है। हाँ, कुछ नाट्य गीत या नाट्य कविताओं के प्रयोग प्रयोगवादी आन्दोलन में अवश्य किये गये हैं। जैसे धर्मवीर भारती का "अन्धा युग" "कनुप्रिया" नरेश मेहता का "लंछन की एक रात" आदि। अगर प्रयोगवादी

नाटकों में कोई उल्लेखनीय और समर्थ नाटक कार हुआ है तो वह है मोहन राकेश स्त्री पुरुष के सम्बन्धों को और तलाक की समस्या को लेकर अपने नाटकों की रचना करने वाले "मोहन राकेश" पुष्प स्वामिनी" के लेखक प्रताप से फिर भी भिन्न है। यद्यपि "पुष्प स्वामिनी और " तहरों के राजहंस" नाटकों की समस्या एक ही है। लेकिन युग का अन्तर यहाँ भी स्पष्ट परिलक्षित होता है। "पुष्प स्वामिनी" की कथा जहाँ ऐतिहासिक कथा है। यहाँ " तहरों के राजहंस" शुद्ध रूप से काल्पनिक है। दोनों के धरातल में भी पर्याप्त वैषम्य है। "पुष्प स्वामिनी" यदि सांस्कृतिक धरातल पर खड़ा है तो " तहरों के राजहंस" सामाजिक और व्यावहारिक धरातल पर खड़ा है। पुष्प स्वामिनी में नाटक कार का उद्देश्य तलाक की प्रथा के बारे में जानना था और उन परिस्थितियों को रेखांकित करना था जिनमें भारतीय सांस्कृतिक परम्परा तलाक की आज्ञा देती है। वहीं तहरों के राजहंस में परम्परा से हटकर जीवन की विषमताओं से उद्भूत उन परिस्थितियों की और इंगित किया गया है। जिनमें तलाक एक अविषयनीयता से हो जाती है। प्रताप जहाँ अपने नाटकों में स्त्री के प्रति अधिक संवेदनशील रहे हैं वहाँ प्रयोग वादीयों की संवेदनशीलता पुरुष के साथ ही उतनी ही जुड़ी हुयी है जितनी कि स्त्री के साथ। वस्तुतः पुष्प स्वामिनी उस समय का नाटक है जब स्त्री, बुद्धि वर्ग की उच्चता के नीचे दब कर कराह रही थी। जब कि तहरों का राजहंस उससे आगे उन परिस्थितियों का नाटक है जिनमें स्त्री की प्रगति के धक्के से स्थानुच्युत पुरुष तिल मिला उठा था। वस्तुतः युग का यह अन्तर ही दोनों की संवेदनाओं को अलग करता है। एक ही समस्या पर दोनों की दृष्टि में भी अंतर उपस्थित करता है। प्रताप जहाँ नारी स्वातंत्र्य की पकालत करते हुए राजनीति, धर्म शास्त्र तथा स्त्री - पुरुष सम्बन्ध तीनों

को लेकर चलते हैं वहीं मोहन राकेश केवल त्रि-पुंख की मानसिकता पर ही अपना ध्यान केन्द्रित करते हैं। मनीषी युग में उत्पन्न मानसिकता ही आज के सम्बन्ध विच्छेद का कारण है। अब जीवन में भासुकता वही है जो ध्रुव-स्वामिनी के युग में थी। एक और भी अंतर दोनों के पात्रों में है। प्रताप के पात्र यदि समाज के उच्च वर्ग और राज महलों में रहने वाले पात्र है तो मोहन राकेश के सामान्य नागरिक, जो निरंतर जीवन में संघर्ष करता हुआ अपने प्यार को बनाये रखने के लिये प्रयत्नशील है। यही कारण है कि एक के नाटक सांस्कृतिक है तो दूसरे के मनो वैज्ञानिक एक में भासुकता है तो दूसरे में बोद्धि-कता प्रयोगवादी नाटकों में छायावादी नाटकों की भांति गीत के तिर स्थान नहीं। तर्काश्रित होने के कारण उनके संवाद भी ओझा झूत बड़े- बड़े हैं।

उपन्यास और नाटकों के अलावा कहानी भी एक सार्वजनिक काव्य रूप है। उपन्यासों की भांति छायावादी और प्रयोगवादी कहानियों में भी पर्याप्त अंतर है। प्रताप की "आकाशदीप" और अज्ञेय की "रोज" कहानियाँ दोनों ही दो युगों की प्रतिनिधि कहानियाँ हैं। दोनों कहानियाँ मानव की सर्वाधिक संवेदन युक्त घुत्ति प्रेम को लेकर चलती हैं। किन्तु "आकाश दीप" कहानी में जहाँ अतिशय भासुकता है वहीं अज्ञेय की "रोज" में प्रेम का मनो-वैज्ञानिक विश्लेषण।

छायावादी और प्रयोगवादी कहानी का यह मूल भूत अंतर है। छायावादी कहानी जहाँ अतिशय भासुकता के तले दब रही है। तो प्रयोगवादी कहानी मानो-वैज्ञानिक विश्लेषण के आग्रह से ग्रस्त है। यहाँ नरेन्द्र

देव वर्मा के इस विषय में विचार ह्यातंध्य है-----

* यह सत्य है कि आज की कहानी की लोक प्रियता पूर्ण प्रेक्षा अत्यन्त कम है और मनो वैज्ञानिक विश्लेषण के अत्यधिक आग्रह से उसका स्वरूप भी जटिल होता जा रहा है। भाव वीथ एवं संवेदना की दृष्टि से नयी कहानी प्राचीन कहानी से एक पृथक् स्तर का निर्माण करती प्रतीत होती है।¹ वस्तुतः आज का कथाकार यथार्थ चित्रण करके ही तन्मूढ नहीं होता अपितु उस यथार्थ की उद्भाविका परिस्थितियों का भी वैज्ञानिक दृष्टि से परीक्षण विश्लेषण करता है। इस प्रकार हिन्दी में कहानी प्रतिभा के उन्मेष की एकदम संभावनाएँ हैं। व्यवसायिक और प्रचारात्मक दुराग्रह से उसकी भुक्ति होने पर इस क्षेत्र में महत्व पूर्ण प्रगति हो सकती है। *2

छायावादी कहानी से प्रयोगवादी कहानी व्यावसायिक और प्रचारात्मक अधिक है। भारती का कहना है कि जहाँ हिन्दी कविता प्रकाशन के अभाव से पीड़ित थी वहाँ कहानी प्रकाशन के साधनों की कालक्षमता से पीड़ित हो रही है। वे कहते हैं कि * हिन्दी कहानी पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। तथा व्यवसायियों के कहानी विषयक अभियान से उसकी साहित्यिक प्रगति के मार्ग में एक प्रबल बिन्दु लग जाता है। निश्चय ही छायावादी कहानी इस विज्ञापन वाजी से मुक्त थी और यही कारण है कि जो भावुकता छायावादी कहानी में है वह प्रगति वादी कहानी में नहीं है। *3

* * * * *

111 डा० नरेन्द्र देव वर्मा: प्रयोग वाद : पृष्ठ 168।

121 धर्म धीर भारती : कल्पना: जनवरी 58 पृष्ठ: 40- 41

131 यही:

अभिव्यञ्जना शिल्प की दृष्टि से वैषम्य के आधार भूत तत्त्व:-

प्रयोग वादी कविता में कवियों का शिल्प पर विशेष आग्रह रहा है * मैंने कविता में विषय से अधिक टेक्नीक पर ध्यान दिया है । विषय की मौलिकता का पक्षपाती होने पर मेरा विश्वास है कि टेक्नीक के अभाव में कविता अधूरी रह जाती है ।¹ वस्तुतः शिल्प के प्रति यह आग्रह तब प्रारम्भ हुआ * जबकि प्रगति के सम्प्रदाय ने शिल्प स्व तन्त्र आदि तब को गौण कह कर एक ओर ठेल किया और शिल्पी एक प्रकार का माली समझा जाने लगा। इस वर्ग ने नयी काव्य प्रवृत्ति को यह कह कर उड़ा देना चाहा कि वह केवल शिल्प का, स्व विधान का आविष्कार है, निरा फार्मोलिज्म है

-----² ठीक यहीं से छायावादी कविता में अभिव्यञ्जना शिल्प में मौलिक अंतर प्रारंभ होता है । छायावादी कवि तो शिल्पी का किन्तु प्रयोगवादियों की तरह इतना आग्रही नहीं था । यहां शिल्प के प्रति आग्रह एक प्रति क्रिया है । ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार छायावाद दितोदी युगीन इति पुरातनता के प्रति एक प्रतिक्रिया है । शिल्प के प्रति इस विशेष आग्रह ने अभिव्यञ्जना शिल्प की परिभाषा या फिर बनी बनाई परम्पराओं को तोड़ने में ही अपनी समर्थता नहीं समझी अपितु अभिव्यञ्जना के लिये शिल्प को अपने प्रयोगों का आधार बना लिया और शिल्प के क्षेत्र में नित नवीन प्रयोग होने लगे । जिनमें अनेक सार्थक भी हैं । शिल्प की क्षेत्र में प्रयोगों की बढ़ती प्रवृत्ति ने अभिव्यञ्जना का कोई भी उपादान नहीं रखा छोड़ा जिससे नयापन न भर दिया हो और वह भी आग्रह पूर्वक । प्रयोग वादी समीक्षकों ने अभिव्यञ्जना शिल्प के इन प्रयोगों को छान-परख कर अनेक विचारणीय निष्कर्ष भी निकाले हैं । इसे संमीरता और सुदृढता से समझने के लिये यहां अभिव्यञ्जना शिल्प के एक-एक उपादान की पृथक् - पृथक् परीक्षा

॥१॥ गिरजा कुमार माथुर: तार सप्तक : पृष्ठ 40

॥२॥ अक्षय: तीसरा सप्तक: पृष्ठ: 17

करना आवश्यक है ।

क। भाषा:-

=====

प्रयोग वादी कवियों को अपनी अभिव्यक्ति के लिये परम्परा नुमो-
दित भाषा अव्याप्त और ओछी लगने लगी थी । वस्तुतः उसने भाषा के क्षेत्र
में अनेक प्रयोग किये । यद्यपि भाषा में नवीनता तो छायावादी कवियों ने भी
प्रस्तुत की थी । किन्तु इनकी दृष्टि केवल भाषा में नाविन्य लाने से ही नहीं
हो गई, अपितु अपनी ही बनाई हुई भाषा को ये दूसरे दिन अमान्य करके पुनः
नये प्रयोग करने लगे । यही कारण है कि छायावादी कविता की भाँति
प्रयोग वादी कविता के मुहावरे में एक स्वप्न नहीं है । उनमें उनमें विषयता
है । और यह बात उनकी भाषा में ही क्यों तत्पूर्ण काव्य शिल्प में देखी जा
सकती है । " नवी शिल्प दृष्टि सभी प्रयोग वादी कवियों में विद्यमान है ।
पर यह सभी में समान रूप से विकसित नहीं कही जा सकती तथा सभी कवियों
की शिल्प दृष्टि को एक रूप सम्भीरता भी उपलब्ध नहीं होती। " ¹ जो भी
हो प्रयोग वाद ने अंग्रेजी भाषा " से शब्द प्रयोग की विविध षेडार्जों द्वारा
उसकी अर्थवत्ता को सम्बन्धित किया और भाषा की शक्ति के विकास की नई
दिशाओं का संकेत किया।

नरैन वादियों का कहना है कि " काव्य की परम्परागत भाषा
में यकान आगई है । आज अनुभव किया जा रहा है कि काव्य के अंतर्गत शब्द
सहज अनिश्चित भाव मात्र रह गये हैं । " ² इसलिये " प्रयोग शीलता का प्रथम
आपाय भाषा से सम्बन्धित है । " ³ काव्य भाषा में अर्थ वहन की क्षमता की

=====

111 अक्षयः तीसरा सप्तकः पृष्ठ : 18

121 नरैनः पतयशा पृष्ठः 21

कभी कवि को प्रयोग शीलता की ओर प्रेरित करती है । और प्रयोगों का सम्पादन भाषा के जटिल स्वरूप को प्रस्तुत करता है ।¹ भाषा की इस जटिलता को लेकर प्रयोगवादियों में ही मत भेद है । जहाँ अक्षेय होते सहज कवि की विशालता और उसका आश्चर्य मानते हैं । वहीं गिरजा कुमार मासुर होते " प्रयोगवादी कवियों की सहानुभूति की विपत्तता और अभिव्यक्ति को असमर्थता " ² मानते हैं । वे कहते हैं----- " जब कवि के विचार जगत में यह गम्भीर उत्साह और बुद्धात्ता है तो उसकी अभिव्यक्ति के जो उपकरण हैं अर्थात् भाषा, प्रतीक, उपमान, छन्द अपने आप अस्वाभाविक अपने उन्मत्त और स्व व्यक्तित्व विहीन होंगे । भाषा जानबूझ कर बिगाड़ी गद्दी गई होनी । जिसका व्यावहारिक जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं होगा । केवटा पूर्ण लाये हुये निरर्थक , बोध शून्य प्रतीक होंगे, उपमानों में कोई सारसम्बन्ध नहीं होगा, छंद के नाम पर छंद मय भी न मिलेगा ।"³ और वहीं प्रयोग शीलता है । जो प्रयोग वाद और छायावाद के वैधर्म्य का आधार भूत तत्त्व है । छायावादी भाषा में नवीनता लायी गयी थी । तथा कुछ दुस्वता उसमें भी है । फिर भी वह जान बूझ कर बिगाड़ी या गद्दी गई नहीं है । उसके मुहावरे सुलभ हैं । उसकी भाषा के सम्बन्ध में मतभेद नहीं है ।

प्रयोग वादी कविता में नायों और तिद्धों की संख्या भाषा वैसी दुस्वता होती तो कोई बात नहीं थी । वह तो रहस्य वादी और छायावादी कवियों की दुस्वता से भी आगे कवि के मनमाने धन की घोषित करती है । उसमें जो काम शब्दों से लेना चाहिये वह काम ज्यामिति धिन्हीं और विराम धिन्हीं से लिया गया है ।

=====

11। अक्षेयः दूसरा सप्तकः पृष्ठः 12

12। नरेन्द्र देव वर्माः प्रयोग वादः पृष्ठः 209

13। अक्षेयः त्रिकुः पृष्ठः 116

छंद और तय:-

=====

यद्यपि छायावादी कविता गीत प्रधान कविता है तथापि युक्त छंद भी छायावाद की ही देन है । किन्तु प्रयोगवादी कविता गीत के निकट जाते हुये भी छन्द मुक्त होने की चेष्टा करती है । प्रयोग वादी कविता की प्रयोग धार्मिता के कारण छायावादी और प्रयोग वादी कविता में संगीत को लेकर एक विभाजन रेखा खींचने की चेष्टा की गई है । गिरजा कुमार माथुर ने इस प्रकार के प्रयोग अत्यधिक किये हैं । छायावादी काव्य संगीत से अपने काव्य संगीत की पृथक्ता घोषित करते हुये वे कहते हैं * छायावादी पंक्तियों में काव्य संगीत का अभाव है । क्योंकि उनका संगीत स्वर ध्वनियों की अपेक्षा व्यंजन ध्वनियों से अधिक निर्मित है । व्यंजन ध्वनियों का संगीत बाह्य, अस्थायी और झूठ होता है । वह शब्द की आत्मा है । अतः उस पर अवलम्बित संगीत आन्तरिक और गम्भीर होता है । वह आकाश तत्त्व का संगीत है ।¹

*वातावरण मैनिममम में मैने इती की अधिक सहायता ली है । युक्त छंद के अन्तः संगीत में इन्हीं ध्वनियों की गुंथे बुनी हैं । इती नियम को लेकर मैने स्वर ध्वनियों का मूल्यांकन किया है ।²

मदन वात्सायन तय और संगीत में उसके ध्वनि विधान के लिये * शास्त्रीय रागों से लेकर तिने माई गानों की धुनों तक कोई भी सुन्दर लाभ त्याज्य नहीं" समझते ।³ यही कारण है कि इन लोगों की रचनाओं में ठेठ लोक गीतों की धुनों पर अनेक गीत रचे गये हैं:-----

=====

11। नरेन्द्र देव वर्मा: प्रयोग वाद: पृष्ठ: 216

12। गिरजा कुमार माथुर: तार सप्तक: पृष्ठ 40

13। मदन वात्सायन : तीतरा सप्तक: पृष्ठ: 124

*बुझाई मारी दुलिन
 मारा बाई कषा
 x x x
 कषाह की हंसी गिरा घरी है
 धी बस सक बड़ो *।

इसी तरह:—

* पी के फूटे आज प्यार के
 बानी परता री *2

आदि इसी प्रकार के गीत ह ।

मजेदार बात यह है कि ध्वनि ध्वन्यात में तब निर्माण के लिये स्वरों का प्रयोग शुद्ध संगीत का काम है, काव्य का नहीं । काव्य में शब्द और अर्थ की प्रधानता के कारण व्यंजन ही मुख्य होते हैं । स्वर तो उन की प्रभावोत्पादकता बढ़ाने में सहायक मात्र है । इसका प्रयोग कविता में संगीत का भी आनंद दे देता है । किन्तु इन्हीं को काव्य संगीत मानकर प्रयोग वादी कवियों ने अनेक प्रयोग किये । फलतः उनके गीत छायावादी काव्य गीतों की ओर लौक गीत अधिक लगते हैं । स्वरों द्वारा तब निर्माण के प्रयत्न में ध्वनियों का यथा तथ्य अनुकरण भी कहीं - कहीं हास्यास्पद हो गया है । यद्यपि छायावादी कवियों ने ध्वनियों का तयात्मक अनुकरण किया है । किन्तु वह सैता हास्यास्पद नहीं है । वत जी की ———

=====

121 तयौंघर दयाल सक्तीना: काठ की घण्टियाँ : पृष्ठ: 405

121 भवानी प्रसाद मिश्र: दूतारा सप्तक: ५४१७

• दातों का झुरमुट
 संध्या का झुटपुट
 चिड़िया बोल रही थी
 टी.पी.टी. टुट टुट ।*।

इस कविता में टी.पी.टी. टुट- टुट ध्वनियों का अनुकरणात्मक प्रयोग स्पष्ट है। इसकी तुलना मदन वात्सयायन की "मग्न" ² शीर्षक कविता को "थक- थक थकाथक- थकाथक" जैसी ढेर तारी ध्वनियों से करने पर छायावादी और प्रयोगवादी काव्य संगीत और तय का अंतर स्पष्ट हो जाता है।

यहाँ तक युक्त छंद का प्रश्न है। प्रयोगवाद छायावाद के विरुद्ध छंद से मुक्ति की ओर बढ़ा है। अपने विषय और भाषा की जटिलता के कारण उसके छंदों में रिदम का बहुत कुछ अभाव होता गया है। यहाँ तक कि अनेक रचनाओं में कविता तो क्या गद्य के भी छानि नहीं होते।

॥ग॥ उपमान एवं प्रतीक:-

=====

उपमानों और प्रतीकों के क्षेत्र में भी छायावादी और प्रयोगवादी काव्यों में आधार भूत वैषम्य दिखाई देता है। उपमानों की नवीनता छायावादी कविता में भी दिखाई देती है। लेकिन वह नवीनता अपनी परम्परा से जुड़ी हुई और वे उपमान भारतीय उपमान परम्परा का विकास प्रतीत होता है। किन्तु प्रयोगवादी उपमान तदर्थ से कटे हुए ओर मन की निविड़

=====

॥। सुमित्रा नंदन पंत: शुभाक्ष: पृष्ठ: 19

124 मदन वात्सयायन: तीतरा सप्तक: पृष्ठ: 85

तथा उलझी हुई समझना की अभिव्यक्ति के लिये किये गये हैं। ये उपमान कहीं तो भारतीय पुराणों से चुने गये हैं और कहीं ठेठ अंग्रेजी मुहावरों से लिये गये हैं। इन उपमानों में कहीं कहीं नवीनता सराहनीय है तो कहीं कहीं फूटपूट।

वस्तुतः जब उपमानों का प्रयोग- प्रयोग के लिये किया जाता है तो उसमें फूटपूटन या जटिलता आ जाना स्वाभाविक है। सहज रूप में किया गया प्रयोग ही उपमानों की कार्यक्षमता सिद्ध कर सकता है। प्रायः ऐसा भी हुआ है कि अपने मनोभाव की अभिव्यक्ति के लिये कवि ने ही और तटीक उपमान तो चुन लिया है किन्तु अपनी भावराशि के कारण उसका निर्वाह ठीक से नहीं कर सका है। उपमानों में उसकी दृष्टि साधारण धर्म पर रही है उसके रूप पर उसकी नहीं। जहाँ ऐसा हुआ है वहाँ प्रयोग वादी और छायावादी कविता में शिल्प की दृष्टि से विशेष अंतर नहीं लगता ----- दृष्टान्त की-

मेरी कुंठा रेशम के कीड़े सी ताने- बाने बुनती

तड़प - तड़प कर बाहर आने की तिर धुनती

गर्भवती है-----

मेरी कुंठा क्वारी कुनती ।¹

इस कविता में कवि ने जहाँ रेशम के कीड़े से कुंठा की उपमा दी है वहीं छायावादीयों की भांति कुंठा का मानवीकरण भी किया है। किन्तु भाव-साध्य से स्व साध्य की ओर जाते ही प्रयोग वादी गड़बड़ा जाते हैं। फिर वे प्रसाद की "उलझी जलकें ज्यों तर्क जाल" ² जैसी पंक्तियाँ नहीं दे पाते अपितु दिल को भुने हुये पाकड़ की तरह "तोड़ देते हैं।

=====

11। दृष्टान्त कुमारः सूर्य चरकवर्तः ५७३९-५७

12। जयशंकर प्रसाद : कामायनी : इडा तर्ग : पृष्ठः 176

उपमानों के बाद दूसरी महत्वपूर्ण चीज है प्रतीक योजना । प्रयोग वादी काव्य छायावाद की जैसा प्रतीक कहलाता है । अब तक कवियों द्वारा प्रतीकों का प्रयोग प्रम- विद्युता और तन्मयता के लिये किया जाता रहा है । फलतः ये प्रतीक बोध गुम्य रहे हैं । किन्तु प्रयोगवादियों के प्रतीक वैयक्तिक अधिक हैं । तिद्धों और नाय पंथियों की भाँति इनके प्रतीक भी दृष्ट और बलि हैं । फिर भी उनके भिन्न हैं । तिद्ध और नाथी में । * प्रतीकों का प्रयोग उच्च स्तर की आध्यात्मिक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के उद्देश्य से हुआ है । किन्तु प्रयोग वादी काव्य के प्रतीक वर्णना और कुँठा गुस्त मन की अनुभूतियों को प्रकाशित करने के लिये नियोजित हुये हैं । अतः ये भारतीय परम्परा के अभिन्न विरासत का प्रति- निधित्व न करते हुये उसकी विप्लव परम्परा के अब शिष्टों से संग्रहित हुये हैं । *१ इन प्रतीकों में भी पौराणिक प्रतीक जितने तन्मयता तिद्ध हुये हैं । उसने उज्ज्वली से आये प्रतीक नहीं । उपमान और प्रतीकों के पर्याप्त त्वार्थिक महत्व पूर्ण है - विम्व । विम्व निम्नलिखित अभिव्यक्ति का स्वतन्त्र माध्यम ही नहीं कवि की कलाही भी हो सकता है । कदाचित् इसी लिये आचार्य राम चन्द्र शुक्ल अर्थ ग्रहण के साथ - साथ विम्व ग्रहण को भी काव्य में अतिशय मानते हैं । *२ काव्य में अर्थग्रहण मात्र से काम नहीं चलता, विम्व ग्रहण अतिशय होता है ।

छायावादी काव्य में विम्व दृष्टि प्रमुख मात्रा में बाई जाती है किन्तु छायावादी विम्वों में प्रकृति की ही चहुँपता है । जबकि प्रयोगवादी काव्य में यौन विम्वों की चहुँपता है । यद्यपि कुछ यौन विम्व छायावादी

॥१॥ नरेन्द्र देव वर्मा: प्रयोग वाद : पृष्ठ : ११३१५१

॥२॥ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : विम्वार्थकी पृष्ठ : १५३

कविता में उपलब्ध हं । यथा-----

* तिन्यु तेज पर धरा बधू अव
तनिक संकुचित बैठी सी ।
प्रलय निशा की हलचल स्मृति में
मान किये सी ऐठी सी ।¹

अथवा -

निर्दोष उत्त नायक ने
निमट निठुराई की
कि झोंकों की झाड़ियों से
सारी सुकुमार देह,
झकझोर डाली ।
भीड़ दिये मोरे खोल गोल ।²

किन्तु प्रयोग वादी यौन चिन्मों में शालीनता भी नहीं है जो छायावादी चिन्मों में है । वस्तुतः वे कवियों के मन की यौन वर्जनाओं की अदम्य अभिव्यक्ति है । केंदार नाथ सिंह का यह कथन -- हास्यास्पद लगता है । कि आज अधिकांश यौन चिन्मों जीवन के उत्थार मूल्यों को व्यक्त करने के लिये साहित्य में लाये जाते हैं ।³

अतः कह सकते हैं कि कुल मिलाकर प्रयोग वादी कविता का अभिव्यञ्जना शिल्प छायावादी कविता के अभिव्यञ्जना शिल्प से मूलतः भिन्न है । भले ही उमर से उतम साध्य दीखता हो ।

=====

111 प्रतापः कामायनीः आशा तर्गः पृष्ठः 434 प्रसाद अन्धावली

121 निरालाः जूही की कलीः पृष्ठ 49

131 केंदार नाथ सिंह : तीसरा सप्तक : पृष्ठ 181

नवम् अध्याय
=====

छायावादी और प्रयोगवादी काव्य में
=====

वैषम्य के कारण
=====

- 1: भुगीन परिस्थितियों में विषमताएँ
- 2: जीवन - दृष्टि में अन्तर
- 3: विज्ञान का प्रभाव

छायावादी और प्रयोगवादी काव्य में वैषम्य के कारण
 = = = = =

किसी भी देश का साहित्य उस देश की समसामयिक परिस्थितियों की उपज होता है। दर असल साहित्यकार समाज का सर्वाधिक संवेदनशील प्राणी होता है। युग के आलोडन- विलोडन की सूक्ष्म प्रतिविधियों का भी उसके मानस पर व्यापक प्रभाव पड़ता है। अतः उसकी रचनाओं में उसके अनुभूत युगबोध की स्पष्ट झलक देखी जा सकती है। इसीलिये साहित्य को समाज के दर्पण के रूप में स्वीकारा गया है। जैसे जैसे युगीन परिस्थितियाँ बदलती हैं, अभिव्यक्ति के विषय और उसके स्तर भी बदलते जाते हैं। इस दृष्टि से दो अलग- अलग काल खण्डों में विकसित होने के कारण छायावाद और प्रयोगवाद दोनों ही काव्य धाराओं में वैषम्य के पक्कापित लक्षण मिलते हैं।

युगीन परिस्थितियों का अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से प्रमुख चार भागों में बाँटा जा सकता है। राजनैतिक परिस्थिति सामाजिक परिस्थिति, आर्थिक परिस्थिति और सांस्कृतिक परिस्थिति उपरोक्त चारों प्रकार की परिस्थितियों के संक्षिप्त आंकलन से छायावाद और प्रयोगवादी काव्य धाराओं में वैषम्य के अनेक कारणों का उद्घाटन किया जा सकता है। सर्व प्रथम हम दोनों युगों की काव्यधारों को प्रभावित करने वाली तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियों का विवेचन करेंगे।

॥।। छायावाद और प्रयोगवाद की राजनैतिक परिस्थितियों के अन्तर्:-
 = = = = =

राष्ट्रीय जीवन के जिस सन्दर्भ में छायावाद का जन्म हुआ,

उसमें राष्ट्रीय स्वाधीनता के लिए प्रतिपल संघर्षरत भारतीय मानस के जुझारु पन का योग है। कस्बाई राजनीति से लेकर केन्द्रीय सत्ता की झूल-झुल परिचालित गतिविधियों से इस युग का इतिहास आघात प्रभावित है। इस युग की सर्वाधिक प्रभावी राजनैतिक विचार धारा गाँधी-वादी विचार धारा रही है। महात्मक गाँधी के द्वारा इस युग में सांस्कृतिक और राजनैतिक जीवन के अभिन्न पक्ष का उद्घाटन हुआ। भारतीय इतिहास में उनका अवतरण एक बड़ी घटना थी।¹

महात्मा गाँधी ने सुरक्षित एवं सुरक्षित वर्ग की राष्ट्रीय भावना और देश प्रेम को जन मन तक प्रसारित किया और अखिल राष्ट्रीय जीवन में एक नयी राजनैतिक चेतना प्रसारित की। यह वह समय है जिसमें देश की राष्ट्रीय चेतना की लहर विद्युत गति से प्रवाहित हो रही थी, जिसे प्रशस्त एवं अखिल राष्ट्र में प्रसारित करने का कार्य जलियाँवाला बाग के हत्याकाण्ड ने कर दिया था।² आहुतियाँ पड़ती गयीं और आग भड़कती गयी। गाँधी जी और उनके सहकारियों के निरीक्षण में स्वतन्त्रता का यह महायज्ञ चलता रहा। बीच-बीच में कस्बाई आये राजनीति की धारा नये मोड़ लेती रही, वह गुम-गुम होकर चुपचाप की वही निराशा की स्वांस भारतीय क्षितिज पर दिखाई दी पर राजनैतिक उतार चढ़ाव के होते हुए भी हमारी राष्ट्रीय चेतना व्याप्त हो रही। इस तथ्य तो व्यापी सक्रिय राष्ट्रीयता का प्रभाव हमारे इस समय के साहित्य में अनेक स्थानों में अनेकों प्रकार से पड़ा हम तो यहाँ तक कहना चाहेंगे कि इस व्यापक राष्ट्रीय जाग्रति की हलचल में ही हमारा यह साहित्य बनाया और फूला-फूला है।² अंग्रेज शासन

=====

॥१॥ पण्डित गंगाधर झा: आधुनिक राष्ट्रीय चेतना का विकास:

आलोचना -25 पृष्ठ: 26।

॥2॥ आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी: आधुनिक साहित्य: पृष्ठ: 2।

और उनके मातहत तथा चापलूसों के शोषण और उत्पीड़न से पीड़ित भारतीय किसान और मजदूरों के लिए इस समय विप्लवधियों ने पर्याप्त सुरक्षात्मक वातावरण प्रदान किया था। उस समय अनेक कवियों ने इन विप्लवधियों का साहित्यिक चित्रण किया। निराला ने भी विप्लव आन्दोलन के लिए कवितारें लिखीं मगर उनके आन्दोलनकारी ग्रामीण किसानों के ईश्वरीय के रूप में व्यक्त हुए हैं:-

जीर्ण बाहु है जीर्ण शरीर
तुझे बुलाता कूँक अधीर
ए विप्लव के वीर ।

छायावाद युग के इस दौर में पर्याप्त राजनैतिक स्तर की कवितारें लिखी गयीं त्यौहारों तथा पौराणिक वीरों के बहाने राष्ट्रीय आत्म-सम्मान का भाव जगाने और अंग्रेजों का विरोध करने की प्रवृत्ति भी उस समय की कविताओं में देखी जा सकती है यह प्रवृत्ति भी इस समय की कविताओं में देखी जा सकती है यह प्रवृत्ति "मत्वाला" के दूसरे अंक पर कृष्ण माहट्य पर लिखी कविताओं ने खुलकर उजागर हुई है।-

"ये अब ऐसा हाल कि * काले * हाथ पसारे ।
ऐला भर की प्रेम लेत * गौहन* तो हारें ।" 2

मत्वाला के तीसरे अंक में पुराने ढंग की सानुपात शब्दावली का सहारा लेते हुए निराला चेतावनी देते हैं कि:-

= = = = =

111 निराला: बादल राग: 11924। पृष्ठ: 37

121 निराला: मत्वाला अंक 1: पृष्ठ: 12

घुम घरण मत घोरों के तू
 गले लियट मत गोरों के तू
 झटक- पटक झंझट को झटपट, झोंक भाड़ में मान ।¹

इस सन्दर्भ में यह भी ज्ञातव्य है कि छायावाद का उद्भव प्रथम विश्व युद्ध के बाद की स्थितियों में हुआ था और इस समय भारतीय ही नहीं विश्व के स्तर पर समाजवादी और साम्यवादी चेतना की जन दिया था ।

इसके दूसरी ओर प्रयोगवादी काव्यधारा की राजनैतिक परि- स्थितियों के सन्दर्भ को यदि हम देखें तो यह स्पष्ट है कि द्वितीय विश्व युद्ध के विस्फोट ने ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न कर दी थीं जिनसे नयी काव्यधारा प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रभावित होने से नहीं बच सकी । उस समय की राजनैतिक स्थितियाँ, छायावाद की राजनैतिक स्थितियों से बदली हुई हैं । * द्वितीय विश्व युद्ध एक प्रकार के विविध मानवीय अपसाद तथा मराश का जनक सिद्ध हुआ । शांतिवादी नीति की धीर असफलता मार्क्सवादी सिद्धांतों की वैयङ्ग्य फेराने वाले जनवादी राष्ट्रों की स्वार्थ लालुपता स्वातन्त्र्यवादी शक्तियों का पाश विवर्द्धन एवं पराभाव और राष्ट्रों के बीच जैसे अन्तराष्ट्रीय मंच का लोप ये सभी ऐसे कठोर तथ्य थे जो हमारे देश एवं जाति से प्रत्यक्ष सम्बन्ध न रखते हुए भी हमारी प्रबुद्ध चेतना को प्रभावित करने से न बच सके ।² द्वितीय विश्व युद्ध के सम्बन्ध में ही राष्ट्रीय महासभा के रंगमंच से " भारत छोड़ो " का नारा दिया गया

=====

11। निराला/ मतवाला: अंक 3: पृष्ठ: 24

12। रमार्कर तिवारी: प्रयोगवादी काव्यधारा: पृष्ठ: 27

जितने राष्ट्र पिता के निर्देशों अध्या रचनाओं का अपलाप कर जन मानस में व्यापक स्तर पर ज्ञानि की लहर दौड़ा दी । उधर पुरी राष्ट्रों की अप्रतिहत विजयोपलब्धियों की पीठिका में नेताजी सुभाष चन्द्र बोस द्वारा "आजाद हिन्द सेना का गठन हुआ और ऐसे जान पड़ा जैसे स्वाधीनता की पहली किरण बिल्कुल निकट है । किन्तु लोकवादी प्रवृत्तियों का तैयार करने वाली साम्राज्यवादी शक्तों ने इन जोर से इन प्रवृत्तियों का दमन करने की कोशिश जारी रखी उधर युद्ध के प्रभाव एवं बंगाल के अकाल जैसे अनेक देवीय आपदाओं ने जन मानस को तोड़कर रख दिया परिणामतः प्रयोगवाद में कुंठा घटन, निराशासंगार हार, अनास्था, अन्विचय आदि की स्थितियों की अभिव्यक्ति मिली जो छायावादी बोली से भिन्न थी इस समय जो काव्य धारा विकसित हुई उससे छायावाद और प्रगतिवाद का वैधर्म्य स्पष्ट करते हुए श्री रमाशंकर तिवारी लिखते हैं:- " प्रस्तुत संदर्भ में जो नयी कविता विकसित हुई उसमें न तो " छाया वन की रात " की मोहकता गम गम कर सकती थी और नही प्रगतिवाद की डम- डम घोष ही झंकृत हो सकता था । ----- नयी चेतना देश विदेश की परिवर्तमान तथा उलझन भरी परिस्थितियों में परित्नात होकर अटपटे पेश में व्यक्त होने लगी । इस नयी अभिव्यक्ति में परस्पर के प्रति विद्रोह अध्या अनाशक्ति स्पष्ट दिखाई पड़ती है । स्वतत्त्व एवं माघतत्त्व दोनों ही दृष्टियों से वह परम्परा विच्छिन्न दिखाई पड़ती है । " वस्तुतः परिवर्तित राजनीतिक परिस्थितियों के अनुस्य कविता में भी पर्याप्त अन्तर दिखाई देते हैं छायावादी कवि जहाँ विप्लव की पुकार करता है अध्या अंग्रेजों से मन न मिलने की बात पर जोर देता है वहीं प्रयोगवाद में आकर

=====

यह घोध कुछ इस प्रकार व्यक्त हुआ है :-

“फिर भय क्या है । अब डेर नहीं
हम लाते हैं वह वाहिन तेज
जितके स्फुरित की ज्योति बिन्दु से
मिट जायेगा हेमन्त शीत
मिट जायेगी इस कड़वी जड़ता की संदुंध
हम देख रहे टकटकी बांध
उग रहा पूर्व में नवालोक, अभिनव बतन्त ।”^१

12। छायावाद और प्रयोगवाद की सामाजिक परिस्थितियों के वैषम्य:-

=====

छायावाद और प्रयोगवाद की सामाजिक परिस्थितियों में भी पर्याप्त वैषम्य है । छायावाद का काल भारतीय समान व्यवस्था के अंग्रेजों की दास्ता में जकड़न का समय है जबकि प्रयोगवाद के समय यह दास्ता चरमहाने लगी थी । छायावाद के समय में जन जीवन पर जिस गांधीवादी विचारधारा का प्रभाव पूरी तरह पड़ा है वह तब उनके राजनैतिक तौर के कारण ही नहीं अपितु इस समय तक गांधी जी ने राजनैतिक स्वातन्त्रता को भी महत्व दिया। इस समय तक भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस तब सामाजिक माँगों को सरकार के समक्ष प्रस्तुत करने वाली संस्था ही नहीं रह गयी थी अपितु भारतीय मेधा की जनव जागृत शक्ति शांतिपनी मेधा को उचित दिशा में निर्देशित करने वाली संस्था के रूप में भी उदित हुई थी।^२

=====

12। भारतभूषण: जीवनधारा: पृष्ठ: 65

12। नरेन्द्रदेव वर्मा: प्रयोगवाद: पृष्ठ: 66

कुछ तो कांग्रेस के दिशा- निर्देशन ने और कुछ अंग्रेजों के दमन चक्र तथा उनकी शोष्क प्रधान नीतियों ने भारतीय जन मानस को बहुत गहरे तक प्रभावित किया इस समय तक भारत अंग्रेजों की फूट डालो और राज्य करो की नीति से व्यापक रूप से प्रभावित था तथा जाति, भाषा, वर्ग आदि के आधार पर भेद के प्रश्न व्यापक रूप में उछाले जा रहे थे। जिससे समाज में विघटन की स्थिति बढ़ती जा रही थी। दूसरी ओर भारतीय राजनीति में जवाहर- लाल नेहरू का दबदबा बढ़ रहा था मगर नेहरू जी दोहरा नीति अपना रहे थे एक ओर वे शोषितों को विदेशी दास्ता से मुक्त होने का आह्वान करते थे तो दूसरी ओर विदेशी शासकों और पूँजीपतियों के साथ समझौते करने से भी पीछे नहीं रहते थे निराला ने इसी स्थिति को स्पष्ट करते हुए लिखा था कि:-

“सोड़ी जमींदारों की आँखों लगे रहें हुए
मिलों के मुनाफे खाने वालों के अभिन्न मित्र
देश के किसानों मजदूरों के भी अपने सगे
विलायती राष्ट्र से समझौते के लिए ।”

निराला ने छायावाद काल के गाँव की बड़ी मर्मस्पर्शी तत्वीरें खींची हैं उनकी कविताओं में वर्णित गाँव भारत के आम गाँवों का प्रति- निधित्व करते हैं गाँवों में सुदो की ही संख्या अधिक है। प्रायः सभी किसान हैं कुछ ब्राह्मण हैं जो अत्यन्त दरिद्र बकरियों का कारोबार करते हैं। अर्थात् बकरिया पाल कर बच्चे कताइयों को बेचते हैं। दो चार घर

=====

॥॥ निराला: नये पत्ते के ~~पत्र~~ । महगू महगा रहा। पृष्ठ: 30

ऐसे भी हैं जो काश्तकारी करते हैं । :-

* गाँव के अधिक जन कुली या किसान हैं
कुछ पुराने परचे जैसे धोबी, तेली, बढ़ई
नईई, लोहार, बारी, तराक़िहार, घुड़हार
बेहना, कुम्हार, डोग, कोरी, पासी, चमार,
भोग पुत्र, पुरोहित, महा ब्राह्मण चौकीदार
जमींदार के वाहन ।
बाकी पर देश में लौड़ियों के नौकर हैं
महाजनों के दबैल,
स्वत्व बेचकर विदेशी माल बचाने वाले ।*

अतः छायावाद की सामाजिक परिस्थितियाँ जैसे- जैसे परि-
वर्तित हुईं हैं कविता में भी उनकी अभिव्यक्ति मिलती है । वही परि-
स्थितियाँ धीरे- धीरे परिवर्तित होकर प्रगतिवादी स्वर में प्रकट होने
लगी । जबकि दूसरी ओर प्रयोगवाद की सामाजिक परिस्थितियाँ छाया-
वाद से भिन्न प्रकार की है । प्रयोगवादी की परिस्थितियों को देखते
पर यह स्पष्ट होता है कि यह आन्दोलन द्वितीय विश्व युद्ध के बाद का
का साहित्य है । द्वितीय विश्व युद्ध ने एक ओर तो महाविनाश की स्थिति
उत्पन्न कर के मानवीय अस्तित्व के खारे को उजागर कर दिया था जिससे
बुद्धिजीवी वर्ग में रासायनिक युद्ध से उत्पन्न विभीषिका से एक भीषण यय
की स्थिति पैदा हो गयी थी । इसी स्थिति ने आम जन जीवन में भय,

=====

॥॥ निराला: नये पत्ते: । महंगु महंगा रहा। पृष्ठ: 34

कुष्ठा, निराश्रय, वेदना, पीड़ा, कुस्यता आदि को जन्म दिया। दूसरी ओर राजनैतिक घरातल पर घट रही घटनाओं - जिनमें 42 का भारत छोड़ो आन्दोलन बंगाल का अकाल आदि जैसी प्रमुख - प्रमुख घटनाओं ने भारत के आम जन जीवन को बुरी तरह झकझोर दिया था। जमींदारों एवं तत्ता द्वारा शोषण जारी था। इतना ही नहीं इस समय तक नौकर वर्ग में भी शोषण और भ्रष्टाचार की प्रवृत्ति बनने लगी। प्रयोगवादी कवियों ने अपने युगीन जनमानस की इसी प्रवृत्ति को स्पष्ट किया है:-

*कभी यहाँ आते हैं कोई बड़े राज्य के राजा साहब
 कितने दानी ।
 कभी प्रान्त के आते हैं सरकारी अफसर
 या कोई जनता के लीडर
 जो होते हैं सभी का कविता के प्रेमी
 कितने ज्ञानी
 उन सबके स्वागत में
 जब तब कितनी सेठ के घर होती ही रहती है
 दावत मेहमानी
 कवि भी आमन्त्रित होता है
 वह भी आये ,
 राजा साहब अफसर या जनता के लीडर
 । या वह जो हो।
 के स्वागत में गीत बनाकर लाये, गायें
 और काव्य के चमत्कार से मेहमानों
 का दिल बहलार ।*।

=====

॥॥ नेमिचन्द्र जैन: कविगाथा है - धृष्ट: 9

और दूसरी ओर जीवन की दैनिक समस्याओं से जुड़े मनुष्य की स्थिति कुछ अलग ही है वह दिन भर कार्य करता है, मगर उसकी कमाई में से शोषक अपना पेट पहले भरता है ग्रामीण किसानों की भी हालत अच्छी नहीं है वही फटे हुए जूते, कायें पर लाठी और लाठी में जीवन के सुख-दुःख:-

“कभी एक ग्रामीण घरे काँचे पर लाठी
सुख- दुःख की मोटी ती गठरी
लिये पीठ पर
भारी जूते फूटे हुए
जिनमें से धी झाँक रही गाँवों की आत्मा
जिन्दा रहने के कठिन जतन में
पाँच बड़ाए आगे आता ।”

और शहर में बतने वाले नौकरी पेशा वर्ग के लिए एक और नये पैदा हुए शोषक वर्ग ने जीवन हराम कर दिया है शहरी कारण और आर्थिक वर्ग भेद के कारण बढ़ रहे ये खारे आम नौकरी पेशा के जीवन में उथल-पुथल मचाते हैं । अन्धकार की बढ़ती हुई बुराई ने भाई - भतीजा बाद क्षेत्रीयता, जातिवाद, जैसे अनेक कारण पैदा किये हैं जो तरकारी नौकरी में अक्सरों और नौकरों के बीच की खाई को चौड़ी करते हैं पक्षमात को बढ़ावा देते हैं । नौकर के लिए अक्सर और कारखाने :-

=====

॥॥ शकुन्तला माधुः डर लगता है : पृष्ठ: 46

“अक्सरों से भरा सरकारी कारखाना
 ताँपो से भरी कोठरी है-
 आँखें नहीं झपकती
 अक्सरों से भरा सरकारी कारखाना
 बबूल बन है
 पाँच नहीं टिक सकते ।”¹

13। छायावाद और प्रयोगवाद की आर्थिक परिस्थितियों में वैधर्म्य:- = = = = =

छायावाद और प्रयोगवादी की केवल राजनैतिक और सामा-
 जिक ही नहीं आर्थिकस्थिति - परिस्थितियों में भी वैधर्म्य है । अंग्रेजों
 के भारत आने और साम्राज्यवादी शासन के यहाँ हावी होने के मूल में
 पूरी तरह आर्थिक कारण रहे हैं । इस्ट इण्डिया कम्पनी से जिस व्या-
 पारिक सम्बन्ध की शुरुआत भारत और इंग्लैण्ड के बीच शुरू हुई थी ,
 वह समय के साथ - साथ आर्थिक शोषण के शिक्षे के रूप में कतता गया
 था अंग्रेज यहाँ के कच्चे माल को कम दामों में खरीदकर और तैयार माल
 को ऊँची दरों पर बेचकर दोहरा मुनाफा कमा रहा था । किन्तु भार-
 तीय क्रान्तिकारियों और जनमानस द्वारा आजादी के क्रमिक संघर्ष से
 अब अंग्रेज चौकन्ने रहने लगे थे । महात्मा गाँधी द्वारा आरम्भ में इस
 आन्दोलन को संगठित करे दिये जाने से तो अंग्रेजों की यह चौकन्नापन
 और अधिक बढ़ गया था अंग्रेजों द्वारा भारत की आर्थिक सम्वदा के
 शोषण के विषय में निराला जी लिखते हैं कि “ महात्मा जी के आन्दो-
 लन के बाद से इंग्लैण्ड के व्यवसाई भारत से खूब सजग रहते थे । और ये
 = = = = =

11। मदन वात्स्यायनः सरकारी कारखानों में कर्मचारी की चिन्ता

पूँजीपति ही पूँकि प्रकारान्तर से इंग्लैण्ड के विधाता है इसलिये ये इतने उदार होंगे कि अपनी भलाई भूलकर भारत की भलाई का हवाल करेंगे यह बिल्कुल भ्रांत धारणा है । भारत अंग्रेजी माल के खाने के लिए अंग्रेजों का सबसे बड़ा केन्द्र है । यहाँ से कच्चे माल की जितनी पैदावर होती है उसका अधिकांश वहाँ के व्यापारियों के हाथ लगता है । जिससे एक - एक के तैकड़ों वसूल होते हैं ।^{१०}

भारत का शोषण जारी रखने के लिए साम्राज्यवादियों को जो दावे घेच अपनाने थे उसकी विशेषता यह थी कि वह एक और उच्च वर्गों को शासन में भाग लेने का लातव देता था, नये नये सुधारों की घोषणा करता था तथा दूसरी ओर जनता के बढ़ते हुए असन्तोष को देखने दबाने के लिये वह अधिकाधिक दमन का सहारा लेता था । फलते फूलते साम्राज्यवादियों के बीच किसान की हालत यह थी :-

सूख गया किसान एकाकी
 रोया रही न लेखा बाकी
 कर्म धर्म को करके साखी
 दुहरी डगर भरी शीत की
 गहरी विभाघरी शीत की
 काँपी पाले से अहङ्गर की
 डाली गुनागरी । शीत की ।

=====

॥॥ निराला: सुधा पत्रवरी अंक ३०। सम्पादकीय टिप्पणी १७।

इसी-लिए उस समय के कवि ने अपने सामाजिक विरोधी स्वर को
युं अभिव्यक्ति दी :

*सारी सम्पत्ति देश की है

सारी आपत्ति देश की बने-

- - - - -

काँटे से काँटा कटाओ ।

और आह्वान किया-

आज अमीरों की हवेली

किसानों की होगी पाठशाला ।

प्रयोगवाद के दौर तक आते आते शोषण अंग्रेजों की यह नीति काफी
हट तक कारगर साबित हुई यही नहीं एक लम्बा वर्ग देश में पूँजीपतियों
की अस्तित्व में आया जो अंग्रेजों की तरह ही यहाँ के गरीब वर्ग के शोषण
में संलग्न था वही झूट नाँकर शाही ने रिश्वत खोरी और आम जनता की
खून पसीने की कमाई से पैदा करने में एक अंदा कर दिया अर्थात् छायावाद
के समय में अंग्रेजों और जमींदारों का शोषण था जो प्रयोगवाद के युग में
अंग्रेज जमींदार पूँजीपति अप्सर और नेताओं जैसे अनेक वर्गों के लिए स्व में
विस्तृत होकर आगे आया । इन सब वर्गों के संयुक्त शोषण से आम नागरिक
के जीवन का एक चित्र प्रस्तुत है :-

* नौन, तेल, लकड़ी की फिक्र में लगे धन से

= = = = =

11। निराला: साध्य कला : पृष्ठ: 56

12। निराला: गीतिका: पृष्ठ: 26

मकड़ी के जाते से कोल्हू के बेल से
मकान ही रहने को फिर भी वे धन से
गन्दे अधियारे और बटबू भरे टङ्गों में
जाते हैं वच्चे ।-1

मेरु हूतने निम्न स्तर के साथ यह वर्ग दीन दुनिया से हर अपने
जीवन को क्रमिक संघर्ष के साथ धापन कर रहा है मगर हूतकों बदलने से डरता
है जबकि:-

जबकि इनका ही
हस्त धिराट आर्थिक विपन्नता की
चक्की में पिस पिस कर
धन रहा महीन बुद आटा ।-2

प्रयोगवाद में वर्णित यह जोड़ित वर्ग तिरक राजनैताओं द्वारा ही
नहीं पूजोपतियों तरकारी अवसरों एवं औजों द्वारा विभिन्न स्तरों पर एक
ही मानसिकता के तहत चूना जाता है । यह वर्ग जीवन के आवश्यक संतुल्य
तो उगा मानिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भी भटकता है ।

14। विज्ञान का प्रभाव:-

=====

विज्ञान आधुनिक युग में मानव जीवन को प्रभावित करने वाला
सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारण है । तकनीति के क्षेत्र में विज्ञान के फलस्वरूप ने
जहाँ मनुष्य को भौतिक उपयोग के साधन प्रदान किये हैं वहीं वैज्ञानिक

=====

11। प्रभावण मासो: वह एक : पुष्प: 204

12। प्रभावण मासो: वह एक : पुष्प: 205

दृष्टि कोणों की व्यवस्थित विचार धारा ने आधुनिक युग में मानव के सोच को सर्वाधिक प्रभावित किया है ।

छायावादी और प्रयोगवादी कविधाराओं में भी विज्ञान के प्रभाव और बदलते हुए वैज्ञानिक दृष्टिकोण ने वैयक्तिक के अनेक घरातल प्रस्तुत किये हैं । छायावादीयुग तक भारत में वैज्ञानिक दृष्टिकोण की व्यवस्थित प्रभाव प्रक्रिया दृष्टिगत नहीं होती है किन्तु प्रयोगवादी काव्यधाराको विज्ञान के दूरगामी प्रभावों ने बहुत गहरे तक प्रभावित किया है । वैज्ञानिक बोध के कारण आज के जीवन में हुई मनुष्य की उपेक्षा पर अज्ञेय की यह प्रतिक्रिया दृष्टव्य है:-

अतंदिग्ध मैं सभी सम्भ्यता के लक्षण हूँ
और सम्भ्यता बहुत बड़ी सुविधा है
सम्भ्य, तुम्हारे लिये
लिप्ता क्या जाने
ठाँकर छाँकर कहीं रुके वह
आँख उठाकर ताके
और अचानक तुमको ले पहचान
पूछे
धीरे- धीरे- धीरे
हाँ पर मानव
तुम हो किसके लिये ?

=====

॥ अज्ञेयः कितनी नावों में कितनी बारः पृष्ठः ॥

विज्ञान ने जीवन के हर क्षेत्र को प्रभावित किया है उपयोग के क्षेत्र में मशीनीकरण की बढ़ती हुई होड़ ने मानव का मूल्य कम कर दिया है एक कारखाने में नौकरी की स्थिति का यह चित्र देखिये=

“ग्यारह का घन्टा बजता है
हर छोटे और बड़े पंछी के पर, चौंघ
लौह के दरवाजे के भीतर घुस
छट फटों को बंदी हो जाते है
शासन के द्वारा मुस्त
दी गयी कलम
रात कागस के घोड़ों की
जिनसे छिछाती है ।
फाइलों की गई झाड़ने में
तारा पिवेक झाडू ता
चलता- फिरता है
हम चित्रगुप्त के बेटों के
तिर के ऊपर बिजली का
पंछी चेंबर बनावा करता है
अंग्रेजी लिख ले
देवनागरी लिपि लिख कर
मैं हर महीने
अस्ती त्वये पता हूँ ।”

=====

जहाँ विज्ञान ने आदमी को भौतिक सुख के साधन उपलब्ध कराये हैं वहीं वैज्ञानिक बोध ने एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रणाली दी है और वह है निष्ठा के प्रति तत्काल प्रतिक्रिया की प्रणाली । अनेक प्रयोगवादी कवियों ने वैज्ञानिक दृष्टि के गुणों को उजागर किया है । कुँवर नारायण ने वैज्ञानिक दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि वैज्ञानिक दृष्टि से मेरा अभिप्रायः उस सहिष्णु और उदार मनोवृत्ति से है जो जीवन को किसी पूर्वग्रह से पंगु करके नहीं देखती बल्कि उसके प्रति एक बहुमुखी सार्थकता बरतती है । कलाकार या वैज्ञानिक के लिए जीवन में कुछ भी अग्रहण नहीं है उसका क्षेत्र किसी सिद्धान्त या वाद विरोध का दायरा न होकर वह सम्पूर्ण मानव परिस्थिति है जो उसके लिये अनिवार्य वातावरण बनाती है और जिसे उसका जिज्ञासु स्वाभाव बराबर सोचता विचारता रहता है ।¹

15। छायावाद और प्रयोगवादी काव्यधारा की जीवनहावी में वैधर्म्य =====

छायावादी और प्रयोगवादी काव्यधारा का एक दूसरे से भिन्न सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक परिस्थितियों तथा प्रयोगवाद के युग तक आते आते वैज्ञानिक चेतना के व्यापक प्रभाव के दोनों की जीवन दृष्टियाँ भी एक दूसरे से पर्याप्त भिन्न हैं । और यह भिन्नता अनेक स्तरों पर स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है ।

छायावाद ने सूक्ष्म सौंदर्य बोध के साथ - साथ सांस्कृतिकता और युगमन नव जागरण को भी ग्रहण किया । तत्कालीन सामाजिक, राजनैतिक परिस्थितियों से प्रभावित होतु हुए भी छायावाद ने अतीत से, उपनिषद्

=====

पुराणों और सन्तों की वाणियों से आध्यात्मिकता को ग्रहण कर अपनी अनुभूतियों से जो रहस्यात्मक स्तर पर उभारना प्रारम्भ किया। प्रताप, पंत, महादेवी, एवं रामकुमार वर्मा जैसे सभी छायावादी कवियों की कृतियों में इसी सूक्ष्म सौन्दर्य और रहस्यात्मकता के अविच्छिन्न चित्र बिखरे पड़े हैं।

“नव इन्द्रधनुष का चीर महावर अंजन से
अभिर्गजित, मीलित पंकज, नमुर स्नान से
फिर आयी मनाने साँझ में वे सुष मानी नहीं
पथ देख लीकती दी रैन में प्रिय पहचानी नहीं” ।¹

जब कि प्रयोगवाद में कवि इस कथित रहस्यादिता और सूक्ष्म सौन्दर्य के चित्र की अपेक्षा कृत अति स्थूलता पर आ गये हैं छायावादियों ने अपने प्रिय का स्मरण भी किया तो प्रकृति को बीच में लाकर सूक्ष्मता के साथ और प्रयोगवादियों ने यदि प्रकृति का चित्रण भी किया है तो प्रिय की स्थूल आकृति के साथ:-

“मुझे पुरख की एक डाइन से मोहल्लत है
वह अप्सरा है उसका कभी च्याह नहीं हुआ
उसके प्राण घर-द्वारा की नलिष्ठ बला
से निर्वन्ध हैं।
सुबह के प्रकाश में वह अलवेली अस्मा बितारिका
छाली पैरो घुपके आकर मेरी खिड़की से
झाँकने लगी” ।²

=====

111 महादेवी: यामा; पृष्ठ 72

121 मदन वात्स्यायन: तीसरा सप्तक: पृष्ठ: 129

छायावादी कवियों ने नारी के प्रति बड़ा सम्मान दृष्टिगत होता है। द्विवेदी युगीन छायावादी नारी को छूने की हिम्मत भी छायावादी कवि ने नहीं की है वरन् वहाँ माँसल नारी के स्थान पर "जूही की कली" की सूक्ष्म प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति है एवं प्रताप नारी को "ब्रह्मा" कर कर सम्बोधित करते हैं।

जब कि प्रयोगवादी कवि छुने स्व में नारी के झोंग्या स्व को स्थान देता है वहाँ तो नारी त्वयं पुरुष मित्रों को अपने स्तन मर्दन के लिए कुला आमन्त्रण देती है। भारती का प्यार तो छायावादी की तरह लहर नेता है और कवि अपनी प्रिया के फिरोजी होठों पर अपनी विन्दगी निखार कर देता है।

"प्यार घायल साँप सा नेता लहर
अर्चना की धूँ सी
तुम गोद में लहरा गयी
ज्यों दूरे के सर
तितलियों के परों मार ले

संक्षेपः छायावाद और प्रयोगवादी जीवन दृष्टि में पर्याप्त अन्तर दृष्टिगोचर होता है प्रेम के सम्बन्ध में छायावादी कवि जहाँ प्रेम को छुपाने के लिए तरह तरह की विधियाँ दुरुस्त है और उसे समाज में प्रकट करने से सकुचाता है तथा दार्शनिकता का खोल उठाकर प्रकट करता है। वहीं प्रयोगवादी कवि प्रेम काम और नारी के प्रति अपनी भावनाओं को

कुल स्त्र में अभिव्यक्त करता है । प्रयोगवादी कविता में यथार्थ चित्रण की प्रवृत्ति इस हद तक बढ़ती है कि काम भोग का बर्णन हो जाता है और अनेक स्थानों पर कुण्ठारे घुणित स्त्र में प्रकट होती है ।

वैतनिक बोध के कारण प्रयोगवादी कवि की दृष्टि वस्तुओं और निष्कर्षों के निखरने परखने के लिए विश्लेषण की सर्तक प्रणाली को अपनाती है जो समाज से पलायन के कारण छायावाद के रोमान्टिक कवियों में नहीं मिल पाती । अन्ततः हम कह सकते हैं कि छायावाद और प्रयोगवाद में वैधर्म्य के पर्याप्त कारण मिल जाते हैं ।

=====

दशम अध्याय -
=====

१.

उपसंहार

उपसंहार

आधुनिक काल में हिन्दी कविता ने जितने तोपान पार किये हैं, उससे पहले कभी नहीं किये थे। भारतेन्दु युग से लेकर अद्यतन नई कविता तक, प्रत्येक मोड़ हिन्दी काव्य धारा को नवीन दिशा प्रदान करता रहा है। बार-बार के इस दिशा परिवर्तन से हिन्दी कविता में निरन्तर निखार आता चला गया है। छायावाद और प्रयोगवाद हिन्दी - काव्य - यात्रा में ऐसे ही तोपान हैं। छायावाद यदि द्वितीय युगीन इतिहासात्मकता से हटा कर हिन्दी कविताधारा को एक नई दिशा देता है तो प्रयोगवाद भी हिन्दी कविता को प्रगतिवाद से विमुख कर के पुनः एक नई दिशा देता है। इस तरह दोनों ही काव्यान्दोलन हिन्दी कविता के लिये नवीनता लाने वाले सिद्ध हुए हैं।

हिन्दी काव्य जगत् के इन दोनों ही आन्दोलनों से पूर्व समूचा विश्व जिस भयंकर यातना से गुजरा है, उसका प्रभाव दोनों पर ही है। छायावाद यदि प्रथम विश्व युद्ध की विभीषिका के बाद उदित हुआ था तो प्रयोगवाद द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद। समूची मानव जाति एक भयानक संकट से जब गुजरी तो उसका प्रभाव भारतीय प्रतिभा पर भी पड़ा और दोनों ही बार हिन्दी कविता की रीति-नीति और दिशा में परिवर्तन आया। हिन्दी कवियों ने हर बार खतरों को महसूस किया और उनसे उबरने के लिये नवीन मार्ग तलाश किये।

कोई भी नवीनता प्राचीन के प्रति मनुष्य के अतन्तोष का परिणाम

होती है। हर बार मनुष्य इसी लिये प्राचीन का ध्वंस करता है और नवीन का निर्माण करता है। द्विवेदी युगीन इतिवृत्तात्मकता से अतन्नुष्ट नवयुगक कवियों ने उसे तोड़ना पहले प्रारम्भ किया है साथ ही उसकी सृजन शीलता ने काव्य का नवीन आगार भी निर्मित किया। इस कार्य को करने में भी ही उसे आचार्यों का कोप भाजन बनना पड़ा। उसकी सृजन शीलता सभी आक्षेपों को सहते हुए निरन्तर नव-निर्माण में लगी रही इसी प्रकार प्रयोगवादी कवि ने अकवि और कविता का हत्यारा होने का आरोप लगने पर भी अपना प्रयत्न नहीं छोड़ा। आज की नयी कविता उसके इसी अर्थक परिश्रम का परिणाम है। * कवयस्तीतिकवि, तस्यकर्म काव्य * वाली निरुक्त की उक्ति के अनुसार वह अपना कर्म करता रहा है। हिन्दी कवियों की यह अविचल कर्मठता ही आज हिन्दी कविता को स्पृहणीय अँयाइयों तक प्रतिष्ठित कर सकी है।

आपने इस कर्म में हिन्दी कवि कभी भी अपने दायरे में बंध कर नहीं रहा है। उसने निरन्तर हिन्दीतर साहित्य से अपना संपर्क बना रखा है। यदि छायावाद काल में कई संस्कृत और अँग्रेजी तथा बँगला साहित्य के सम्पर्क में रहा तो प्रयोगकाल में अन्यान्य विदेशी भाषाओं के साहित्य से भी उसने अपने को जोड़ा। अमेरिकन, स्पेनिश, अफ्रीकन, चीनी, जापानी, तथा और भी योरोपीय देशों के साहित्य के सम्पर्क में वह आया है तथा उसने उनसे बहुत कुछ लिया- दिया भी है।

हिन्दी के छायावादी और प्रयोगवादी काव्य को यदि कविता

के विराट फलक पर देखे तो ज्ञात होता है कि उनके हेतु और प्रयोजनों में कोई मूलभूत अन्तर नहीं है। किन्तु यह भी सत्य है कि एक ही मूल की दो सन्ततियों में पर्याप्त भेद होता है। छायावाद और प्रयोगवाद की जीवन-दृष्टि, उनके मूल्य मान, उनकी रीति-नीति, सभी एक - दूसरे से भिन्न हैं फलतः उनकी काव्य - वस्तु उनके काव्य - रूप और अभिव्यञ्जना शिल्प में भी पर्याप्त अन्तर है। छायावादी कवि यदि भावुक है तो प्रयोगवादी कवि बौद्धिक। यदि एक प्रकृति का उपासक है तो दूसरा विज्ञान का पुजारी है। एक के लिये यदि वह रहस्यामय अन्तः सत्ता उसके सुख-दुखों की शक्ति है तो दूसरे के लिये वह निरर्थक है। एक पर व्यक्तिवादी जीवन दर्शन का प्रभाव है तो दूसरे पर अस्तित्ववादी जीवन दर्शन हावी है।

वास्तव में छायावादी कविता के मूल में कवि के व्यक्तिगत सुख - दुःख रहे हैं। उसका मूल स्वर एक प्रेमी का है। अपने प्रेम की इस अभिव्यक्ति के लिये छायावादी कवि ने अभिव्यक्ति के नये नये मार्ग तलाश किये। वह अपने प्रेम की अभिव्यक्ति के लिये "राधिका कन्हैयाई के सुमिरन को बहानों" नहीं खोजता। अपितु वह अपने प्रेम को गोपनीय रखने के लिये अदृश्य सत्ता का सहारा लेता है, उसकी प्रेमानुभूति रहस्यात्मक हो उठती है। और इस प्रकार छायावादी कवि रहस्यवादियों के निकट सातगने लगता है। प्रसाद द्वारा प्रारम्भ की गई यह प्रवृत्ति छोड़ी बहुत महादेवी तक सभी में मिलती है। किन्तु पन्त को प्रकृति के माध्यम से अपनी "प्रेमाभिव्यक्ति करना अधिक अनुकूल लगता है। और यही से छायावाद में प्रकृति के मान्यीकरण की प्रवृत्ति का उदय होता है। उददीपन रूप में प्रकृति चित्रण की परिपाटी के स्थान पर

आलम्बन के रूप में प्रकृति चित्रण की नयी परिपाटी का उदय भी इसी का परिणाम है। छायावादीयों का यह प्रेम द्विवेदी युगीन आचार्यों का कोष भाजन भी हुआ। लगभग सभी छायावादी कवि अपने व्यक्तिगत जीवन में प्रेम के लिये तरसते रहे। जीवन साथी का आभाव और उससे मिलने वाले प्रेम की कमी उन्हें निरन्तर अखरती रही है। यहाँ तक कि इस कमी ने उनको निराशावादी और अधिक संवेदनशील बना दिया। उनके काव्य में दुख की अभिव्यक्ति का विस्तार होता गया। उनके जीवन के इस अभाव से उनकी इतना कल्पना प्रवण बना दिया कि वे अपने प्रेमी के रूप में ~~अद्वैतीय~~ अद्वैतीय सुन्दर अमूर्त शक्ति को देखने लगे। उन्हें सम्पूर्ण जगत अपने प्रेम में अपनी ही भाँति सुखी-दुखी दीखने लगा। अपनी इस दुहरी अनुभूति को अभिव्यक्ति देने के लिये उन्हें पुरानी भाषा और उसके मुहावरे तथा पुराना शिल्प अपर्याप्त लगने लगा। एक ही प्रेम उनको एक साथ सुखी और दुखी - दोनों करने लगा इस चटिल अनुभूति की अभिव्यक्ति के लिये उन्हें नीच भाषा, मुहावरे तथा शिल्प की निरन्तर आवश्यकता अनुभव होने लगी। भाषा में संस्कृत की तर्ज पर सामासिक प्रयोग, विशेषणों से अधिक काम लेना, कोमल और कान्त पदावली, व्यंजना और लक्षणा शब्द शक्ति का अधिकाधिक प्रयोग, विशेषण विपर्यय, गीतों की ओर लय की प्रधानता निरन्तर छायावादी कविता में आती गई। इस प्रकार आधुनिक हिन्दी कविता में एक नवीन युग आ गया।

जिस प्रकार छायावादी कवि अपने निजी सुख, दुख की अभिव्यक्ति

के लिये नवीन मार्ग खोज लाया । उसी प्रकार प्रयोगवादी कवियों ने भी अपने निजी विचारों की अभिव्यक्ति के लिये नीचन मार्ग खोज निकाले जिन प्राचीन मान्यताओं और संस्कारों को छायावादी कवि भी नहीं तोड़ सका था, उन्हें प्रयोगवादी कवियों ने तोड़ा । छायावादी कवि मानवतावादी था । किन्तु उसका मानवतावाद मनुष्य को अन्य प्राणियों के समकक्ष श्रेष्ठ सिद्ध करने तक ही सीमित था । उनकी दृष्टि में मनुष्य एक संवेदनशील प्राणी था । मानव की पुनर्प्रतिष्ठा से उनका तात्पर्य मानवीय संवेदनाओं की पुनर्प्रतिष्ठा से था । उन के इस कार्य में अलौकिक एवं अदृश्य सत्ता कहीं भी बाधक नहीं थी । किन्तु ठीक इसके विपरीत प्रयोगवादी कवि का मानवतावाद मनुष्य को सर्वतः श्रेष्ठ प्राणी मानते हुए भी अन्य प्राणियों की तरह सामान्य मानता है । वास्तव में प्रयोगवादी कवि मानवतावादी के स्थान पर मानववादी है । वह उसकी विचार शीलता का कायम है । उसने देखा है कि मनुष्य केवल अपने बूते पर बहुत कुछ कर सकता है । प्रकृति पर उसकी जय पताका निरन्तर फहराती जा रही है । सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड जैसे उसके लिये सिमट गया है । उसकी इस जय यात्रा में कोई भी अदृश्यत्ता उसे निरर्थक लगती है । वह किसी वस्तु को संवेदना के स्तर पर नहीं शृङ्खलित बैधानिक स्तर पर देखता है । उसकी मुद्रा किसी भावुक ग्रामीण की सी नहीं । अपितु दार्शनिक जैसी है । परिणामतः उसकी कविता में ते रहस्यामकता, नियतिवाद जैसे तत्त्व अदृश्य हो गए और उनका स्थान ले लिया मानव की जय यात्रा संबंधी विचारों ने वह उसके गुण - दोषों का विवेचन कर अपनी एक राय कायम करने के लिये प्रयत्नशील लगता है । वस्तुतः वह किसी मंजिल पर पहुँचा हुआ नहीं है, वह राही भी नहीं राहों का अन्वेषी है ।" स्वाभाविक है एक अन्वेषक की स्थिति में पहुँच

कर उसकी कविता में रागहीन बौद्धिकता का आ जाना । यह निश्चय ही छायावाद की त्वेदन्शीलता के विरुद्ध एक कदम था ।

किन्तु छायावाद ने जो स्थूल के प्रति सूक्ष्म का नारा दिया था । उसे यह और भी आगे ले गया । यह कवि हर घटना, हर पदार्थ और हर विचार का सूक्ष्मतम अध्ययन करता है । और उसके लिये आवश्यक है कि वह अपने वर्ण्य विषय को इतना " हाईलाइट " करे कि उसमें कुछ भी अस्पष्ट न रह जाये । इस " हाईलाइट " करने में वह किसी उचित अनुचित का ध्यान नहीं रखता क्योंकि सीमाएँ उसे बौना बनाती हुई लगती हैं । फलतः उसकी कविता में विशेषीकरण की प्रवृत्ति बहुत अधिक देखने को मिलती है । साथ ही दमित वासनाएँ और यौन-वर्जनाओं का कुला प्रयोग भी उसकी कविता में देखा जा सकता है । उसकी कविता जिन निषिद्ध क्षेत्रों में प्रवेश कर रही थी । उसमें विचारों की जो जटिलता उत्पन्न हो रही थी उसके लिये छायावादियों की ही भाँति उसे भी पुरानी भाषा और मुहावरे दारी, पुराने उपमान-प्रतीक और मिथ, शिल्प सभी कुछ अपर्याप्त लगने लगे । अपने विचारों की सूक्ष्मता की अभिव्यक्ति के लिये उसे जब स्थूल शब्द ना काफी लगे तो उसने दार्शनिकों और वैज्ञानिकों की भाषा का आश्रय लिया उसने नये मुहावरे ही नहीं, नवीन प्रतीक और उपमानों के साथ - साथ नये मिथ गढ़ना भी प्रारम्भ किया । यह दूसरी बात है कि वे कविता को कहाँ ले गये ? मगर यह सही है कि उनने कविता को उसके पुराने घेरे से बाहर की दुनियाँ का रास्ता दिखाया ।

वर्तमान में हिन्दी कविता, जिसे आज नई कविता के नाम से

अभिहित किया जाता है और जिसे बहुत से कवि एवं समीक्षक प्रयोगवादी कविता का विकास या प्रयोगवादी कविता ही मानते हैं, वास्तव में छायावाद और प्रयोगवाद के आन्दोलनों की शणी है। आज कविता का फलक बहुत बड़ा है। उसमें मानवीय संवेदनाओं और साथ-साथ विचारों का जो समन्वय देखने को मिलता है, वह इनकाव्यान्दोलनों की उसे देने है। छायावादी कविता ने जहाँ वर्तमान हिन्दी कविता को मानवीय संवेदनाओं की गहराई तक पहुँचाना सिखाया है तो प्रयोगवादी कविता ने उसे विचारों का विस्तार प्रदान किया है। यही कारण है कि वर्तमान काव्य सागर में गहराई और विस्तार है। वर्तमान हिन्दी कविता पर इन दोनों काव्यान्दोलनों का प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है।

हिन्दी की नई कविता में जिस संवेदन शीलता, गीतात्मकता, पद्यात्मकता, और रिदम के दर्शन होते हैं, वह सभी कुछ उसे छायावादी कविता से विरासत में मिला है। किन्तु इसमें संवेदनाओं का वैचारिक पक्ष, गद्यात्मकता, प्रयोगवाद की ही देन है। प्रयोगवादी कविता ने जो वैचारिकता हिन्दी के नवगीत को दी है वह छायावादी गीतों में नहीं थी किन्तु ये गीत संवेदना शून्य भी नहीं है। जिससे इन पर छायावादी प्रभाव का बना रहना लक्षित होता है। विद्यानन्दन राजीव, और उमा-कान्त मालवीय, और रमेश रंजक के गीत इसके प्रमाण हैं।

वस्तुतः भारतेन्दु युग में जिन आधुनिकता का सूत्रपात हुआ था वह आज भी अक्षुण्ण है। अन्तर केवल यही है कि उस युग की सभी विशिष्टताओं का विकास और विस्तार बहुत हो गया है। वैचारिकता तो कविता में भारतेन्दु युग में ही आ गयी थी। और भावुकता संवेदनार्थ

नहीं हो गई थी । किन्तु इन दोनों विशिष्टताओं पृथक्-पृथक् को विस्तार भविष्य में आने वाली काव्य धाराओं - छायावाद और प्रयोगवाद में आकर हुआ । छायावादी कविता शुद्ध भावुक और संवेदन शील कविता है । मानवीय संवेदनाओं की गहन तक अभिव्यक्ति उसका गुण है । यहाँ कहना न होगा कि ये संवेदनारं आधुनिक ही थी । दूसरी बात स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि हिन्दी कविता में छायावाद युग के पश्चात् वैचारिकता का स्रोत कोई भारतीय दर्शन नहीं था । वास्तव में छायावादोत्तर हिन्दी कविता के वैचारिक स्रोत दो थे । फलतः दो प्रकार की वैचारिकता यहाँ दीखती है । एक का स्रोत मार्क्सवाद था तो दूसरी का अस्तित्ववाद । पहली प्रगतिवादी और दूसरी प्रयोगवादी कविता मानी गई । एक समय वह भी था । जब ये दोनों काव्यधाराएँ एक दूसरे के विपरीत वहीं । इन दोनों ही विचारवादी काव्य धाराओं में संवेदना की सापेक्षता का गुणात्मक अन्तर है । प्रगतिवादी कविता प्रयोगवादी कविता की अपेक्षा अधिक संवेदनशील है ।

असलियत यह है कि जिस प्रकार मनुष्य को पूर्णता उसकी संवेदनशीलता और वैचारिकता - दोनों में सम्मिलित रूप से होती है उसी प्रकार कविता का भी । हर युग की कविता में यह बात देखी जा सकती है । उनमें यदि अन्तर होगा तो मात्र प्रधानता का । किसी में वैचारिकता प्रधान होगी तो किसी में संवेदना । छायावाद और छायावादोत्तर काव्यधाराओं में यही अन्तर है । छायावादी कविता में संवेदना की प्रधानता थी तो छायावादोत्तर कविताओं में वैचारिकता की । छायावादी कविता की वैचारिकता का स्रोत भारतीय वेदान्त बौद्ध और योरोप का व्यक्तिवादी दर्शन था । जब कि प्रगतिवाद का मार्क्सवाद और प्रयोगवाद का अस्तित्ववाद । ये सभी दर्शन परस्पर विरोधी हो सकते हैं, जिसके परिणाम स्वल्प ये सभी काव्य-

धाराएँ भी परस्पर विरोधी लग सकती हैं। आधुनिक हिन्दी कविता में, विभिन्न काव्यान्दोलनों के मूल में यही विरोध रहा है। किन्तु यह भविष्य की कविता के लिये अच्छा ही हुआ। इन काव्यान्दोलनों के माध्यम से आज का हिन्दी कवि सभी विचारधाराओं से परिचित हुआ है। और उसने पाया है कि कोई भी विचारधारा न तो पूरी तरह सही है और न पूरी तरह गलत। इसी लिये हिन्दी की नयी कवितावाद मुक्त कविता है।

कविता जब वादों के विवाद में पड़ती है तो धीरे-धीरे वह अपने मार्ग से भटक जाती है। और फिर एक नई कविता का जन्म होता है। यहाँ इस संवेदक बात का उल्लेख करना समीचीन होगा कि छायावाद और प्रयोगवाद जैसे नाम इन विचारधाराओं के विरोधीयों द्वारा ही दिये गये हैं। वस्तुतः विरोध विचारधाराओं का ही होता है, संवेदनाओं का नहीं। कविता का किसी विचारधारा से जुड़ना, उसका विरोध और समर्थन दोनों ही जुटाता है। धीरे-धीरे यह समर्थन या विरोध कवितामात्र का समर्थन या विरोध बन जाता है। प्रगतिवादियों द्वारा प्रयोगवादी कविता का विरोध कुछ समय तक कविता कविता का विरोध बन गया था। प्रयोगवादियों के समर्थकों ने प्रयोग को ही जब अपना मध्य बना लिया तो कविता गौण हो गई। इसी प्रकार प्रगतिवादियों जब प्रयोगवाद का विरोध किया तो सामाजिकता के चक्कर में कविता मात्र नारा बन कर रह गई।

अतः कहा जा सकता है कि छायावाद एवं प्रयोगवाद भले ही हिन्दी कविता को नवीन संवेदनाओं विचारों से परिचित कराने वाले नई भाषा और नया अभिव्यक्ति का शिल्प देने वाले काव्यान्दोलन क्यों न रहे

हैं, कविता को वादों के विषाद में घसीटने वाले भी रहे हैं । एक बात और कि कविता को इन वादों के विषाद में घसीटने का कार्य उन आचार्य समीक्षकों द्वारा ही किया गया जो उसकी विचारधारा से सहमत नहीं थे । अपनी कविता को उन वादों के नाम से जोड़कर प्रस्तुत करना तो का-
 प्राचीन कवियों की मजबूरी रही है । यदि छायावादी और प्रयोगवादी कवियों के वक्तव्यों का अध्ययन किया जाय तो यह बात स्पष्ट हो जाती है कि वे किसी वाद का नहीं अपितु अपनी कविता की वकालत कर रहे थे, किसी वाद के नाम से उसे पुकारना तो उनकी मजबूरी थी ।

वस्तुतः प्रयोगशीलता कविता का धर्म है । और कवि निन्तर भी कविता में प्रयोग करता रहता है । ये प्रयोग छायावाद युग में भी हो रहे थे, और प्रयोगवादी युग में तो हुए ही । स्वयं तुम्हिरानन्दन पन्त और सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला" । जो छायावाद के स्तम्भ माने जाते हैं । छायावाद से बंध कर नहीं रहे । पन्त आगे चलकर हमें प्रगतिवादी और अद्वैतवादी लगने लगते हैं तो निराला प्रगतिवादी और प्रयोगवादी । यही हाल प्रयोगवाद के आधार स्तम्भों का है । तार सप्तक के अनेक कवि घोषित प्रगतिवादी थे । और जो नहीं भी थे उनका भी पर्यवसान नई कविता में होता है । अज्ञेय और गिरिजा कुमार माथुर इसी प्रकार के कवि हैं । कटा-
 चित इसीलिये अज्ञेय ने आगे चलकर कहा कि प्रयोग का कोई वाद नहीं होता यदि नई कविता की वाद मुक्तता के संदर्भ में अज्ञेय के इस कथन को देखें तो निश्चय ही यह लगता है कि यह केवल अज्ञेय का ही भूल सुधार नहीं था, अपितु सम्पूर्ण हिन्दी कविता की ही अपने घर वापिसी थी ।

जहाँ तक अभिव्यंजना शिल्प और भाषा का प्रश्न है वे संवेदनाओं और विचारों के अनुगामी होते हैं। नई संवेदनाओं और विचारों को कविता में नवीन भाषा और नये अभिव्यंजना शिल्प के निर्माण के लिये कवि को विवश कर देते हैं। क्योंकि पुरानी भाषा और शिल्प से उसका काम नहीं चलता। छायावादियों ने जिस भाषा और शिल्प का निर्माण किया था प्रयोगवादियों ने उसके तिलिस्म को तोड़ा और यह उनके लिये आवश्यक भी था। "तार सप्तक" के तात्पर्य कवि। भले ही उनमें पाँच प्रगतिवादी और दो व्यक्तिवादी थे। सभी कविता में वह सब कुछ कहना चाहते थे जो छायावादियों के लिये वर्जित था। इसीलिये उनको "अभिव्यक्ति के खतरे" उठाने पड़े और नये तारे से कविता के लिये एक नई भाषा और नये अभिव्यंजना शिल्प का निर्माण करने में वे जुट गए। यद्यपि छायावाद में इस प्रकार का कोई संगठित प्रयास नहीं हुआ था। "तार सप्तक" में भले ही वे अनेक इस उद्देश्य में सफल न हुये हों, उन्होंने छायावादी भाषा और अभिव्यंजना शिल्प के तिलिस्म को अपसव्य तोड़ा और आने वाले नए कवियों को यह ज्ञात दिया कि "अस्त्यने को गिरा' मार्गः"। हिन्दी की नयी कविता इसी संगठित प्रयत्न का सुपरिणाम है।

अन्त में, संक्षेप में कहा जा सकता है कि छायावाद और प्रयोगवाद हिन्दी कविता के दो ऐसे काव्यान्दोलन हैं जिनसे हिन्दी कविता को बहुत कुछ प्राप्त हुआ। परस्पर विरोधी दिखने वाले इन काव्यान्दोलनों में प्रयोग धर्मिता समान रूप से विद्यमान थी। दोनों से ही जुड़े हुए कवियों में नवीनता के प्रति ललक और पुराने के प्रति मोह भंग की स्थिति थी। दोनों की महायुद्धों के बाद की उपज थे। फिर भी दोनों की अनुभूति, संवेदना, भावना, भाषा काव्य रूप और अभिव्यंजना

शिल्प अपनी युगीन परिस्थितियों के अनुस्य एक दूसरे से भिन्न और पृथक् थे । यहाँ तक कि परस्पर विरोधी भी ।

परिशिष्ट

। सहायक ग्रन्थ सूची ।

परिशिष्ट- 1

परिशिष्ट- 2

उपजीव्य ग्रन्थ

1. अजित कुमार : अकेले कूठ की पुकार, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली,
प्रथम संस्करण - 1948।
2. अजित कुमार : अंकित होने दो, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, प्रथम
संस्करण - 1962।
3. अज्ञेय : हरी घात पर धन भर, प्रगति प्रकाशन, नई दिल्ली
1949।
4. अज्ञेय : त्रिशंकु, बीकानेर, 1973।
5. अज्ञेय : बावरा अहेरी, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी,
द्वितीय संस्करण - 1972।
6. अज्ञेय : आत्मनेपद, दिल्ली, 1973।
7. अज्ञेय : इन्द्रधनु रौंदि हुए थे, सरस्वती प्रेस, अलाहाबाद,
प्रथम संस्करण - 1957।
8. अज्ञेय : अरी ओ कल्या प्रभामय, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी,
प्रथम संस्करण - 1951।
9. अज्ञेय [सं०] : इत्यलस प्रतीक प्रकाशन दिल्ली, 1946।
10. अज्ञेय [सं०] : तीर सप्तक, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, तृतीय
संस्करण - 1970।
11. अज्ञेय [सं०] : दूसरा सप्तक, प्रगति प्रकाशन, दिल्ली,
प्रथम संस्करण - 1951।
12. अज्ञेय [सं०] : तीसरा सप्तक, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी,
तृतीय संस्करण - 1967।
13. ओमप्रभाकर : पुष्प चरित, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली,
प्रथम संस्करण - 1973।
14. केदारनाथ सिंह : अभी बिल्कुल अभी, नया साहित्य प्रकाशन
प्रथम संस्करण - 1960।

15. कैलाश बाजपेयी : तीसरा अध्या, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली,
प्रथम संस्करण - 1972 ।
16. कैलाश बाजपेयी : देहात से हटकर, अक्षर प्रकाशन प्रा० लि०, दिल्ली,
प्रथम संस्करण - 1974 ।
17. गिरिजा कुमार माथुर : शिलाग्रंथ यमकीर्ति, साहित्य भवन प्रा० लि०
इलाहाबाद प्रथम संस्करण - 1961 ।
18. गिरिजा कुमार माथुर : धूम के धान, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी,
तृतीय संस्करण - 1966 ।
19. जगदीश गुप्त [डी] : शब्द देश, भारती मन्दार, प्रयाग प्रथम
संस्करण - 2016 वि० 2
20. दिनकर : रामधारी सिंह, चक्रवाल, पटना, 1956 ।
21. दिनेश नन्दिनी : इति, राजपाल बन्धु संत, दिल्ली,
प्रथम संस्करण - 1972 ।
22. धर्मवीर भारती : ठंडा लोहा, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन दिल्ली,
1976 ।
23. धर्मवीर भारती : तात गीत वर्ष, ज्ञानपीठ लोकोदय ग्रन्थमाला
हिन्दो ग्रन्थांक 91, 1959 ।
24. धूमिल : सुदामा प्रसाद, संसद से सड़क तक, राजकमल प्रकाशन दिल्ली,
प्रथम संस्करण - 1972 ।
25. नकेन : पद्मशा
26. निराला : सूर्यकान्त त्रिपाठी, परिमल, गंगा ग्रन्थागार, लखनऊ
षष्ठ संस्करण - 1954 ।
27. निराला : सूर्यकान्त त्रिपाठी, तुलसीदास, भारती मन्दार, प्रयाग,
सप्तम संस्करण - 2021 वि० 1

28. निराला : सूर्यकान्त त्रिपाठी, गीतिका, भारती मंडार, प्रयाग,
चतुर्थ संस्करण - 2012 वि० ।
29. निराला : सूर्यकान्त त्रिपाठी, बेला, हिन्दू पब्लिकेशंस, प्रयाग,
प्रथम संस्करण - 1946 ।
30. निराला : सूर्यकान्त त्रिपाठी, अतिमा, युग मन्दिर, उन्नाव, 1943 ।
31. निराला : सूर्यकान्त त्रिपाठी, अपरा, भारती मंडार, इलाहाबाद,
षष्ठ संस्करण - 1965 ।
32. निराला : सूर्यकान्त त्रिपाठी, नये पत्ते, हिन्दू पब्लिकेशंस, प्रयाग,
प्रथम संस्करण - 1956 ।
33. नीलाम : सूर्यकान्त त्रिपाठी, संस्मरणारम्भ, नीलाम प्रकाशन 5,
कुसरो बाग, इलाहाबाद प्रथम संस्करण-1967 ।
34. प्रभाकर माचवे : अनुष्म, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, प्रथम संस्करण-1959 ।
35. "प्रसाद" जयशंकरः कामायनी, भारती मंडार, प्रयाग,
एकादश संस्करण-2018 वि० ।
36. "प्रसाद" जयशंकरः चन्द्रयुक्त, भारती मंडार, प्रयाग, सं० 2025 ।
चतुर्थ संस्करण -
37. "प्रसाद" जयशंकरः लहर, भारती मंडार, प्रयाग, चतुर्थ संस्करण-2009 वि० ।
38. "प्रसाद" जयशंकरः बरना, भारती मंडार, प्रयाग, षष्ठ संस्करण-2008 वि० ।
39. "प्रसाद" जयशंकरः अतु, साहित्य सदन, चिरगाँव, झाँसी,
प्रथम संस्करण - सं० 1982 वि० ।
40. "बच्चन" हरिवंश रायः प्रेम संगीत, विशाल भारती बुक डिपो हरीजन रोड,
कलकत्ता, चतुर्थ संस्करण
41. ज्ञान रत्न दास [सं०] : भारतेन्दु ग्रन्थावली, काशी, 1953 ।
42. अगवती चरण वर्मा : मधुक, राजपाल प्रकाशन, दिल्ली,
तृतीय संस्करण - 1977 ।
43. भवानी प्रसाद मिश्र : गीत फरोश, भारतीय ग्रन्थ निकेतन, दिल्ली,

44. महादेवी वर्मा : यामा, भारती भण्डार, प्रयाग, चतुर्थ संस्करण सं० 2018 वि०
45. महादेवी वर्मा : नीहार, साहित्य भवन लि०, प्रयाग,
चतुर्थ संस्करण - 2011 वि० ।
46. महादेवी वर्मा : दीप शिखा, भारती भण्डार, इलाहाबाद,
चतुर्थ संस्करण - 2011 वि० ।
47. "मुक्तिबोध" : गजानन माधव, चाँद का मुँह टेढ़ा है, भारतीय ज्ञानपीठ,
काशी प्रथम संस्करण - 1971 ।
48. रघुवीर तहाय : तींद्रियों पर धूम में, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी,
प्रथम संस्करण - 1960 ।
49. रत्नशंकर प्रसाद [सं०] : प्रसाद ग्रन्थावली, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद,
1985 ।
50. रमेश कुमार शर्मा [डॉ०] : एक अनरिचित आकाश, राधाकृष्ण प्रकाशन,
दिल्ली । 1971 ।
51. वीरेन्द्र कुमार जैन : शून्य पुरुष और वस्तुएँ, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी,
प्रथम संस्करण - 1972 ।
52. शकुन्त माथुर : चाँदनी घुंघर, साहित्य भवन प्रा० लि०, इलाहाबाद,
प्रथम संस्करण - 1960 ।
53. शिशु रश्मि : नारनों के अन्धेराडर में, हेमन्त प्रकाशन, अंबाला कैण्ट,
प्रथम संस्करण - 1967 ।
54. तर्पणवर दयाल तत्त्वज्ञान : काठ की धड़िलियाँ, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी,
प्रथम संस्करण - 1959 ।
55. सुमित्रानन्दन पन्त : गुंजन, भारती भण्डार, इलाहाबाद, सप्तम
संस्करण - सं० 2010 वि० ।
56. सुमित्रानन्दन पन्त : बीणा, इण्डियन प्रेस, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण ।
57. सुमित्रानन्दन पन्त : पल्लविनी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली,
सप्तम संस्करण - 1963 ।
58. सुमित्रानन्दन पन्त : रश्मि बन्ध, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली,
प्रथम संस्करण - 1958 ।

59. सुमित्रानन्दन पन्त : ग्राम्या, भारती भण्डार, प्रयाग,
षष्ठ संस्करण - 2021 वि० ।
60. सुमित्रानन्दन पन्त : उत्तरा, भारती भण्डार, प्रयाग,
द्वितीय संस्करण - 2012 वि०
61. सुमित्रानन्दन पन्त : ग्रन्थि, भारती भण्डार, प्रयाग,
चतुर्थ संस्करण
62. सुमित्रानन्दन पन्त : स्वर्ण किरण, भारती भण्डार, इलाहाबाद,
प्रथम संस्करण - 2004 वि० ।
63. सुमित्रानन्दन पन्त : स्वर्ण धूलि, भारती भण्डार, इलाहाबाद,
प्रथम संस्करण - 2004 वि० ।
64. सुमित्रानन्दन पन्त : कला और बूढ़ा चूँद, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली,
प्रथम संस्करण - 1956 2
65. सुमित्रानन्दन पन्त : ग्रन्थावली, राजकमल प्रकाशन, प्रिण्टिड नयी दिल्ली,
प्रथम संस्करण - 1979 ।

परिशिष्ट-- 2

। उपस्कारक ग्रन्थ सूची ।

उपात्कारक ग्रन्थ

=====

1. इन्द्रनाथ मदान : आधुनिकता और हिन्दी साहित्य, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली,
प्रथम संस्करण - 1973 ।
2. इन्द्रनाथ मदान : आधुनिक हिन्दी कविता का मूल्यांकन, हिन्दी भवन,
इलाहाबाद - 1962 ।
3. कान्ति कुमार : नयी कविता, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल,
प्रथम संस्करण - 1972 ।
4. कुमार विमल [डॉ.] : अत्याधुनिक हिन्दी साहित्य, पटना, 1965 ।
5. केसरी नारायण शुक्ल [डॉ.] : आधुनिक काव्य धारा, नन्द किशोर स्नड ग्रंथ
वाराणसी - 1961 ।
6. गिरिजा कुमार माथुर : नयी कविता सीमाएँ और संभावनाएँ, नेशनल
पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, परिषर्धित संस्करण
1973 ।
7. गोपाल दत्त सारस्वत [डॉ.] : आधुनिक हिन्दी काव्य में परम्परा तथा प्रयोग
इलाहाबाद - 1961 ।
8. गोविन्द रजनीश : समसामयिक हिन्दी कविता, विविध परिदृश्य,
देवनागर प्रकाशन, चौड़ा रास्ता, जयपुर ।
9. जगदीश गुप्त : नयी कविता स्वल्प और समस्याएँ, भारतीय ज्ञानपीठ,
प्रथम संस्करण - 1969 ।
10. धर्मवीर भारती : मानव मूल्य और साहित्य, दिल्ली, 1960 ।
11. धीरेन्द्र वर्मा [डॉ.] : हिन्दी साहित्य कोश, ज्ञान मण्डल, वाराणसी,
द्वितीय संस्करण -2020 वि० ।
12. ननु दुलारे बाजपेयी [आचार्य] : आधुनिक साहित्य, भारती मण्डार,
इलाहाबाद - 2006 वि० ।
13. नलिन विलोचन शर्मा : साहित्य का इतिहास दर्शन, पटना 1960 ।

14. नरेन्द्र देव वर्मा : प्रयोगवाद ।
15. नामवर सिंह [डॉ.] : कविता के नये प्रतिमान, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली,
प्रथम संस्करण - 1968 ।
16. नामवर सिंह [डॉ.] : छायावाद, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली,
प्रथम संस्करण - 1959 ।
17. नित्यानन्द पटेल : छायावाद नया मूल्यपुंजन, नवभारती सहकार प्रकाशन
प्रतिष्ठान दिल्ली, प्रथम संस्करण - 1970 ।
18. निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी, पन्त और पल्लव गंगा ग्रन्थागार, लखनऊ ।
1948 ।
19. "प्रसाद" जयशंकरः काव्य कला तथा अन्य निबन्ध, भारती कण्डार,
इलाहाबाद, चतुर्थ संस्करण ।
20. बलवीर सिंह "रत्न" : हिन्दी की छायावादी कविता का कला विधान,
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1964 ।
21. केजनाथ सिंहल [डॉ.] : नयी कविता का इतिहास, संजय प्रकाशन, दिल्ली,
1977 ।
22. भागीरथ मिश्र : काव्य शास्त्र, विश्वविद्यालय प्रकाशन, गोरखपुर 1957 ।
23. महादेवी वर्मा : साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबन्ध, इलाहाबाद,
1962 ।
24. मोहन अवस्थी [डॉ.] : आधुनिक हिन्दी काव्य शिल्प, हिन्दी परिषद
प्रकाशन, 1962 ।
25. रमाशंकर तिवारी : प्रयोगवादी काव्यधारा [तथोक्त नयी कविता]
चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी,
प्रथम संस्करण 5 2021 वि० ।
26. रमेश चन्द्र शर्मा [डॉ.] : छायावाद से नयी कविता, भारत प्रकाशन मन्दिर,
अलीगढ़, प्रथम संस्करण - 1980 ।
27. रमेश चन्द्र शाह [डॉ.] : छायावाद की प्रासंगिकता, दिल्ली, 1973 ।

28. रविनाथ सिंह : नयी कविता की भाषा, हिन्दी साहित्य संसद, बम्बई,
प्रथम संस्करण - 1976 ।
29. रणिय राघव : आधुनिक हिन्दी कविता में विषय और शैली, राजपाल
एण्ड सन्स, दिल्ली, मई 1962, प्रथम संस्करण ।
30. रामचन्द्र शुक्ल [आचार्य] : हिन्दी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा
काशी, 13 वाँ संस्करण 2018 वि० ।
31. रामचन्द्र शुक्ल [आचार्य] : चिन्तामणी भाग-1, इण्डियन प्रेस, [पब्लिकेशंस] प्रा०
लि० प्रयाग, 1971 ।
32. रामकिास शर्मा [डॉ.] : निराला की साहित्य साधना, विजयलाल अग्रवाल
एण्ड क आगरा, 1962 ।
33. लक्ष्मीकान्त वर्मा : नयी कविता के प्रतिमान, भारती प्रेस प्रकाशन,
इलाहाबाद ।
34. लक्ष्मी सागर वाष्णीय : आधुनिक हिन्दी साहित्य, हिन्दी परिषद,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय 1954 ।
35. लक्ष्मी सागर वाष्णीय : द्वितीय महायुद्धोत्तर हिन्दी साहित्य का इतिहास,
राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली,
प्रथम संस्करण - 1973 ।
36. श्याम परमार : अकविता और कला सुंदरी, अमेर, 1962 ।
37. शम्भूनाथ सिंह : छायावाद युग, तरस्वती मन्दिर, वाराणसी 1962 ।
38. शैल सिन्हा : प्रयोगवाद और अज्ञेय, अशोक प्रकाशन, दिल्ली,
प्रथम संस्करण - 1969 2
39. सन्तोष कुमार तिवारी : छायावादी काव्य की प्रगतिशील चेतना, भारतीय
ग्रन्थ निकेतन, दिल्ली, प्रथम संस्करण - 1974 ।
40. सुधीन्द्र [डॉ.] : हिन्दी कविता में युका न्तर, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली,
1957 ।
41. सुरेश चन्द्र सहल : नयी कविता और उसका मूल्यांकन आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली
प्रथम संस्करण - 1963 ।
- 42.

42. सूर्य प्रकाश विद्यालंकार [डॉ.] : सप्तक त्रय - आधुनिकता एवं परम्परा
 शलभ बुक हाउस, मेरठ,
 प्रथम संस्करण - 1980 ।
43. हरिचरण शर्मा : आधुनिक कविता, प्रकृति और परिवेश, विन्मय
 प्रकाशन, चौड़ा रास्ता, जयपुर,
 प्रथम संस्करण - 1980 ।